हमारा परमाणुकेन्द्रिक भविष्य

(तथ्य, खतरे तथा सम्भावनाएं)

(Our Nuclear Future – By Edward Teller and Albert L. Latter)

मूल लेखक

एडवर्ड टेलर

और

अल्बर्ट एल. लैटर

अनुवादक

विद्याभूषण 'श्रीरश्मि'

पर्ल पब्लिकेशन्स प्राइवेट लिमिटेड, बम्बई १

मूल्य : १ रुपया

मूलग्रन्थ का प्रथम हिन्दी अनुवाद

प्रथम संस्करण : १९५९

मुद्रक : बा. ग. ढवळे, कर्नाटक मुद्रणालय, चिराबाजार, बम्बई २
प्रकाशक : जी. एल. मीरचंदानी, पर्ल पब्लिकेशन्स प्राइवेट लिमिटेड, १२, वाटरलू मेन्शन्स (रीगल सिनेमा के सामने), महात्मा गांधी रोड, बम्बई १

आमुख

यह पुस्तक ऐसे साधारण लोगों के लिए लिखी गयी है, जिन्हें परमाणुओं (Atoms), बमों और रेडियो-सक्रियता (Radio-activity) के बारे में विशेष जानकारी नहीं है। वे सिर्फ इतना ही जानते हैं कि यह विश्व परमाणुओं से बना है, बम इसे नष्ट कर सकते हैं और रेडियो-सक्रियता इसे रहने के अयोग्य बना दे सकती है।

इस पुस्तक के अध्ययन के विषय में हम यहाँ कुछ परामर्श देना चाहेंगे। इस पुस्तक के प्रत्येक अध्याय को स्वतंत्र रूप से पढ़ा जा सकता है; यानी जिस क्रम से अध्यायों को इसमें स्थान दिया गया है, उसी क्रम से इनका पढ़ा जाना आवश्यक नहीं है। हाँ, इन सब को क्रमबद्ध पढ़ जाने से विषयवस्तु की अधिक अच्छी जानकारी अवश्य होगी; अतः यदि आपके पास पर्याप्त समय हो, तो इन्हें इनके पुस्तक में दिये गये क्रम से पढ़ना ही सर्वोत्तम होगा। आरम्भ के कुछ अध्याय सम्भवतः बहुत अधिक तथ्यात्मक हो गये हैं। बाद के कुछ अध्यायों में यदि और अधिक तथ्य होते, तो अच्छा होता। इन बादवाले अध्यायों को पाठक सम्भवतः अधिक सुगमता से समझ और याद रख सकेंगे। हो सकता है कि वे उनमें प्रस्तुत सभी बातों से सहमत न हों। दूसरी ओर, अधिक वैज्ञानिक अध्यायों (दो से आठ तक) पर कोई आपत्ति नहीं उठायी जा सकती, पर पढ़ने और याद रखने में वे कठिन साबित हो सकते हैं। यह याद रखना अच्छा होगा कि इस पुस्तक के अध्याय क्रमानुसार एक-दूसरे से सम्बन्धित नहीं हैं, परन्तु अधिकांश अध्याय पुस्तक के किसी दूसरे अध्याय से सम्बन्ध रखते हैं और उन्हें समझने में सहायक हैं।

विनाशकारी तत्वों की वर्षा (Fall-out) के सम्बन्ध में हमारी जानकारी दिन-दिन तेजी से बढ़ रही है। कुछ प्रश्न जो इस पुस्तक में उठाये गये हैं, हो सकता कि उनका समाधान अब तक हो चुका हो। उनकी जानकारी से हमारे कुछ कथन, सम्भव है, अधिक परिमाणात्मक होते; किन्तु हमारा विश्वास है कि मुख्य-मुख्य निष्कर्ष अपरिवर्तित ही रहते।

स्पुटनिकों (Sputniks) के छोड़े जाने से पहले ही यह पुस्तक तैयार हो गयी थी। पर अभी स्पुटनिकों का जो स्वरूप है, उसमें न्यैष्टिक शक्ति (Nuclear energy) से उनका कुछ विशेष सम्बन्ध नहीं है। जो भी हो, हमारे खयाल से गैर-वैज्ञानिकों के लिए विज्ञान और तंत्रविद्या (Technology) के उन भागों को समझने की आवश्यकता कहीं अधिक बढ़ गयी है, जो उनकी और उनके देश की सुरक्षा तथा समृद्धि को प्रभावित कर सकते हैं। हमें आशा है कि यह पुस्तक कुछ हद तक इस दिशा में सहायक प्रमाणित होगी।

विषय-सूची

हमारा परमाणुकेन्द्रिक भविष्य

अध्याय १

जानकारी की जरूरत

हमारा विश्व परिवर्तन-रत है और यह परिवर्तन दिनानुदिन तीव्र होता जा रहा है। इस परिवर्तन के पीछे मुख्यतः वैज्ञानिक अन्वेषणों का हाथ है। विज्ञान के फलाफलों से हम सब गम्भीर रूप से प्रभावित होते हैं। साथ ही, यह भी सच है कि बहुत कम लोग हमारी सभ्यता के अति तांत्रिक (Technical) मूल तत्वों को समझते हैं। ऐसी परिस्थिति में यह स्वाभाविक ही है कि वैज्ञानिक और तांत्रिक प्रगति बेचैनी और भय की स्थिति पैदा करे।

जिसे हम नहीं जानते या नहीं समझते, उसका भय हमें सदा से रहा है। अपनी मृत्यु को निश्चित मान कर, मनुष्य उससे भी अधिक भयानक दुःस्वप्न – सम्पूर्ण विश्व-विनाश – के भय से प्रायः सशंकित रहा है। वैसे तो, वैज्ञानिक युग में मनुष्य के अधिकांश अतीतकालीन आतंक निरर्थक भ्रम ही सिद्ध हुए हैं; फिर भी एक भय शेष रह जाता है – अज्ञात, चिर अज्ञात आतंक – कि मनुष्य स्वयं अपने प्रति एवं परस्पर एक-दूसरे के प्रति क्या आचरण करेंगे?

हमारे अपने ही कार्यों को लेकर हमें चिन्ता बनी रहेगी। ज्यों-ज्यों प्रकृति पर हमारा नियंत्रण बढ़ेगा, त्यों-त्यों उसका परिमाण भी बढ़ सकता है। इस चिन्ता का मुकाबिला समझदारी और साहस से ही किया जा सकता है हालाँकि इन दोनों में से साहस अधिक महत्त्वपूर्ण है, फिर भी पहला स्थान समझदारी को ही मिलना चाहिए।

हम प्रायः ही काल्पनिक खतरों से भयभीत हो उठते हैं, जब कि उन खतरों की, जो कहीं अधिक यथार्थ हैं, उपेक्षा करते हैं। अतः आवश्यकता इस बात की है कि जनमत और तांत्रिक प्रगति के बीच निकट सम्पर्क स्थापित किया जाये। इसके लिए यह आवश्यक है कि आधुनिक वैज्ञानिक गतिविधियों

की जानकारी लोगों को हो। यह आवश्यकता निरन्तर प्रबल होती जा रही है। परन्तु इस आवश्यकता की पूर्ति के लिए बहुत कम प्रयत्न किया जाता है और इस विचार ने, कि वास्तव में इस आवश्यकता की पूर्ति नहीं हो सकती, अपनी जड़ जमा ली है।

इसके साथ ही, अधिकाधिक लोगों को यह विश्वास हो गया है कि वैज्ञानिक और तांत्रिक लोग स्वयं ही उन परिवर्तनों के लिए जिम्मेदार हैं, जो उनके विचारों और आविष्कारों के कारण अस्तित्व में आये हैं। आज वैज्ञानिक एक ऐसी स्थिति में हैं कि उनकी बातें न केवल उन विशिष्ट क्षेत्रों में सुनी जाती हैं, जिनके वे विशेषज्ञ होते है, बल्कि उन सामान्य विषयों में भी सुनी जाती हैं, जो उनके अन्वेषणों से प्रभावित होते हैं। हमारे देश में महत्वपूर्ण निर्णयों का वास्तविक स्रोत यहाँ की जनता है। हमारे विचार में यह उचित भी है और हमारी यह मान्यता है कि इन निर्णयों के किसी महत्वपूर्ण अंग का वैज्ञानिकों-द्वारा हाथ में लिया जाना ठीक नहीं है।

एक तांत्रिक व्यक्ति के उत्तरदायित्व में, निश्चय ही, दो महत्वपूर्ण कार्यों का समावेश होता है। इनमें से एक तो यह है कि वह प्रकृति के रहस्यों का उद्‌घाटन करे और प्रकृति पर हमारे नियंत्रण की सम्भावित सीमाओं का पता लगाये। उसका दूसरा कार्य अपनी उपलब्धियों की स्पष्ट, सरल और सीधे-सादे शब्दों में व्याख्या करना है, ताकि हमारे देश की जनता उनके विषय में आवश्यक निर्णय कर सके, क्योंकि जनता ही वस्तुतः निर्णय का उचित अधिकार रखती है और उसे ही इन निर्णयों के फलाफलों को अन्ततः बर्दाश्त करना है।

वैज्ञानिक और तांत्रिक विषयों की व्याख्या करना कोई सरल कार्य नहीं है और सम्पूर्ण विज्ञान से परिचित होना वस्तुतः असम्भव सिद्ध हो सकता है। भौतिक विज्ञान (Physics) के विशिष्ट क्षेत्र में, बीसवीं शताब्दी में कई क्रांतिकारी बातें प्रकाश में आयी हैं, जैसे आइन्स्टीन-द्वारा अन्वेषित 'सापेक्षवाद का सिद्धान्त' (Theory of relativity) और नील्स बोर का 'परमाणु-सिद्धान्त' (Theory of the atom)। ये नये अन्वेषण समझने में आसान नहीं हैं। प्रत्येक अच्छे भौतिक विज्ञानवेत्ता ने अपने जीवन के कई वर्ष इन सिद्धान्तों का अर्थ अच्छी तरह समझने के प्रयत्न में बिताये हैं। ऐसे वैज्ञानिकों की मान्यता है कि प्रकृति की अपेक्षाकृत अच्छी जानकारी प्राप्त करके उन्होंने अपने परिश्रम का समुचित पुरस्कार पा लिया है। किन्तु इन बातों की यहाँ चर्चा करना अनावश्यक है।

इस पुस्तक में हमें जिन बातों पर विचार करना है, वे परमाणविक (Atomic) और न्यैष्टिक (Nuclear) भौतिक विज्ञान के उन भागों से सम्बन्धित हैं, जो बहुत-कुछ प्रारम्भिक किस्म के हैं। इसमें जो तथ्य हम सरल रूप में प्रस्तुत करेंगे, वे पाठक को न्यैष्टिक शक्ति (Nuclear energy) और परमाणविक विस्फोटों (Atomic explosions) के दुरूह प्रतीत होनेवाले क्षेत्रों की एक सुबोध जानकारी देने के लिए पर्याप्त हैं।

हम परमाणुओं (Atoms) और न्यष्टियों (Nuclei) से ही अपनी चर्चा आरम्भ करेंगे। ये बहुत छोटे पदार्थ हैं, किन्तु इससे हमें परेशान होने की जरूरत नहीं – न ही हमें यह सोच कर उद्विग्न होना चाहिए कि हम 'अकल्पनीय' छोटे पदार्थों की चर्चा कर रहे हैं। हमारे मस्तिष्क बहुत शीघ्र अपने को नयी बातों के अनुकूल बना लेते हैं; अतः न्यष्टियों की चर्चा करते समय थोड़ी देर के लिए हम भूल जायें कि कुछ बड़े पदार्थों का भी अस्तित्व है। वास्तविक कठिनाई तो तब पैदा होती है, जब विज्ञान वैसे नियमों (Laws) का उद्घाटन करता है, जो सामान्य बुद्धि का खंडन करते प्रतीत होते हैं। पर ऐसा अक्सर नहीं होता और हमें ऐसे विषयों पर विशेष निर्भर भी नहीं करना है।

विज्ञान की व्याख्या करने की कठिनाइयाँ इस बात से और भी बढ़ जाती हैं कि वैज्ञानिकों ने अपनी एक भाषा ही गढ़ ली है, जिसका प्रयोग और विकास वे आपसी बातचीत में करते हैं। कभी-कभी तो ऐसा प्रतीत होता है कि वे गुप्त रूप से अपने बीच वार्तालाप करते हैं। लेखक भी इस वैज्ञानिक भाषा में ही लिखते हैं, मानो यह उनकी मातृभाषा हो। इस पुस्तक को इस भाषा का सरल अनुवाद कहा जा सकता है।

एक कठिनाई एक विशेष विषय — रेडियो-प्रक्रियता (Radio-activity) – को लेकर है। हिरोशिमा के विस्फोट के बाद जनता ने इस विषय के महान व्यावहारिक महत्व को समझा है। वह घटना बड़ी भयानक थी और उसके बाद की गतिविधियाँ तथा सम्भावनाएँ भी कम भयानक नहीं हैं। पर यह आवश्यक नहीं है कि न्यैष्टिक विस्फोटों (Nuclear explosions) से सम्बन्धित हर बात समान रूप से भयानक हो। साथ ही, यह भी महत्वपूर्ण है कि इस विषय के अध्ययन के समय हम अपने विचार मुक्त रखें और जहाँ तक सम्भव हो, मानवोचित भावनाओं को कम-से-कम स्थान दें। जिस स्थिति में पहुँच कर हमें अपना कर्तव्य निश्चित कर लेना ही ठीक जँचता है, वहाँ तो भावनाओं का

अवश्य ही अपना स्थान है; लेकिन जब तक पाठक इस पुस्तक को समाप्त न कर लें, तब तक मैं उनसे अनुरोध करूँगा कि वे इस स्थिति को टालते रहें।

विकिरण के खतरों के बारे में विचार करते समय सबसे बड़ी कठिनाई जीवन-धारियों (Living organism) की कार्य-प्रणाली को लेकर है। किसी प्राणी की आंतरिक रचना किस प्रकार कार्य करती है, इसके विषय में मूलतः हम अनभिज्ञ हैं। इसी प्रकार, एक जीवित प्राणी विकिरण से किस प्रकार प्रभावित होता है, यह भी हम नहीं जानते। इससे प्रकट होता है कि उन मामलों को छोड़ कर, जहाँ क्षति स्पष्ट रूप से पहुँची है, हम निश्चयपूर्वक कुछ नहीं कह सकते कि रेडियो-सक्रियता खतरनाक है भी या नहीं। चूँकि रेडियो-सक्रियता के तात्कालिक प्रभावों को हमारी इन्द्रियाँ ग्रहण नहीं कर सकतीं, इसलिए अज्ञात विस्तारवाले एक अदृश्य आतंक की कल्पना करने के लिए हम मजबूर होते हैं। इसके कुछ क्षतिकारक फलाफल वर्षों बाद भी प्रकट हो सकते हैं, इसलिए किसी स्पष्ट क्षति का अभाव भी लोगों को आश्वस्त नहीं कर सकेगा।

सौभाग्यवश, हमारा व्यावहारिक ज्ञान उतना त्रुटिपूर्ण नहीं है, जितना इन वक्तव्यों से प्रतीत होता है। रेडियो-सक्रियता और उसके समरूप प्रक्रियाओं (Processes) से तो हम घिरे हुए हैं ही, लेकिन इनका अस्तित्व इस पृथ्वी पर तब से ही है, जब से जीवन का आरम्भ हुआ। हमारे पूर्वज भी इनसे बचे नहीं रहे हैं। जीवन क्या है, यह हमें नहीं मालूम और न ही हम यह जानते हैं कि किस विस्तृत रूप में यह रेडियो-सक्रियता से प्रभावित होता है। परन्तु मोटे तौर पर इतना तो हम निश्चित रूप से जानते हैं कि कृत्रिम रेडियो-सक्रियता भी वही परिणाम प्रस्तुत करेगी, जो रेडियो-सक्रियता की प्राकृतिक पृष्ठभूमि के कारण उपस्थित होते हैं। इसलिए यह पृष्ठभूमि हमें एक मापदण्ड प्रदान करती है, जिससे मानव-निर्मित सभी विनाशकारी तत्वों की तुलना की जा सकती है।

रेडियो-सक्रियता से सम्बन्धित पदार्थों की व्याख्या के मार्ग में अंतिम बाधा वह गोपनीयता है, जो न्यैष्टिक शक्ति के विकास से सम्बद्ध रही है, विशेषकर न्यैष्टिक शक्ति के सैनिक उपयोग-सम्बन्धी विकास से। शस्त्रास्त्रों से सम्बन्धित सूचनाओं को गुप्त रखने के पक्ष में जो दलीलें दी जाती हैं, वे सुदृढ़ उचित और सामान्यतः समझ में आनेवाली हैं। परन्तु इन शस्त्रास्त्रों से उत्पन्न होनेवाली सुदूरव्यापी रेडियो-सक्रियता को गोपन रखने के पक्ष में न तो कोई मजबूत दलील है और न उसे गोपनीय रखने की कोई सम्भावना ही है। इस तथ्य को

समझ कर, इस क्षेत्र से गोपनीयता को पूर्णतः – और उचित ही – हटा दिया गया है। इसमें कुछ समय जरूर लगा, पर इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं है। इससे प्रशासनिक निर्णयों का सम्बन्ध था और ऐसे निर्णय जल्दीबाजी में नहीं लिये जाते।

यद्यपि विश्वव्यापी रेडियो-सक्रिय विष-प्रसार (World-wide radio-active contamination) सन १९५५ से ही सामान्य वैज्ञानिक चर्चा का विषय बना हुआ है, तथापि ऐसा प्रतीत होता है कि इसके परिणामों की व्याख्या और एक व्यापक सुरक्षा की व्यवस्था के लिए इतना समय पर्याप्त नहीं हुआ। इस बारे में भी कुछ सन्देह हो सकता है कि सभी आवश्यक सूचनाएँ उपलब्ध हुई भी या नहीं; पर वास्तव में, इन दिनों इस महत्वपूर्ण विषय-सम्बन्धी सभी वैज्ञानिक सूचनाएँ अबाध रूप से उपलब्ध हैं।

न्यैष्टिक शक्ति के शान्तिपूर्ण उपयोग-सम्बन्धी सूचनाएँ भी पूर्णतः और अबाध रूप से उपलब्ध हैं। इसके सैनिक उपयोगों के क्षेत्र में भी बहुत-सारी आवश्यक सूचनाएँ प्रकाशित की जा चुकी हैं।

इस प्रकार, हम अपने पाठकों के सामने न्यैष्टिक शक्ति के शान्तिपूर्ण और सैनिक उपयोगों, सम्भावित खतरों तथा प्रत्याशित फायदों के बारे में महत्वपूर्ण तथ्य उपस्थित करने की स्थिति में हैं। यदि इसमें हमें सफलता न मिले, तो न तो हम गोपनीयता को दोषी ठहरा सकते हैं और न विषय की दुरूहता को। यह सच है कि यह विषय जटिल है, पर उतना ही, जितना कि नित्यप्रति अनुभव होनेवाले अन्य विषय, जिनका सामना हममें से प्रत्येक को कभी-न-कभी करना ही पड़ता है। इसे समझने में उससे अधिक बुद्धिगत प्रयास की आवश्यकता नहीं होती, जितने की – विचित्र भावनात्मक तत्वों की दो समानताओं के उदाहरणस्वरूप – एक आय-कर अथवा रेस के प्रपत्र को समझने में होती है। आपको अनेक बातें अपरिचित जरूर लगेंगी, पर वे जटिल नहीं हैं। इसके अतिरिक्त उनका महत्व हमारी सुरक्षा, समृद्धि और जीवन के भावी विकास के लिए बहुत है। अतएव हमें आशा है कि पाठक इस विषय पर उतना ही ध्यान देंगे, जितना वे अपने जीवन की आवश्यकताओं तथा मनोरंजन के विषयों पर देने के अभ्यस्त हैं।

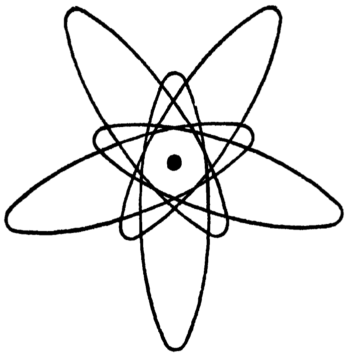
अध्याय २

परमाणु

पदार्थ-मात्र की रचना परमाणुओं से होती है और परमाणु इतने सूक्ष्म होते हैं कि हम उन्हें देख नहीं सकते। प्रकाश-तरंगें (Light-waves) उन पर सदा लहराती रहती हैं—ठीक उसी तरह, जैसे कंकड़ों पर सागर की तरंगें। एक परमाणु मानव-शरीर के एक कोष (Human cell) की तुलना में, जो सामान्य सूक्ष्मवीक्षण-यंत्र से देखने पर साफ दिखाई पड़ता है, उतना ही बड़ा है, जितना एक मानवीय कोष बिलियर्ड खेलने की एक गेंद की तुलना में। संक्षेप में, दस करोड़ परमाणु यदि एक-दूसरे से सटा कर रख दिये जायें, तो वे लगभग एक इंच लम्बी जगह घेरेंगे।

अपने ग्रीक नाम 'एटम' के बावजूद, जिसका अर्थ 'अविभाज्य' होता है, परमाणु कई टुकड़ों से मिल कर बनता है। इसमें एक केन्द्रवर्ती न्यष्टि (Central nucleus) होती है, जो एक धनात्मक विद्युत्-परिमाण (Positive electrical charge) से सम्पन्न होती है और इसके आसपास एक या अधिक ऋणात्मक रूप से विद्युतीकृत इलेक्ट्रन (Negatively charged electrons) बिखरे होते हैं। प्रायः ही ऐसा सुनने में आता है कि जिस तरह हमारी सौर-प्रणाली (Solar system) में विभिन्न ग्रह सूर्य के इर्द-गिर्द चक्कर काटते हैं, उसी तरह न्यष्टि के चारों ओर धुरियों पर इलेक्ट्रन परिक्रमा करते हैं। पर इसका यह स्वरूप बिल्कुल सही नहीं है। एक बात में इलेक्ट्रन ग्रहों की तुलना में अधिक मायावी हैं। ग्रहों की तरह निश्चित धुरियों पर ये चक्कर नहीं लगाते। फिर इनकी धुरियाँ भी कहीं अधिक नाजुक हैं। इलेक्ट्रन की धुरियों को ढूँढ़ने का प्रयत्न करने पर परमाणु ही विनष्ट हो जायेगा।

ग्रह सूर्य से दूर इसलिए नहीं जा पाते कि सूर्य में गम्भीर गुरुत्वाकर्षण-शक्ति (Gravitational attraction) है। पर इलेक्ट्रन और न्यष्टि इसलिए एक साथ रहते हैं कि धनात्मक और ऋणात्मक विद्युत्-परिमाण एक-दूसरे को आकर्षित करते हैं। विद्युतीय आकर्षण (Electrical attraction) की तुलना में, इलेक्ट्रनों और न्यष्टि का गुरुत्वाकर्षणमूलक झुकाव बहुत दुर्बल होता है।



परमाणु इस प्रकार नहीं दिखाई पड़ता। इलेक्ट्रन निश्चित मार्गों से नहीं विचरते। गत रात के स्वप्न का चित्र बनाना जितना कठिन है, उससे कहीं अधिक कठिन परमाणु के स्वरूप को चित्रित करना है।

परमाणु का अधिकांश वजन न्यष्टि को लेकर होता है। हल्की-से-हल्की न्यष्टि भी वजन में एक इलेक्ट्रन का १८४० गुना होती है। पर इसके बावजूद परमाणु के आकार का एक बहुत छोटा हिस्सा ही न्यष्टि घेरती है। वास्तव में, एक न्यष्टि सम्पूर्ण परमाणु की तुलना में उतनी ही बड़ी होती है, जितना बड़ा एक मानवीय कोष की तुलना में परमाणु होता है। यदि २० हजार न्यष्टियों को एक-दूसरे से सटा कर रख दिया जाये, तो उनकी कुल लम्बाई परमाणु के व्यास के बराबर होगी। यदि सभी पदार्थ और किसी चीज से नहीं, केवल न्यष्टियों से ही बने होते, तो एक पेनी (छोटा-से-छोटा अँग्रेजी सिक्का) के आकार के पदार्थ का वजन लगभग ४ करोड़ टन होता।

आगे चल कर हम देखेंगे कि न्यष्टि के आकार का उन विधियों पर बड़ा भारी प्रभाव पड़ता है, जिनमें न्यष्टियाँ एक-दूसरे के प्रति अपनी प्रतिक्रिया दिखाती हैं। इसी कारण न्यष्टि का आकार एक सुस्पष्ठ मापनीय परिमाण है। पर ठीक-ठीक यह कहना बहुत कठिन है कि इलेक्ट्रन के आकार का क्या मतलब है। केवल यही कहा जा सकता है कि यह औसत न्यष्टि के आकार से थोड़ा-बहुत छोटा होता है। कुछ भी हो, इतना तो निश्चित है कि इलेक्ट्रन और न्यष्टि, दोनों ही आकार में सम्पूर्ण परमाणु से छोटे होते हैं। फलतः परमाणु का अधिकांश भाग, निश्चय ही शून्य दिक् (Empty space) से घिरा होता है। इसका

मतलब यह हुआ कि जब आप एक ठोस पदार्थ को देखते हैं, तो आपकी आँखों के सामने शून्य दिक् ही, किंचित् वस्तु-तत्व के साथ, उपस्थित होता है। परमाणुओं के अन्दर तथा उनके बीच होनेवाली विद्युत्-आकर्षणों तथा विकर्षणों की परस्पर-क्रीड़ा से ही ठोस पदार्थों को शक्ति मिलती है।

जब एक विद्युत्धारी कण (Charged particle)—यथा इलेक्ट्रन या न्यष्टि—ठोस पदार्थ से होकर गुजरता है, तब बड़ी विद्युत्-शक्तियाँ निरंतर उसके प्रति क्रियाशील रहती हैं। एक ऐसे कण के लिए पदार्थ बहुत पारदर्शक (Transparent) नहीं प्रतीत होता। परन्तु यदि न्यष्टि के आकार का एक विद्युतीय दृष्टि से निष्पक्ष कण होता, तो वह विद्युतीय शक्तियों को अनुभव किये बिना ही पदार्थ के भीतर स्वच्छंदतापूर्वक विचरता और प्रायः ही एक न्यष्टि या इलेक्ट्रन से टकराता नहीं। वस्तुतः ऐसा एक कण अस्तित्व में है और यह बिना किसी चीज से टकराये एक ठोस पदार्थ के अन्दर एक-दो इंच तक जा सकता है। आगे चल कर इस पुस्तक में हम इस कण—जिसे 'न्यूट्रन' (Neutron) कहते हैं—में विशेष दिलचस्पी लेंगे।

यद्यपि इलेक्ट्रन और न्यष्टि, दोनों ही विद्युत्-सम्पन्न कण होते हैं, तथापि परमाणु अपने सम्पूर्ण रूप में विद्युतीय दृष्टि से निष्पक्ष होता है। इसका अर्थ यह हुआ कि न्यष्टि का धनात्मक विद्युत् ऋणात्मक इलेक्ट्रनों के सम्पूर्ण विद्युत्-परिमाण के बराबर होता है। सभी इलेक्ट्रनों में विद्युत् की मात्रा समान होती है, जो अब तक देखी जा सकनेवाली विद्युत्-मात्राओं में सबसे छोटी है। इस विषय में विशेष रूप से विचित्र बात, जिसकी व्याख्या अब तक नहीं हो सकी है, यह है कि बाकी सभी विद्युत्-परिमाण इलेक्ट्रन के विद्युत्-परिमाण से ही मापे जाते हैं और उसी के बराबर अथवा उसका दुगुना, तिगुना, लाख या दस लाख-गुना होते हैं। ऐसा विद्युत्-परिमाण हम कहीं नहीं पाते, जो इलेक्ट्रन के विद्युत्-परिमाण के रूप में मापा जाकर खंडनीय हो। किसी भी पदार्थ का विद्युत्-परिमाण, इलेक्ट्रन-विद्युत्-परिमाण का ढाई, साढ़े तीन या किसी अन्य खंडित राशि नहीं होता, अर्थात् उससे पूरा-पूरा बँट जाता है। अतएव इलेक्ट्रन के विद्युत्-परिमाण को विद्युत् की एक आदर्श इकाई के रूप में आसानी से माना जा सकता है।

हर परमाणु अपनी न्यष्टि के विद्युत्-परिमाण से पहचाना जा सकता है। जिस साधारणतम परमाणु की कल्पना की जा सकती है, उसमें एक इकाई धनात्मक विद्युत्-परिमाणवाली न्यष्टि के इर्द-गिर्द एक इलेक्ट्रन परिक्रमा करेगा। ऐसा

परमाणु भी अस्तित्व में है और इसे 'उदूजन' (Hydrogen) कहा जाता है। दो इलेक्ट्रनों-द्वारा परिक्रमा की जानेवाली दो इकाई विद्युत्-परिमाणवाली न्यष्टि के परमाणु को 'हेलियम' (Helium) कहते हैं। इसी प्रकार तीन, छः, सात, आठ और ९२ इकाई विद्युत्-परिमाण वाली न्यष्टि की उतने ही इलेक्ट्रनों-द्वारा परिक्रमा किये जानेवाले परमाणु क्रमशः 'लिथियम' (Lithium), 'कार्बन' (Carbon), 'नाइट्रोजन' (Nitrogen), 'आक्सीजन' (Oxygen) और 'यूरेनियम' (Uranium) कहलाते हैं। १ से ९२ इकाई विद्युत्-परिमाण तक के प्रायः सभी प्रकार के परमाणु प्रकृति में उपलब्ध हैं, पर इससे अधिक विद्युत्-परिमाण के परमाणु व्यवहारतः नहीं पाये जाते। कुछ फूट संख्याओं – ४१, ६१, ८५ और ८७ – के विद्युत्-परिमाणवाले परमाणु भी उपलब्ध नहीं हैं। इन अनुपलब्ध परमाणुओं का कारण न्यष्टि के तत्वों से सम्बन्धित है। शीघ्र ही हम न्यष्टि को अपना मुख्य विषय बनायेंगे।

परमाणुओं के बारे में सबसे आश्चर्यकारी बात उनकी एकरूपता – वस्तुतः उनका एकरूप व्यवहार – है। यदि दो परमाणुओं की न्यष्टि समान है और इन न्यष्टियों की परिक्रमा करनेवाले इलेक्ट्रनों की संख्या भी समान है, तो इन दोनों परमाणुओं का प्रतिरोध भी समान परिस्थितियों में ही होगा। इस स्थिति की कल्पना की जा सकती है कि परमाणु के कई अंगभूत भाग यदि विभिन्न ढंग से व्यवस्थित किये जायें, तो वे गति की विभिन्न अवस्थाओं में – असीम विभिन्नताओं में – पाये जायेंगे। तब सम्पूर्ण एकरूपता कहाँ से आयी ? इस प्रश्न का उत्तर न केवल अत्यधिक आश्चर्यजनक है, बल्कि स्पष्टतः सामान्य बुद्धि का भी खंडन करता है। इसी कारण इसकी व्याख्या करना कठिन है। समझने में सबसे अधिक कठिन वे बातें नहीं होतीं, जो जटिल होती हैं, बल्कि वे होती हैं, जो अप्रत्याशित होती हैं।

सौभाग्यवश हमारे लिए परमाणविक भौतिक विज्ञान के इस अधिक दुरूह भाग की तह में जाने की आवश्यकता नहीं है। यह कहना ही पर्याप्त है कि इलेक्ट्रनों की गति की एक ऐसी व्यवस्था या पद्धति है, जो विशेष रूप से अपनायी जाती है और जो परमाणु को अधिकतम स्थायित्व प्रदान करती है। यदि इलेक्ट्रन गति की इस विशेष अवस्था – मौलिक अवस्था (Ground state) – में रहते हैं, तो उनमें गति की अन्य अवस्थाओं के समय की अपेक्षा कम शक्ति रहती है। परमाणु की कुछ दूसरी कम स्थायी (पर कम स्पष्ट नहीं) अवस्थाएँ भी हैं, जिन्हें हम 'उत्तेजित' (Excited) अवस्थाएँ कहते हैं। जब परमाणु

किसी ऐसी उत्तेजित अवस्था में रहता है, तब अस्थायी रहता है और जल्दी-से-जल्दी मौलिक अवस्था (Ground state) में आने का प्रयत्न करता है। चूँकि मौलिक अवस्था में शक्ति, किसी दूसरी अवस्था की तुलना में, कम रहती है, इसलिए परमाणु को अपनी स्थिति ठीक करने में शक्ति का परित्याग करना पड़ता है। यह परित्यक्त शक्ति अपने को 'विद्युत्-चुम्बकीय विकिरण' (Electromagnetic radiation) के रूप में—प्रायः एक दृश्य प्रकाश के स्फुरण में—बदल लेती है। इस प्रकाश का रंग परित्यक्त शक्ति के परिमाण पर निर्भर करता है—जैसे-जैसे शक्ति का परिमाण बढ़ता है, वैसे-वैसे रंग इंद्रधनुष के अनुसार लाल से नीले की ओर बढ़ता है।

ऐसी बहुत कम अवस्थाएँ हैं, जिनमें उत्तेजना-शक्ति कम होती है। तीव्र रूप से उत्तेजित अवस्थाओं का ही बाहुल्य है। इस उच्च उत्तेजना के क्षेत्र में छोटे अतिरिक्त परिवर्तन सम्भव हैं। इस प्रकार, हम अनुभव और सामान्य बुद्धि के अधिक अनुकूल एक स्थिति के निकट पहुँचते हैं—वह यह कि किसी भी छोटे परिणाम में गति की पद्धति बदली जा सकती है।

जो विवरण अभी हमने दिया है, वह निस्सन्देह अपूर्ण है। पर यहाँ हमें ऐसे गम्भीर प्रश्नों में नहीं उलझना चाहिए—जैसे, गति की केवल कुछ पद्धतियाँ ही क्यों सम्भव हैं, क्यों एक निम्नतम स्तर स्थायी है और क्यों इलेक्ट्रन न्यष्टि के आकर्षण से प्रभावित होकर शक्ति की क्षीणतर अवस्थाओं में नहीं उतरते? इसके साथ ही इस बात पर भी जोर दिया जाना चाहिए कि इन तथ्यों की पूर्ण व्याख्या हो चुकी है। यह व्याख्या पदार्थ के अनेक तत्वों के बारे में सही अनुमान लगाती है और हम इस बारे में भी पूर्णतया आश्वस्त हो सकते हैं कि, गणित-विषयक जटिल प्रक्रिया को छोड़ कर, पदार्थों के सभी सामान्य तत्वों के बारे में निश्चित अनुमान लगाये जा सकते हैं। परमाणु की उतने ही सम्पूर्ण रूप में व्याख्या हुई है, जितने सम्पूर्ण रूप में न्यूटन ने 'ग्रहों की गति' की व्याख्या की थी।

परमाणु क्या है, या क्यों दो परमाणु—जैसे, उद्जन के—बिल्कुल समान होते हैं; यह जानने के लिए पेचीदे कारणों या गूढ़ अर्थों की खोज करना आवश्यक नहीं है। एक तरह के दो परमाणु उसी तरह समान होते हैं, जिस तरह एक शतरंज के खिलाड़ी के लिए दो प्यादे। हाँ, एक बात अवश्य है—प्यादों के मामले में हम अन्तर पर ध्यान नहीं देते, जब कि परमाणुओं में अन्तर होता ही नहीं। यह एक सीधी-सी बात है और उचित रूप में एक साधारण अवस्था

की व्याख्या करती है। विज्ञान की सुन्दरता इस बात को लेकर है कि हमारे अत्यधिक रोचक प्रश्नों के सही उत्तर आश्चर्यजनक रूप से सरल सिद्ध हुए हैं।

एक परमाणु को समझने के लिए यह आवश्यक है कि एक न्यष्टि के इर्द-गिर्द इलेक्ट्रनों के वितरण को समझा जाये। एक अणु (Molecule) को समझने के लिए दो या अधिक न्यष्टियों के इर्द-गिर्द इलेक्ट्रनों के वितरण को समझना पड़ेगा। एक परमाणु का रासायनिक आचरण (Chemical behaviour) वह रीति है, जिसमें वह दूसरे परमाणुओं के साथ क्रियाशील होता है। इसका अर्थ है, वह निश्चित ढंग, जिसमें इलेक्ट्रन, दो या अधिक परमाणुओं के इकट्ठा होने पर, अपने को पुनर्व्यवस्थित करते हैं। परमाणुओं का परस्पर-व्यवहार मुख्यतः उनके सर्वाधिक बाह्यवर्ती (Outermost) इलेक्ट्रनों के मध्य होता है। ऐसा भी हो सकता है कि दो बिल्कुल पृथक् परमाणु, जिनकी न्यष्टियाँ विभिन्न विद्युत्-परिमाणवाली हों और जिनके इलेक्ट्रनों की संख्या भिन्न हो, अपने सर्वाधिक बाह्यवर्ती इलेक्ट्रनों की बनावट में समान हों। ऐसी अवस्था में दोनों परमाणु समान रासायनिक गुण व्यक्त करते हैं। उदाहरणस्वरूप, तीन इकाई विद्युत्-परिमाणवाला 'लिथियम' और ११ इकाई विद्युत्-परिमाणवाला 'सोडियम' (Sodium); साथ ही, दो इकाई विद्युत्-परिमाणवाला 'हेलियम' और दस इकाई विद्युत्-परिमाणवाला 'न्योन' (Neon)। हमारे समझने के लिए इस दृष्टि से एक सर्वाधिक महत्वपूर्ण दृष्टान्त, रासायनिक दृष्टि से समान तीन परमाणुओं का समूह है—'कैल्शियम' (Calcium) विद्युत्-परिमाण २० इकाई, स्ट्रानटियम (Strontium) विद्युत्-परिमाण ३८ इकाई और रेडियम (Radium) विद्युत्-परिमाण ८८ इकाई।

जब दो या अधिक परमाणु समीप आते हैं—चाहे वे समान हों या विभिन्न—तब उनके इलेक्ट्रन—विशेषतः सर्वाधिक बाह्यवर्ती इलेक्ट्रन—अपनी गति की उस अवस्था को छोड़ कर, जिसमें वे एक न्यष्टि के पास रहने पर रहते है, गति की नयी अवस्थाएँ अपना लेते हैं। अब यह सम्भव है कि गति की इन नयी अवस्थाओं में से कुछ, पृथक् परमाणुओं की अवस्था से भी अधिक स्थिर हों। ऐसी दशा में परमाणु एक साथ रहने की प्रवृत्ति दिखायेंगे और इलेक्ट्रन गति की कोई ऐसी अवस्था अपनायेंगे, जो अधिकतम स्थायित्व में सहायक हो। परमाणुओं की यह सम्बद्ध-प्रणाली अणु (Molecule) कहलाती है और इसकी अधिकतम स्थायित्व की अवस्था 'अणु की मौलिक अवस्था' (Ground state of the molecule) के नाम से जानी जाती है।

कुछ अत्यधिक स्थायित्ववाले परमाणु भी हैं, जो दूसरे परमाणुओं के साथ मिल कर अपने स्थायित्व में वृद्धि नहीं कर सकते। उदाहरणस्वरूप–हेलियम, न्योन और आर्गन (Argon)। ये परमाणु अकेले रहने की ही प्रवृत्ति दिखाते हैं, एक 'स्थायी' गैस की अवस्था में अपनी स्वतंत्र गति कायम रखते हैं और साधारणतः अपने को असामाजिक सिद्ध करते हैं। इसलिए इन्हें 'विशिष्ट गैस'[१] (Noble gases) कहा जाता है।

एक अणु के निर्माण का विशेष रूप से साधारण दृष्टान्त है–सोडियम और क्लोराइन (Chlorine) के मेल से बना, खाने का नमक। सोडियम-परमाणु के बाह्यवर्ती इलेक्ट्रन का सुदृढ़ रूप से गठन नहीं होता। दूसरी ओर, क्लोराइन-परमाणु अपने में एक अतिरिक्त इलेक्ट्रन के समावेश की भी गुंजाइश रखता है। फलतः सोडियम-परमाणु से ढीले रूप में संयुक्त बाह्यवर्ती इलेक्ट्रन को वश में रखने के लिए जो शक्ति खर्च होती है, वह उसके क्लोराइन-परमाणु में शामिल हो जाने से काफी हद तक पूरी हो जाती है। शेष सोडियम-'परमाणु'[२] अपना एक इलेक्टन खोकर पूर्णतः धनात्मक विद्युत्-सम्पन्न बन जाता है। उधर, क्लोराइन-'परमाणु' एक और इलेक्ट्रन पाकर पूर्णतः ऋणात्मक विद्युत्-सम्पन्न हो जाता है। अब दोनों 'परमाणु' एक-दूसरे को आकृष्ट करते हैं और 'सोडियम क्लोराइड' (Sodium chloride) अणु तैयार होता है। वस्तुतः पदार्थ का संयुक्त होना जारी रहता है। धनात्मक सोडियम-'परमाणुओं' और ऋणात्मक क्लोराइन-'परमाणुओं' की एक बड़ी संख्या अपने को एक सुन्दर और सुव्यवस्थित जाली में परिणत कर लेती है, जिसे 'सोडियम-क्लोराइड का स्फटिक' कहा जाता है।

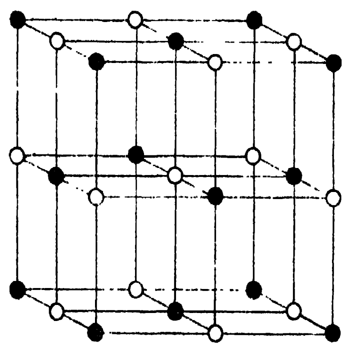
साधारणतम अणु, जो एक बड़े परिमाण में सम्बद्ध नहीं होता, दो उद्जन-परमाणुओं से मिल कर बनता है। दो उद्जन-न्यष्टियों के इर्द-गिर्द दो इलेक्ट्रनों की एक विशिष्ट स्थायी पद्धति अस्तित्व में आ सकती है। इस कारण उद्जन-परमाणु जोड़ों में संयुक्त होते हैं, ताकि यह पद्धति सम्भव हो सके।

---

१ सम्भवतः 'विशिष्ट' (Noble) शब्द का उपयोग यहाँ ठीक नहीं हुआ–ये परमाणु आपस में भी एक–दूसरे का साथ नहीं चाहते।

२. परम शब्द पर इसलिए अन्तर्वर्ती चिह्न (' ') लगाये गये हैं कि अपना एक इलेक्ट्रन खोकर यह मौलिक अवस्था में एक साधारण निष्पक्ष परमाणु नहीं रह जाता।

परमाणुओं के संयुक्त होने की प्रणालियाँ विविधरूपी हैं। उनसे ऐसी धातुओं का निर्माण सम्भव है, जिनमें बाह्यवर्ती इलेक्ट्रन स्वच्छंदतापूर्वक विचरण कर सकें और अधिकाधिक सुगमता से विद्युत्-तरंगों को प्रवाहित कर सकें। नसे ऐसे तरल पदार्थों का निर्माण हो सकता है, जिनमें परमाणु अथवा अणु ढीले और अव्यवस्थित ढंग से संयुक्त हो सकें। वे कतिपय प्रतिरोधों के साथ स्वच्छंदतापूर्वक विचर सकते हैं, जैसा कि एक गैस में होता है। वे लम्बे वर्तुल अणुओं का भी निर्माण कर सकते हैं, जहाँ बिना किसी स्पष्ट व्यवस्था के परमाणु-समूह एक-दूसरे से जुड़े होते हैं—परन्तु एक ऐसे ढंग से, जो कि किसी रूप में जीवन की कार्य-प्रणालियों से सम्बन्धित हो।



सामान्य नमक की डली में सोडियम और क्लोराइन-'परमाणुओं' की व्यवस्था

हम सब जानते हैं कि पदार्थ के कितने ही स्वरूप हो सकते हैं और ये सब स्वरूप कितने परिवर्तनशील हैं। पत्थर और चूर्ण हवा और कीड़ा, यहाँ तक कि मनुष्य का मस्तिष्क भी उन्हीं प्रकार के कुछ परमाणुओं से बना है और ये परमाणु उन नियमों से प्रभावित होते हैं, जो कि सूक्ष्म और साधारण हैं तथा निश्चित रूप में वर्णित हैं। न्यूटन के यह प्रमाणित करने के बाद, कि पृथ्वी और स्वर्ग, सर्वत्र एक ही विज्ञान चरितार्थ होता है, हमने जो कुछ सीखा है, उसमें यह निश्चय ही सर्वाधिक महत्वपूर्ण तथ्य है।

अध्याय ३

न्यष्टियाँ

अब तक हमने परमाणुओं को इलेक्ट्रनों और न्यष्टियों में विभाज्य माना है और इलेक्ट्रनों तथा न्यष्टियों को अविभाज्य वस्तुएँ । यह दृष्टिकोण रसायन-विज्ञान (Chemistry) के सभी तथ्यों और भौतिक विज्ञान (Physics) के अधिकांश तथ्यों पर विचार करके के लिए पर्याप्त है। भौतिक विज्ञान में भी इलेक्ट्रन की आन्तरिक रचना का ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक नहीं माना गया है।[1] इस अर्थ में इलेक्ट्रन वस्तुतः एक प्रारम्भिक कण है। किन्तु कुछ भौतिक तथ्यों को समझने के लिए, जिनमें से एक रेडियो-सक्रियता है, यह मानना आवश्यक है कि न्यष्टि अविभाज्य नहीं है, वह भी कई टुकड़ों का जोड़ है। न्यष्टि के भाग 'प्रोटोन' (Proton) और 'न्यूट्रन' Neutron) कहलाते हैं।

पिछले अध्याय में दिये गये साधारण वक्तव्य इन अपेक्षाकृत छोटे कणों के बारे में भी चरितार्थ होते हैं। सभी इलेक्ट्रन बराबर – बिल्कुल बराबर – होते हैं। सभी प्रोटोन भी समान होते हैं और सभी न्यूट्रन भी। इन कणों के छोटे-से-छोटे अन्तर को भी प्रकट करने में सक्षम कुछ तरीके हैं; लेकिन ऐसे किसी अन्तर का अब तक पता नहीं चला है। जहाँ तक हम जानते हैं, ये कण सदा समान रहते हैं। हम इनमें शक्ति का प्रवेश नहीं करा सकते और न परमाणुओं की तरह इन्हें उत्तेजित कर सकते हैं। जब हम इन छोटे कणों पर विचार करते हैं, तो विश्व-रचना की दुरूहता समाप्त हो जाती है। और इसके विपरीत, जो हमें दिखायी पड़ता है, वह काफी सरल है।

एक प्रोटोन और एक न्यूट्रन का वजन लगभग पूर्णतः समान होता है। प्रोटोन में एक इकाई धनात्मक विद्युत् होता है। इसका अर्थ यह हुआ कि प्रोटोन की विद्युत्-सम्पन्नता बिल्कुल इलेक्ट्रन के बराबर होती है – फर्क इतना ही है कि इसके विद्युत् का गुण इलेक्ट्रन के विद्युत् गुण के विपरीत होता है। न्यूट्रन विद्युतीय दृष्टि से निष्पक्ष कण होता है। अतः न्यष्टि का विद्युत्-परिमाण उसके प्रोटोनों की संख्या के बराबर होता है – न्यूट्रनों की संख्या का इस क्षेत्र में कोई

---

1. अभी तक

महत्व नहीं होता। लेकिन न्यष्टि का वजन, प्रोटोन (या न्यूट्रन) को एक इकाई वजन मान कर, प्रोटोनों और न्यूट्रनों की कुल संख्या के बराबर होता है।

अब कल्पना कीजिये कि दो ऐसे परमाणु हैं, जिनकी न्यष्टियों में प्रोटोनों की संख्या तो बराबर है, पर न्यूट्रनों की संख्या असमान है। प्रकृति में ऐसे परमाणु हैं और इन्हें आइसोटोप (Isotope) कहा जाता है। इन आइसोटोपों के बारे में उल्लेखनीय बात यह है कि चूँकि इनमें समान संख्या में प्रोटोन होते हैं, समान न्यैष्टिक विद्युत्-परिमाण होता है और इलेक्ट्रनों की समान बनावट होती है, इसलिए इनके रासायनिक गुण भी समान होते हैं। इनकी न्यष्टियों के आकार में थोड़ा-बहुत अन्तर होता है, लेकिन न्यष्टि स्वयं भी तो छोटी होती है। यह बात लगभग वैसी ही है, जैसे हम 'कुछ नहीं' और 'दुगुने कुछ नहीं' का अन्तर जानने का प्रयास करें। आइसोटोपों के वजन का अन्तर, जो कि न्यूट्रनों की संख्या की कमी-बेशी के कारण होता है, उनके रासायनिक आचरण पर नगण्य-सा प्रभाव डालता है। इस तथ्य का एक महत्वपूर्ण परिणाम यह है कि अणु, जो कि सिर्फ इस बात को लेकर आइसोटोप से भिन्न हैं कि आइसोटोप एक-दूसरे की स्थान-पूर्ति करते हैं, उनसे प्राणिविज्ञान की दृष्टि से कोई भेद नहीं रखते। उनका स्वाद और गंध, दोनों समान होते हैं। वे उसी प्रकार हमारे शरीर में प्रवेश पाते हैं, जमा होते हैं और बाहर निकलते हैं।

उद्‌जन के आइसोटोप सरलतम आइसोटोप होते हैं। प्रकृति में प्राप्त होनेवाले अधिकांश उद्‌जन-परमाणु एक ही प्रोटोन की न्यष्टिवाले होते हैं। यही 'सामान्य उद्‌जन' या 'हल्के उद्‌जन' हैं। पर कुछ ऐसे भी उद्‌जन-परमाणु हैं, जिनकी न्यष्टियों में एक प्रोटोन और एक न्यूट्रन होता है। ये 'भारी उद्‌जन' कहलाते हैं और भारी पानी में पाये जाते हैं। पानी के सभी प्राकृतिक साधनों में ये दो प्रकार के उद्‌जन एक ऐसे अनुपात में मिले होते हैं, जो सभी उदाहरणों में प्रायः समान ही पाया गया है। न्यष्टि के चारों ओर परिक्रमा करनेवाला इलेक्ट्रन भी प्रायः एक ही ढंग का आचरण दिखाता है, चाहे अतिरिक्त न्यूट्रन उपस्थित हो, अथवा नहीं। इलेक्ट्रन की उस अवस्था पर ही परमाणु—और परमाणु को अपने अन्दर निहित रखनेवाले अणु—के अधिकांश तत्व निर्भर करते हैं। निस्सन्देह, भारी उद्‌जन का वजन सामान्य उद्‌जन से दुगुना होता है और भारी पानी हल्के पानी से अधिक घना होता है; अन्यथा उनमें बहुत कम अन्तर होता है।

उद्जन-आइसोटोपों के अन्वेषण की कहानी बड़ी मनोरंजक है। लगभग ५० वर्ष पहले – जब कि किसी भी आइसोटोप का आविष्कार नहीं हुआ था – दो वैज्ञानिकों ने पानी के घनत्व को मापने का प्रयास किया। उन्होंने पानी को खौला कर और फिर बाष्प को जमा कर उसे शुद्ध किया। लेकिन वे ज्यों-ज्यों उसे खौलाते, त्यों-त्यों वह थोड़ी-सी, पर अनुभवगत मात्रा में हल्का होता जाता। अन्त में उन्होंने अपना प्रयास त्याग दिया – पानी में कोई घनत्व उन्हें दिखाई न पड़ा।

वस्तुतः बात यह हुई कि हल्का पानी भारी पानी की तुलना में जल्दी खौल जाता है। इस तथ्य को समझे बिना ही उन वैज्ञानिकों ने आइसोटोपों को अलग करना शुरू कर दिया था।

अनेक वर्षों के बाद हेरल्ड ऊरे ने कुछ दूसरे लोगों के गलत प्रयोगों के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला कि भारी उद्जन का अस्तित्व होना ही चाहिए। उसने उसकी खोज की और उसे पाया भी; पर जितनी मात्रा में उसकी अपेक्षा उसने की थी, उससे बहुत कम मात्रा में वह मिला। भारी उद्जन की मात्रा इतनी कम मिली कि यदि ऊरे सही प्रयोगों के आधार पर इसका पता लगाना चाहता, तो उसका अस्तित्व ही उसे नजर नहीं आता। इससे ऐसा लगता है कि विचार-हीनता की तुलना में एक निराधार विचार कहीं अधिक फलदायक है।

प्राकृतिक रूप से उत्पन्न होनेवाले प्रायः सभी तत्वों में एक से अधिक आइसोटोप होते हैं। उदारहण के लिए, यूरेनियम में मुख्यतः दो आइसोटोप होते हैं। इनमें से एक आइसोटोप में १४३ न्यूट्रन होते हैं और दूसरे में १४६। चूँकि इन दोनों ही आइसोटोपों में ९२ प्रोटोन होते हैं, इसलिए इनके वजन होते हैं: ९२+१४३=२३५ और ९२+१४६=२३८। इसीलिए इन आइसोटोपों को साधारणतः यू^{२३५} और यू^{२३८} के नाम से पुकारा जाता है। यू^{२३५} आइसोटोप, जो कि परमाणविक प्रतिकारियों (Atomic Reactors) में और परमाणविक बमों के निर्माण में बहुत मूल्यवान होता है, अपेक्षाकृत दुर्लभ है। प्राकृतिक यूरेनियम के १४० भागों में से केवल एक भाग इसका होता है। इस दुर्लभ आइसोटोप को सामान्य २३८ आइसोटोप से अलग करने का काम, दूसरे महायुद्ध-काल की २० अरब डालर की मनहट्टन-योजना का, एक प्रमुख अंग था।

अब हम एक सर्वाधिक महत्वपूर्ण प्रश्न की ओर बढ़ते हैं, जो रेडियो-सक्रियता को समझने के क्षेत्र में सहायक सिद्ध होगा। यह प्रश्न है—वह कौन-सी चीज है, जो यह बतलाती है कि किसी तत्व में कौन-सा आइसोटोप होगा ? उदाहरण के लिए, यूरेनियम में २३५ और २३८ वजन के आइसोटोप हैं। प्रकृति में यू^{२३४} और यू^{२३६} भी थोड़ी मात्राओं में उपलब्ध हैं; पर यू^{२३२}, यू^{२३३}, यू^{२३७} या यू^{२३९} क्यों उपलब्ध नहीं हैं ? स्पष्टतः न्यूट्रनों की केवल कुछ संख्याएँ ही ९२ प्रोटोनों के साथ संयुक्त होंगी।

एक दूसरा उदाहरण ज्ञात तत्वों में सूक्ष्मतम—उद्जन—का है। हम पहले ही उद्जन के दो आइसोटोपों का उल्लेख कर चुके हैं—पहला, वजन १ वाला हल्का उद्जन (जिसे संक्षेप में एच^{१} लिखते हैं), जिसकी न्यष्टि में केवळ एक प्रोटोन होता है और कोई न्यूट्रन नहीं; दूसरा, भारी उद्जन (जिसे 'ड्यूटिरियम' भी कहते हैं), जिसका वजन २ (एच^{२}) होता है, क्योंकि इसमें एक प्रोटोन और एक न्यूट्रन होता है। दूसरे प्रकार का आइसोटोप प्राकृतिक उद्जन के ५ हजार हिस्सों में से एक हिस्सा पाया जाता है। थोड़ा-बहुत 'ट्रिटियम' (एच^{३}) भी उपलब्ध है, जिसमें एक प्रोटोन और दो न्यूट्रन होते हैं। लेकिन यहाँ आकर यह क्रम रुक जाता है। फिर एच^{४}, एच^{५}, एच^{६} आदि का क्या हुआ ?

यह प्रश्न पहले के एक प्रश्न से सम्बन्धित है—प्रकृति में ४३, ६१, ८५ और ८७ विद्युत्-परिमाणवाले परमाणु क्यों नहीं हैं और क्यों ९२ विद्युत्-परिमाण से अधिक का परमाणु नहीं पाया जाता ? इन प्रश्नों का उत्तर देने के लिए यह जानना आवश्यक है कि न्यष्टि के अन्दर न्यूट्रनों और प्रोटोनों की गति किन नियमों से संचालित होती है और किन प्रकार की शक्तियाँ एक न्यूट्रन पर एक न्यूट्रन की, एक प्रोटोन पर एक न्यूट्रन की और एक प्रोटोन पर एक प्रोटोन की प्रतिक्रिया के फलस्वरूप प्रकट होती हैं।

न्यष्टि के अन्दर न्यूट्रनों और प्रोटोनों की गति उन्हीं नियमों से संचालित होती है, जिनसे परमाणु के अन्दर इलेक्ट्रनों की गति संचालित होती है। न्यष्टि और परमाणु, दोनों के लिए गति की एक मौलिक अवस्था (Ground state) है, जो किसी भी दूसरी अवस्था की अपेक्षा अधिक स्थायी (कम शक्तिवाली) होती है। निस्संदेह, परमाणु के इलेक्ट्रनों की व्यवस्था और गति न केवल इस सामान्य नियम पर, बल्कि इलेक्ट्रनों और न्यष्टि के बीच क्रियारत शक्तियों के स्पष्ट वैद्युत् स्वरूप पर भी निर्भर करती है। इसी प्रकार न्यष्टि के अन्दर न्यूट्रनों

और प्रोटोनों की व्यवस्था और गति न्यूट्रनों और प्रोटोनों के बीच क्रियारत शक्तियों के स्वरूप पर निर्भर करती है।

निश्चय ही, ये शक्तियाँ गुरुत्वाकर्षणमूलक नहीं होतीं। न्यूट्रनों और प्रोटोनों के परस्पर-आकर्षण की तुलना में गुरुत्वाकर्षण अत्यन्त दुर्बल होता है और न्यैष्टिक क्षेत्र में तो वह सम्पूर्णतया उपेक्षणीय होता है। न्यैष्टिक शक्तियाँ मूलतः विद्युतीय भी नहीं हो सकतीं। विद्युतीय दृष्टि से न्यूट्रन निष्पक्ष होते हैं और प्रोटोन अपने विद्युतीय परिमाण के कारण यथार्थतः एक-दूसरे को धक्का देते रहते हैं। न्यैष्टिक शक्तियाँ बिल्कुल ही नयी चीजें हैं। अब तक जिन शक्तियों का पता चला है, उनमें वे सर्वाधिक शक्ति-सम्पन्न हैं और प्रत्यक्ष जगत् में उनका कोई मुकाबला नहीं है।

न्यैष्टिक शक्तियों को अब तक पूर्णतः समझा नहीं जा सका है। लेकिन न्यैष्टिक स्थायित्व को समझने के लिए हमें सिर्फ एक विशिष्ट तथ्य को जानने की जरूरत है, जो कि न्यूट्रनों और प्रोटोनों के (और संयोगवश इलेक्ट्रनों के भी) आचरण को निश्चित करता है, और वह यह कि वे विभिन्न रहना चाहते हैं। प्रत्येक कण गति की एक विशेष अवस्था या पद्धतिवाला माना जा सकता है। जब किन्हीं भी दो न्यूट्रनों की तुलना की जाती है, तब उनकी गति की पद्धति अनिवार्यतः भिन्न होती है। यही बात दो प्रोटोनों के लिए भी लागू होती है। पर एक न्यूट्रन और एक प्रोटोन समान पद्धतियों में भी पाये जा सकते हैं; क्योंकि विद्युत्-परिमाण की दृष्टि से वे भिन्न होते हैं।

गति की सम्भव पद्धतियों में से कुछ में निम्नतर और कुछ में उच्चतर शक्ति होती है। अकेले न्यूट्रन और प्रोटोन पहले, अधिकतम स्थायित्व के लिए निम्नतम शक्ति के नियम के अनुसार, निम्नतम शक्ति की अवस्थाओं को ग्रहण करेंगे। तदुपरान्त पार्थक्य की माँग कणों को शक्ति की उच्चतर-से-उच्चतर पद्धतियों की ओर प्रेरित करेगी।

चूँकि एक न्यूट्रन किसी प्रोटोन के समान पद्धति में रहने में बाधक नहीं होता, इसलिए निम्नतम शक्ति की अवस्था एक न्यूट्रन और प्रोटोन, दोनों एक साथ ही अपना सकते हैं।[1] यदि एक और न्यूट्रन या प्रोटोन इसमें

---

१. वस्तुतः एक ही अवस्था दो न्यूट्रनों और प्रोटोनों—द्वारा भी अपनायी जा सकती है। इसका कारण यह है कि न्यूट्रन और प्रोटोन उत्तरी ध्रुव और दक्षिणी ध्रुव-सम्पन्न चुम्बकीय कण हैं। परिणामतः पार्थक्य की माँग की पूर्ति इस रूप में भी हो सकती है कि एक न्यूट्रन (या प्रोटोन) अपना उत्तरी ध्रुव ऊपर की ओर रखे और दूसरा अपना उत्तरी ध्रुव नीचे की ओर।

शामिल किया जाये, तो अवश्य ही उसे उच्चतर शक्ति की अवस्था में रखना होता। इस कारण हम यह अपेक्षा करेंगे कि न्यूट्रनों और प्रोटोनों की समान या इसके निकट संख्या रहने पर ही न्यष्टियाँ सर्वाधिक स्थायी होंगी। उन न्यष्टियों के लिए, जो बहुत भारी नहीं होतीं, यही बात सही है। उदाहरण के लिए, ७ प्रोटोनवाले नाइट्रोजन में दो स्थिर आइसोटोप, एन ^{१४} और एन ^{१५} होते हैं, जिनमें न्यूट्रनों की संख्या क्रमशः ७ और ८ होती है। किन्तु भारी न्यष्टियों के लिए स्थिति कुछ दूसरी होती है।

न्यूट्रनों और प्रोटोनों के मध्य की न्यैष्टिक शक्ति बहुत अल्प क्षेत्र में क्रियाशील होती है–पर्याप्त आकर्षण का अनुभव करने के लिए कणों का एक-दूसरे के बहुत निकट होना आवश्यक है। परिणामतः एक न्यूटन या प्रोटोन न्यष्टि में अपने सबसे निकटवर्ती पड़ोसियों के प्रति ही परस्पर-क्रिया दिखाता है। हाँ, प्रोटोनों के बीच विद्युतीय प्रतिसारण अवश्य अधिक बड़े क्षेत्र में क्रियाशील होता है। एक प्रोटोन न्यष्टि के अन्य सभी प्रोटोनों-द्वारा दूर हटाया जाता है। भारी न्यष्टियों के लिए यह प्रतिसारण न्यूट्रनों के मुकाबिले में प्रोटोनों की संख्या घटाने के लिए पर्याप्त होता है। उदाहरणस्वरूप, सीसा (Lead) में, जिसमें ८२ प्रोटोन होते हैं, १२२, १२४, १२५ और १२६ न्यूट्रन वाले चार स्थिर आइसोटोप पाये जाते हैं।

हमने कहा है कि सात प्रोटोन स्थायी रूप से सात या आठ न्यूट्रनों से संयुक्त हो सकते हैं। लेकिन यदि सात प्रोटोन छः या नौ न्यूट्रनों से संयुक्त हों (जिससे एन^{१३} या एन^{१६} बनें), तो क्या हो? हमारा नियम उन्हें सम्बद्ध होने से नहीं रोकता; वह तो सिर्फ यही कहता है कि ये संयुक्तीकरण उस अवस्था में अधिक स्थायी होंगे, यदि प्रोटोन एक न्यूट्रन में बदला जा सके (छः की स्थिति में) या एक न्यूट्रन एक प्रोटोन में बदला जा सके (नौ के स्थिति में)

वस्तुतः सात प्रोटोन और नौ न्यूट्रन संयुक्त होते हैं, किन्तु ऐसी न्यष्टि स्थायी नहीं होती और अनिश्चित काल तक बनी नहीं रहती। इसका कारण बहुत साधारण है–साथ ही, थोड़ा आश्चर्यकारी भी। एक न्यूट्रन का एक प्रोटोन में रूपान्तर वस्तुतः एक सम्भव क्रिया है–साथ ही, इससे कुछ शक्ति भी मुक्त होती है। इसी प्रकार सात प्रोटोनों और छः न्यूट्रनोंवाली एक न्यष्टि का अस्तित्व सीमित अवधि का होगा, क्योंकि एक प्रोटोन का एक न्यूट्रन में रूपान्तर भी सम्भव है। निस्सन्देह प्रोटोन विद्युत्-सम्पन्न होता है और न्यूट्रन नहीं होता। तब इन रूपांतरों के समय विद्युत् की क्या दशा होती है? वस्तुतः

एक न्यूट्रन एक प्रोटोन में नहीं, बल्कि 'एक प्रोटोन तथा एक इलेक्ट्रन' में रूपान्तरित होता है। इसी प्रकार एक प्रोटोन भी 'एक न्यूट्रन तथा एक और चीज' में रूपान्तरित होता है। यह 'चीज' पोजीट्रन है और यह हर प्रकार से इलेक्ट्रन के समरूप होता है, सिवाय इस बात के, कि इसमें ऋणात्मक की जगह धनात्मक विद्युत्-परिमाण होता है।

ऊपर जिन परिवर्तनों की चर्चा हुई है, वे स्वतः घटते हैं। वे रेडियो-सक्रियता के उदाहरण हैं। विशेष तौर पर वे 'बीटा-क्षय' (Beta decay) प्रणालियाँ कही जाती हैं, क्योंकि एक न्यष्टि-द्वारा बिखेरा गया एक इलेक्ट्रन (या एक पोजीट्रन) बीटा-किरण कहलाता है। जब कभी न्यैष्टिक शक्ति का एक विस्फोट या एक विद्युत्-यंत्र में प्रयोग होता है, तब ऐसे बीटा-रेडियो-सक्रिय तत्व पैदा होते हैं। न्यैष्टिक शक्ति-सम्बन्धी अनेक कठिनाइयाँ और चिन्ताएँ इन बीटा-प्रक्रियाओं से सम्बन्धित होती हैं। प्रायः हानिकारक, और कभी-कभी सहायक, तत्वों के रूप में इनसे हमारा वास्ता पड़ेगा।

जब एक न्यष्टि के अन्दर एक न्यूट्रन, एक प्रोटोन और एक इलेक्ट्रन में रूपान्तरित होता है, तब इलेक्ट्रन अविलम्ब पलायन करता है, पर प्रोटोन न्यष्टि में ही रहता है। इसी प्रकार जब एक प्रोटोन, एक न्यूट्रन और एक पोजीटन में रूपान्तरित होता है, तब पोजीट्रन पलायन करता है और न्यूट्रन न्यष्टि में रह जाता है। चूँकि प्रोटोन या न्यूट्रन की तुलना में इलेक्ट्रन और पोजीटन का बड़ा उपेक्षणीय वजन होता है, इसलिए बीटा-क्षय की प्रणाली न्यष्टि का वजन प्रायः अपरिवर्तित छोड़ देती है। चूँकि इलेक्ट्रन और पोजीट्रन विद्युत्-सम्पन्न होते हैं, इसलिए बीटा-क्षय की प्रणाली न्यष्टि की विद्युत्-मात्रा को एक इकाई बढ़ा या घटा देती है।

बीटा-क्षय के बाद नाइट्रोजन-न्यष्टि, जिसमें सात प्रोटोन और छः न्यूट्रन (एन^{१३}) होते हैं, छः प्रोटोनों और सात न्यूट्रनोंवाली न्यष्टि बन जाती है–१३ वजनवाला कार्बन (सी^{१३}), जो कि एक स्थायी संयोग होता है। इसी प्रकार सात प्रोटोनों और नौ न्यूट्रनों (एन^{१६}) वाली एक नाइट्रोजन-न्यष्टि आठ प्रोटोनों और आठ न्यूट्रनोंवाली न्यष्टि बन जाती है–१६ वजनवाला आक्सीजन (ओ^{१६}), जो कि मामूली रूप से स्थायी आक्सीजन होता है।

कभी-कभी बीटा-क्षय के बाद शेष न्यष्टि (Residual nucleus) में 'उचित' संख्या में न्यूट्रन तथा प्रोटोन पाये जाते हैं, पर उसकी शक्ति का परिमाण बढ़ जाता है। तात्पर्य यह कि शेष न्यष्टि अपनी मौलिक अवस्था (Ground

state) में न रह कर उत्तेजित अवस्था में आ जाती ह। अब तक ज्ञात बीटा-क्षय के उदाहरणों में से दो-तिहाई में ऐसा ही होता है। उदाहरण के लिए, जब एन^{16} क्षयमान होकर ओ^{16} बन जाता है, तब ऐसा ही होता है।

ऐसी अवस्था में एक उत्तेजित न्यष्टि एक उत्तेजित परमाणु-जैसा आचरण करेगी। पाठकों को स्मरण होगा कि एक उत्तेजित परमाणु विद्युत्-चुम्बकीय विकिरण का परित्याग कर अपनी अतिरिक्त शक्ति से मुक्ति पा लेता है। यह विकिरण साधारणतः दृश्य अथवा करीब-करीब देखा जा सकनेवाला प्रकाश होता है। उत्तेजित न्यष्टि भी ठीक इसी प्रकार अपनी अतिरिक्त शक्ति से मुक्ति पायेगी। अन्तर इतना ही होता है कि न्यष्टि के विद्युत्-चुम्बकीय विकिरण में, परमाणु के विद्युत्-चुम्बकीय विकिरण की तुलना में, प्रायः दस लाख-गुना अधिक शक्ति-परिमाण होता है। इससे यह प्रकट होता है कि न्यष्टि के अन्दर बड़े परिमाण में शक्ति-संचय होता है। न्यष्टि से प्रकट होनेवाला इस प्रकार का विद्युत्-चुम्बकीय विकिरण गामा-किरण कहलाता है। गामा-किरण का परित्याग, या गामा-क्षय, बीटा-क्षय की भाँति, एक शक्तित्यागी प्रणाली है, जो एक अस्थायी न्यष्टि को स्थायी अथवा अपेक्षाकृत स्थायी न्यष्टि में परिणत करता है। अधिक सामान्य रूप में, कोई भी स्वतः शक्तित्यागी प्रणाली (जो न्यष्टि को स्थायित्व प्रदान करती है) रेडियो-सक्रियता कहलाती है। बीटा और गामा-क्षय इसके दो उदाहरण हैं। बाद में, हम एक तीसरे उदाहरण अल्फा-क्षय, पर विचार करेंगे। एक अल्फा-कण हेलियम-परमाणु की न्यष्टि होता है और इसमें दो न्यूट्रन तथा दो प्रोटोन होते हैं।

एक न्यूट्रन का क्षय और एक प्रोटोन का क्षय पूर्णतः समरूप प्रणालियाँ प्रतीत होती हैं। पर वस्तुतः इन दोनों के बीच एक महत्वपूर्ण अन्तर है। एक स्वतंत्र न्यूट्रन – जो किसी न्यष्टि में बंद नहीं रहता – एक प्रोटोन और एक इलेक्ट्रन में क्षयमान होगा, लेकिन एक स्वतंत्र प्रोटोन एक न्यूट्रन और एक पोजीट्रन में क्षयमान नहीं होगा। यह अन्तर इस कारण है कि प्रोटोन का वजन न्यूट्रन से कुछ कम होता है, इसीलिए उसमें शक्ति भी कम होती है। प्रोटोन के क्षय के लिए यह आवश्यक है कि वह एक न्यष्टि के अन्दर हो, जहाँ वह दूसरे प्रोटोनों और न्यूट्रनों से कुछ शक्ति पा सके।

कभी-कभी ऐसा पाया जाता है कि न्यष्टियों के जोड़े आपस में प्रोटोन-न्यूट्रन (या न्यूट्रन-प्रोटोन) रूपान्तर के अनुसार रूपान्तरित होते हैं, किन्तु इन रूपान्तरों में से कोई भी ऊपर वर्णित ढंग का रूपान्तर नहीं हो सकता। इसका

कारण यह है कि एक प्रोटोन-न्यूट्रन या न्यूट्रन-प्रोटोन-रूपान्तर में एक अतिरिक्त इलेक्ट्रन या पोजीट्रन का परित्याग होता ही है। आइन्स्टीन के अनुसार इलेक्ट्रन या पोजीट्रन की राशि किसी शक्ति ($E=mc^2$) से सम्बद्ध होती है और ऐसा हो सकता है कि न्यूट्रन-प्रोटोन या प्रोटोन-न्यूट्रन-रूपान्तर में से कोई भी इतनी पर्याप्त शक्ति न बिखेरे, जिससे एक इलेक्ट्रन या पोजीट्रन का निर्माण हो।

ऐसी अवस्थाओं में, एक न्यूट्रन के निर्माणार्थ, परमाणु के अत्यन्त अंतरंग इलेक्टनों में से कोई एक एक प्रोटोन के साथ संयुक्त हो सकता है। ऐसी इलेक्ट्रन-संचय-प्रणाली सदा शक्ति बिखेरेगी, यदि विपरीत प्रणाली—एक न्यूट्रन का एक प्रोटोन और एक इलेक्ट्रन में रूपान्तर—शक्ति-ह्रास से सम्बन्धित हो। इस प्रकार, दो शक्तियों के वस्तुतः समान मेल की सम्भावना को यदि बाद दे दिया जाये, तो प्रोटोन से न्यूट्रन और न्यूट्रन से प्रोटोन, इन दोनों रूपान्तरों में से एक सर्वदा सम्भव होगा।

प्रकृति के सर्वाधिक प्रमाणित नियमों में से एक यह है कि शक्ति सदा सुरक्षित होती है। इसलिए यह अपेक्षा की जायेगी कि बीटा-किरण की शक्ति, न्यष्टि की बीटा-क्षय के पहले और बाद की शक्ति के अन्तर के बराबर होगी। वास्तव में बीटा-किरण की शक्ति कभी भी इस परिमाण में नहीं पायी जाती। प्रायः ही इसका परिमाण काफी कम होता है। स्पष्ट है कि इस प्रकार कुछ शक्ति का ह्रास हो जाता है और यह सन्देह पैदा होता है कि सम्भवतः सम्पूर्ण शक्ति सुरक्षित नहीं रह जाती। लेकिन नवीनतम खोजों से यह पता चला है कि गुम हुई शक्ति न्यष्टि के बाहर चली जाती है और इसे चुरा ले जाने का काम 'न्यूट्रिनो' (Neutrino), जिसका अभी हाल में पता चला है, करता है।

न्यूट्रिनो, न्यूट्रन की ही भाँति, एक विद्युतीय दृष्टि से निष्पक्ष कण है; परन्तु इसका वजन, एक प्रकाश-किरण के वजन की भाँति, शून्य के बराबर होता है। इस किरण की ही तरह इसकी चाल भी प्रकाश-वेग के बराबर होती है।

बीटा-क्षय-प्रक्रिया के अनन्तर न्यष्टि-द्वारा परित्यक्त शक्ति को न्यूट्रिनो और बीटा-किरण आपस में न्यूनाधिक समान मात्रा में बाँट लेते हैं। आगे चल कर हम देखेंगे कि इलेक्ट्रन कुछ प्रकार के प्रभाव पैदा करते हैं। इनमें से कुछ हानिकारक होते हैं। परन्तु न्यूट्रिनो बिल्कुल ही हानिकारक नहीं होता। एक चतुर चोर की तरह यह चुपके से विचर जाता है और व्यवहारतः कोई चिह्न नहीं छोड़ता। यह पदार्थ के साथ इतने सूक्ष्म रूप से परस्पर-क्रिया सम्पन्न

करता है कि यदि ये अरबों-खरबों की तादाद में हमारे सम्पूर्ण भूमण्डल से होकर गुजर जायें, तब भी इनकी एक भी टक्कर नहीं हो।

अभी हाल में इस विचित्र सूक्ष्म कण ने समता-सम्बन्धी हमारी सर्वाधिक निर्विवाद मान्यताओं में से एक को पलट दिया है। हमने सदा से ही यह माना है कि प्रकृति अपने दायें और बायें हाथ में कोई भेद-भाव नहीं रखती और जितनी भी प्राकृतिक प्रक्रियाओं का अस्तित्व है, उन सबके छायात्मक प्रतिरूप भी विद्यमान हैं। पर न्यूट्रिनो इस नियम का अपवाद है। एक पेंच की तरह इसकी एक निश्चित समता है।[1] यह तथ्य विज्ञान के विकास में सर्वाधिक महत्वपूर्ण साबित हो सकता है। पर इस पुस्तक के वर्ण्य विषय से सम्बन्धित प्रश्नों पर इसका कोई असर नहीं पड़ता।

न्यूट्रिनो हमारे पास कुछ सुदूरवर्ती और गुप्त स्थानों—यथा सूर्य और विस्फोट-रत सितारों—के अन्तरिक भाग से पहुँचते हैं। सितारों को किन प्रकार की न्यैष्टिक प्रतिक्रियाओं से शक्ति प्राप्त होती है, यह जानकारी प्राप्त करने में न्यूट्रिनों का संदेशवाहक के रूप में उपयोग सम्भव हो सकता है।

जब कभी हम कुछ न्यैष्टिक शक्ति मुक्त करते हैं, तभी न्यूट्रिनो भी बिखरते हैं। न्यैष्टिक शक्ति के सभी उल्लेख-योग्य व्यावहारिक परिणामों में न्यूट्रिनों की अपनी एक असाधारण विशेषता है। वे न तो कभी लाभकारी होते हैं और न हानिकारक। उनके द्वारा किसी दुष्कांड की आशंका भी नहीं की गयी है।

१. ऐसा प्रतीत होता है कि इलेक्ट्रनों के साथ बिखरनेवाले न्यूट्रिनों की समता एक दायें पेंच की तरह होती है और पोजीट्रनों के साथ बिखरनेवालों की समता बायें पेंच की तरह।

अध्याय ४

रेडियो-सक्रिय क्षय का नियम

एक रेडियो-सक्रिय न्यष्टि उसे कहते हैं, जो अन्ततः विघटित होगी और कुछ शक्ति बिखेरेगी। परन्तु कब ?

यह सोचा जा सकता है कि एक रेडियो-सक्रिय न्यष्टि अपने जन्म के समय से ही वय प्राप्त करने लगती होगी और एक पूर्वनिश्चित काल-सीमा पार करने के बाद उसकी विघटन-क्रिया आरम्भ हो जाती होगी। एक निश्चयात्मक ब्रह्माण्ड में रेडियो-सक्रियता शायद इस तरह क्रियाशील हो। लेकिन वस्तुतः जो-कुछ एक रेडियो-सक्रिय न्यष्टि के साथ घटता है, वह कहीं अधिक दिलचस्प है।

रेडियो-सक्रिय न्यष्टि के विघटनशील होने की सम्भावना उसके जीवन-काल में किसी भी क्षण रहती है। यह सम्भावना उसकी वय से प्रभावित नहीं होती। न्यष्टि की वय चाहे जो हो, उसके किसी भी क्षण विघटन की सम्भावना सदा समान रूप से रहती है। यह कुछ ऐसा प्रतीत होता है, जैसे रूले (Roulette) का खेल खेला जा रहा हो। चक्का चलता रहता है और यदि उसकी बारी आ जाती है, तो उसी क्षण न्यष्टि विघटित हो जाती है। यदि बारी नहीं आती, तो चक्का फिर चलने लगता है। चक्के के प्रत्येक बार चलने के साथ बारी आ जाने की सम्भावना बनी रहती है। इस सम्भावना का सार-मूल्य प्रत्येक रेडियो-सक्रिय तत्व की एक विशेषता है। जितनी अधिक सम्भावना होगी, उतनी ही जल्दी न्यष्टि के विघटन की आशा की जायेगी। परन्तु यह आवश्यक नहीं है कि कोई न्यष्टि किसी खास समय पर अपेक्षित कार्य ही करेगी।

सम्भावना (या संयोग) का सिद्धान्त तभी अर्थ रखता है, जब उसका प्रयोग बार-बार हो। एक न्यष्टि-विशेष के अगले सेकंड में क्षय की सम्भावना एक प्रतिशत है, कहने का अर्थ यह है कि ऐसी रेडियो-सक्रिय न्यष्टियों की एक बड़ी संख्या (मान लीजिये, दस करोड़) का एक प्रतिशत (दस लाख) अगले सेकंड में क्षयमान होगा। परन्तु यह भविष्यवाणी करना सर्वथा असम्भव है कि उन न्यष्टियों में से कौन-कौन क्षयमान होंगी। एक न्यष्टि-विशेष, सम्भव

है, अविलम्ब क्षयमान हो जाये या उसके क्षय में एक लम्बा समय लगे। परन्तु उनका समूह निश्चित रूप से एक नियत समय में प्रत्याशित फल प्रकट करता है। (यही वह सिद्धान्त है, जिस पर बीमा-कम्पनियाँ कार्य करती हैं।)

इस परिस्थिति की सर्वोत्तम व्याख्या एक काल-प्रसार (Time span) के रूप में, जिसे रेडियो-सक्रिय तत्व का 'अर्द्धजीवन' (Half life) कहा जाता है, होती है। अर्द्धजीवन का तात्पर्य समय का वह परिमाण है, जिसमें समरूप रेडियो-सक्रिय न्यष्टियों की एक बड़ी संख्या का आधा भाग विघटित होता है। यह संख्या कितनी बड़ी है, इससे कोई अन्तर नहीं पड़ता – सिर्फ संख्या का बड़ा होना ही पर्याप्त है।

यदि संख्या पर्याप्त रूप से बड़ी नहीं होगी, तो क्षय की मात्रा इधर-उधर हो जायेगी – ५० प्रतिशत न्यष्टियों के बजाय ४० प्रतिशत या ६० प्रतिशत न्यष्टियाँ 'अर्द्धजीवन' में क्षयमान हो सकती हैं। वास्तव में, ४० से ६० प्रतिशत की सीमाएँ लगभग १०० न्यष्टियों के आदर्श परिमाण में चरितार्थ होती हैं। दस हजार न्यष्टियों के मामले में ये सीमाएँ ४९ से ५१ प्रतिशत के बीच संकुचित हो जायेंगी। साधारणतः रेडियो-सक्रिय न्यष्टियों की जिस प्रचलित संख्या से हमारा काम पड़ता है, वह है $१०^{२३}$ (१,००,००,००,००,००,००,००,००,००,००,०००)। उदाहरणस्वरूप, रेडियो-सक्रिय न्यष्टियों की यह संख्या एक औंस रेडियम में होती है। न्यष्टियों की इतनी बड़ी संख्या के मामले में, क्षय का परिमाण ५० प्रतिशत से इधर-उधर होने की सम्भावना बहुत कम होती है। इस प्रकार, हम एक ऐसे ब्रह्माण्ड में रहते हैं, जो विराट्‌ रूप में तो व्यवस्थित और नियमानुकूल प्रतीत होता है, पर अपने सूक्ष्म रूप में मान्य नियमों की उपेक्षा करता है और प्रकृति 'संयोग' का एक ऐसा खेल खेलती है, जो एकाकी विषयों में पूर्णतः अनायास और अनिश्चित होता है।

हम एक नकशा तैयार कर देखें कि किस तरह शेष बची रेडियो-सक्रिय न्यष्टियों की संख्या (N) काल (T) के अनुसार भिन्न-भिन्न होती है। यह नकशा बतलाता है कि प्रथम अर्द्धजीवन T में कुल रेडियो-सक्रिय न्यष्टियों का आधा भाग N क्षयमान होता है। फिर द्वितीय अर्द्धजीवन में शेष बची न्यष्टियों का अर्द्धांश क्षयमान होता है। इसी तरह यह क्रम चलता रहता है। काल T के बाद कुल रेडियो-सक्रिय न्यष्टियों का अर्द्धांश बच जाता है और काल 2T के बाद चतुर्थांश शेष रहता है। इसी तरह आगे भी होता है।

विभिन्न रेडियो-सक्रिय तत्वों के विभिन्न अर्द्धजीवन होते हैं। इनमें से अनेक का अर्द्धजीवन तो सेकंड का एक छोटा-सा हिस्सा होता है और कुछ का अरबों वर्ष। एन^{१६} क्षयमान होकर ओ^{१६} (साथ ही, एक-न्यूट्रिनो और एक इलेक्ट्रन भी) में परिणत होता है और उसका अर्द्धजीवन ८ सेकंड होता है। एक स्वतंत्र न्यूट्रन क्षयमान होकर एक प्रोटोन, एक इलेक्ट्रन और एक न्यूट्रिनो में रूपान्तरित होता है और इसका अर्द्धजीवन १३ मिनट का होता है। ९० वजनवाला स्ट्रानटियम (एस-आर ^{९०}) २८ वर्ष के अर्द्धजीवन-सहित बीटा-क्षय की प्रक्रिया में प्रविष्ट होता है। (यह एक ऐसा आइसोटोप है, जो प्रकृति में कहीं भी उपलब्ध नहीं है, परन्तु विघटन-प्रक्रिया में यह काफी परिमाण में पैदा होता है।) ४० वजनवाले पोटाशियम (के ^{४०}) का, जो साधारण पोटाशियम में ०·०१ प्रतिशत मात्रा में होता है, एक अरब वर्षों का अर्द्धजीवन होता है। यह सम्भवतः उसी समय से अस्तित्व में है, जिस समय प्रारम्भिक तत्वों का निर्माण हुआ था। गामा-क्षय के अर्द्धजीवन बीटा-क्षय के अर्द्धजीवनों की तुलना में कहीं छोटे होते हैं। ये सामान्यतः एक सेकंड के कुछ भाग होते हैं।

रेडियो-सक्रियता की विशिष्टता न्यष्टि से परित्यक्त कण की किस्म (अब तक के हमारे उदाहरण बीटा और गामा-कणों के रहे हैं), इस कण में निहित शक्ति और रेडियो-सक्रिय क्षय में लगे अर्द्धजीवन से सम्बन्धित होती है।

रेडियो-सक्रियता का प्राणियों पर क्या प्रभाव पड़ेगा, यह इन तीन विशिष्ट गुणों पर निर्भर करता है। चाहे रेडियो-सक्रिय न्यष्टियाँ एक परमाणविक विस्फोट में उत्पन्न हों या एक परमाणविक प्रतिकारी (Atomic reactor) में, सामान्यतः कुछ समय बीतने के बाद ही मनुष्यों की किसी आबादी पर इनका प्रभाव दृष्टिगोचर होगा। यदि रेडियो-सक्रिय तत्वों के अर्द्धजीवन की तुलना में यह बीतनेवाला समय अधिक होगा, तो अधिकांश न्यष्टियों का विघटन हो जायेगा और प्रभाव कम पड़ेगा। दूसरी ओर, यदि इस समय की तुलना में—साथ ही मनुष्य की आयु की तुलना में भी—अर्द्धजीवन अधिक होगा, तो विघटन की गति धीमी होगी और ऐसी स्थिति में भी प्रभाव कम ही पड़ेगा।

संक्षेप में, खतरनाक अर्द्धजीवन मध्यवर्ती होते हैं—न बहुत लम्बे, न बहुत छोटे। एस-आर ^{९०} इसका एक उदाहरण है।

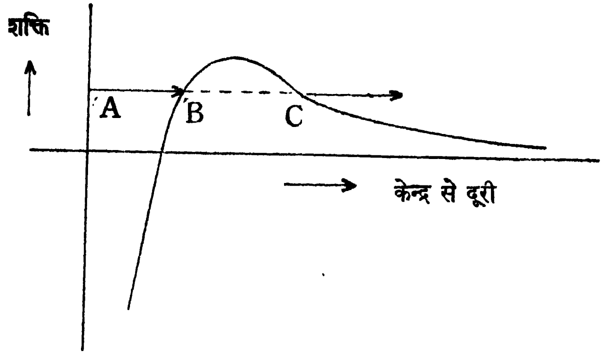
अध्याय ५

न्यष्टि का विघटन

एक परमाणविक न्यष्टि के अन्दर के धनात्मक विद्युत्-परिमाण आपस में एक-दूसरे का प्रतिसारण करते हैं। सर्वाधिक घने रूप से विद्युतीकृत न्यष्टियों में यह प्रतिसारण इतना अधिक हो जाता है कि न्यष्टि, शक्ति के एक बड़े परिमाण का परित्याग करते हुए, दो खंडों में विघटित हो जा सकती है। स्वतः होने-वाले न्यैष्टिक विघटन (Spontaneous nuclear fission) में ये दोनों खंड प्रायः आपस में बराबर होते हैं। परन्तु अल्फा-क्षय-प्रक्रिया में एक खंड (अल्फा-कण) दूसरे खंड से कहीं छोटा होता है।

एक अल्फा-कण में दो न्यूट्रन और दो प्रोटोन होते हैं। यह कण हेलियम-परमाणु की न्यष्टि के समरूप होता है। (हेलियम-परमाणु की न्यष्टि के लिए एच-ई^{४} का संकेत के रूप में व्यवहार होता है।) चूँकि दो न्यूट्रन और दो प्रोटोन एक साथ न्यूनतम शक्ति की अवस्था ग्रहण कर सकते हैं, इसलिए अल्फा-कण एक विशेष रूप से स्थायी न्यैष्टिक इकाई है। परिणामतः भारी न्यष्टियों में समय-समय पर दो न्यूट्रन और दो प्रोटोन संयुक्त होकर एक अल्फा-कण में परिणत हो जायेंगे, जो कि तत्पश्चात् निकल भागने की चेष्टा करेगा।

न्यष्टि से निकल भागने के प्रयत्न में अल्फा-कण को, अन्य न्यूट्रनों और प्रोटोनों के अल्पक्षेत्रीय न्यैष्टिक आकर्षण के कारण, काफी प्रतिरोध का सामना करना पड़ता। न्यष्टि छोड़ने के प्रयत्न में अल्फा-कण के समक्ष उपस्थित होनेवाले इस प्रतिरोध को सामान्यतः 'शक्ति-बाधा' (Energy barrier) के नाम से पुकारा जाता है। यदि अल्फा-कण कुछ और शक्ति ग्रहण कर ले, तो वह इस प्रतिरोध को पार कर न्यैष्टिक आकर्षण के क्षेत्र से बाहर जा सकता है। एक बार न्यष्टि से बाहर हो जाने – न्यैष्टिक आकर्षण के क्षेत्र से बाहर हो जाने – के बाद अल्फा-कण अपने दोनों प्रोटोनों और शेष न्यष्टि (Residual nucleus) के अन्य प्रोटोनों के बीच चलनेवाले घोर विद्युतीय प्रतिसार के कारण तीव्र गति से आगे की ओर बढ़ता जायेगा।



एक अल्फा-कण इस प्रकार न्यष्टि से बाहर भागता है। A से B तक यह अपनी गति को खोता हुआ आगे बढ़ता है। B पर पहुँचने पर इसकी गति शून्य हो जाती है और यह लगभग सदा ही पीछे मुड़ जाता है। थोड़ी-सी सम्भावना इस बात की भी रहती है कि यह शक्ति-बाधा B से बच कर C तक पहुँच जाये। C पर पहुँच जाने के बाद यह पीछे हटा दिया जाता है और इस प्रतिकार के फलस्वरूप निरंतर वृद्धिशील गति से आगे आगे बढ़ने लगता है।

निकल भागने के लिए अल्फा-कण को कुछ अतिरिक्त शक्ति मिलने की आवश्यकता पड़ती है। भौतिक विज्ञान के प्राचीन नियमों के अनुसार इसे अतिरिक्त शक्ति मिलने की कोई सम्भावना नहीं है और इसलिए इसका पलायन असम्भव है। किन्तु न्यूट्रनों और प्रोटोनों की गति को संचालित करनेवाले नव-आविष्कृत नियम (प्रमात्रा-यांत्रिकता के नियम) इतने कठोर नहीं हैं। वे शक्ति-बाधा को पार करने के लिए अल्फा-कण-द्वारा शक्ति 'कर्ज' लिये जाने की स्वीकृति देते हैं। निस्सन्देह, अल्फा-कण को अवश्य ही यह कर्ज वापस कर देना चाहिए। ऐसा वह आसानी से कर भी सकता है, क्योंकि शेष न्यष्टि के प्रतिसारण-क्षेत्र से इसके बाहर निकलते समय भारी परिमाण में विद्युत्-शक्ति मुक्त होती है। इस कर्ज पर कोई व्याज नहीं होता।

प्रकृति-द्वारा ऐसे शक्ति-ऋणों की स्वीकृति स्वतः नहीं प्राप्त होती। दो ऐसे कारण हैं, जो इस ऋण को असम्भव बना देते हैं। ये कारण हैं—परिमाण का बड़ा होना या अवधि का दीर्घ होना। ये प्रतिबन्ध उन कणों को प्रभावकारी ढंग से सीमाबद्ध कर देते हैं, जो शक्ति-ऋण की माँग कर सकते हैं। बड़े आकार

और वजन के पदार्थ यह माँग करने में असमर्थ होते हैं, परन्तु परमाणविक जगत् के छोटे कण प्रायः ही ऐसा ऋण लेते हैं।

अल्फा-क्षय के बाद अल्फा-कण-द्वारा जितनी अधिक शक्ति का वहन होगा उतनी ही कम शक्ति का वह, बाधा को पार करने के लिए, ऋण लेगा और उतनी ही तेजी से क्षय-क्रिया पूर्ण होने की आशा की जायेगी। अल्फा-कण की शक्ति के लिए क्षय इतना सूक्ष्मग्राह्य है कि एक दुगुनी शक्ति का वहन करनेवाले अल्फा-कण का १००० खरब-गुनी तेजी से उत्सर्ग होता है।

अल्फा-क्षय के अर्द्धजीवन एक सेकंड के एक अंश से लेकर अरबों वर्ष तक के होते हैं। किन्तु अल्फा-कण का न्यूनतम अर्द्धजीवन भी, न्यष्टि को पार करने में अल्फा-कण को जितना समय लगता है, उसकी तुलना में काफी बड़ा होता है। इसका अर्थ यह हुआ कि अल्फा-कण न्यष्टि से पलायन के लिए अनेक प्रयत्न करता है और तब कहीं इसे वस्तुतः सफलता मिलती है। प्राचीन विशिष्ट सिद्धान्त के अनुसार अल्फा-प्रक्रिया कभी नहीं होनी चाहिए और वस्तुतः यह बहुत कम सम्भावनाओं के बीच उपस्थित होती है।

केवल एक अल्फा-क्षय साधारणतः शेष न्यष्टि (Daughter nucleus) में स्थायित्व लाने के लिए एक पर्याप्त प्रक्रिया नहीं है। स्थायित्व-प्राप्ति के पूर्व रेडियो-सक्रिय क्षयों की एक सम्पूर्ण शृंखला की आवश्यकता होती है। अल्फा-कणों को उत्सर्ग करनेवाली अधिकांश न्यष्टियाँ इन रेडियो-सक्रिय क्षय-शृंखलाओं में से किसी एक से सम्बन्धित होती हैं।

सभी भारी न्यष्टियाँ, जिनमें अल्फा-क्षय उपस्थित होता है, बहुत अधिक अतिरिक्त न्यूट्रनों से सम्पन्न होती हैं। चूँकि अल्फा-कण कुल दो न्यूट्रनों और दो प्रोटोनों का वहन करता है, इसलिए शेष न्यष्टि में न्यूट्रनों और प्रोटोनों की संख्या का अनुपात बढ़ जाता है। इसका एक अस्थायित्वकारी प्रभाव होता है। (वस्तुतः हल्की न्यष्टियों में स्थायित्व के लिए यह आवश्यक होता है कि न्यूट्रनों और प्रोटोनों का अनुपात ऐक्य के अधिक निकट हो।) इसलिए शेष न्यष्टि का बीटा-सक्रिय होना, जिसमें एक न्यूट्रन एक प्रोटोन में (साथ ही, एक इलेक्ट्रन और न्यूट्रिनो में) परिणत होता है, स्वाभाविक है; ताकि प्रोटोनों की तुलना में न्यूट्रनों का अनुपात कम हो। इस प्रकार रेडियो-सक्रिय क्षयों की एक शृंखला उपस्थित हो सकती है, जो कि अल्फा और बीटा-परित्यागों (Alpha and beta-emissions) के बीच न्यूनाधिक रूप में क्रमशः परिवर्तनशील हो तथा साथ ही गामा-किरणों का भी कभी-कभी उत्सर्ग हो।

रेडियो-सक्रिय श्रृंखलाएँ चार हैं। इनमें से एक यूरेनियम (यू^{२३८}) के प्रचुर आइसोटोप के साथ आरम्भ होती है। यह आइसोटोप ८८ विद्युत्-परिमाण और २२६ वजनवाले रेडियम में परिणत होने के लिए कतिपय अल्फा और बीटा-क्षयों से होकर गुजरता है। संसार में जितना भी रेडियम है, वह इसी तरह इस श्रृंखला के पाँचवें क्षय के अवशिष्ट उत्पादन के रूप में पैदा हुआ है। इससे भी आगे कुछ बार क्षयमान होने पर स्थायी सीसा (वजन २०६) पैदा होता है और श्रृंखला समाप्त हो जाती है।

अन्य श्रृंखलाएँ भी यू^{२३८} श्रृंखला की ही तरह हैं, पर इतनी लम्बी नहीं। एक श्रृंखला दुर्लभ आइसोटोप यू^{२३५} से आरम्भ होती है; दूसरी श्रृंखला थोरियम आइसोटोप से, जिसका वजन २३२ होता है, आरम्भ होती है। ये दोनों श्रृंखलाएँ सीसा के स्थायी आइसोटोपों में पहुँच कर समाप्त हो जाती हैं। सभी मामलों में श्रृंखला के प्रथम क्षय का अर्द्धजीवन बड़ा लम्बा होता है। यू^{२३८} का अर्द्धकाल ४ अरब ५० करोड़ वर्ष होता है, यू^{२३५} का ७१ करोड़ वर्ष और थोरियम का १४ अरब वर्ष।

चौथी रेडियो-सक्रिय श्रृंखला का प्रयोगशाला में निर्माण हुआ है, पर वह प्रकृति में उपलब्ध नहीं है, क्योंकि उसके प्रथम आइसोटोप नेप्चुनियम का (Neptunium), जिसका वजन २३७ होता है, अर्द्धजीवन अति अल्प होता है। यह २० लाख वर्षों में क्षयमान होता है और इस श्रृंखला के अन्य सदस्यों का जीवन इससे भी अल्प काल का होता है। फलतः नेप्चुनियम-श्रृंखला का बहुत पहले क्षय हो गया, जब कि बाकी तीन श्रृंखलाएँ उस समय से बची चली आयी हैं, जब कि तत्वों का निर्माण हुआ था।

यह एक ध्यान देने योग्य बात है कि यू^{२३८} की तुलना में यू^{२३५} की प्रचुरता में कमी उसके अपेक्षाकृत अल्प अर्द्धजीवन से सम्बन्धित है। यह मान कर, कि ब्रह्माण्ड के आरम्भ के समय दोनों आइसोटोपों का लगभग समान परिमाण था (और ऐसा मानने का पर्याप्त कारण है), स्वभावतः ही यह आशा की जायेगी कि कुछ करोड़ वर्षों के बाद यू^{२३८} की तुलना में यू^{२३५} काफी कम परिमाण में शेष रहेगा। ७१ करोड़ वर्षों (यू^{२३५} का अर्द्ध-जीवन) के बाद यू^{२३५} न्यष्टियों की कुल संख्या का केवल अर्द्धांश ही शेष रहेगा। किन्तु यू^{२३८} न्यष्टियों की कुल संख्या का ९० प्रतिशत भाग शेष रहेगा, क्योंकि इसका अर्द्धजीवन ४ अरब ५० करोड़ वर्ष है। यू^{२३८} की तुलना में यू^{२३५} न्यष्टियों का जो अनुपात (१–१३९) इस समय

उपलब्ध है, उसे ध्यान में रख कर, रेडियो-सक्रिय क्षय के नियम के अनुसार, यह प्रकट होता है कि ६ अरब वर्ष पहले प्राकृतिक यूरेनियम में यू^{२३५} और यू^{२३८} समान् परिमाण में उपस्थित थे। ब्रह्माण्ड की आयु अब भी गम्भीर विवाद का विषय है। प्रत्येक वर्ष वैज्ञानिकों को यह एक अरब वर्ष और अधिक दीखती है। अतः इस समय तो ६ अरब वर्ष की आयु ब्रह्माण्ड के लिए बहुत अधिक नहीं समझी जाती।

प्राकृतिक रेडियो-सक्रियता मुख्यतः भारी तत्वों में प्रकट होती है, किन्तु कुछ हल्के तत्व भी हैं, जो प्राकृतिक रूप से रेडियो-सक्रिय हैं। इनमें से पोटाशियम^{४०} एक विशेष रूप से दिलचस्प तत्व है, क्योंकि या तो यह इलेक्ट्रन-परित्याग (Electron emission) से या इलेक्ट्रन-संचय (Electron capture) से क्षयमान होता है। ये प्रक्रियाएँ हैं—

पोटाशियम^{४०} $\rightarrow$ कैल्शियम^{४०} + इलेक्ट्रन + न्यूट्रिनो
(१ अरब १० करोड़ वर्ष)

और

पोटाशियम^{४०} + इलेक्ट्रन $\rightarrow$ आरगन^{४०} + न्यूट्रिनो
(११ अरब वर्ष)

कैल्शियम^{४०} और आरगन^{४०} दोनों ही स्थायी न्यष्टियाँ हैं। द्वितीय प्रतिक्रिया आरगन^{४०} से गामा-किरण के परित्याग के तुरन्त बाद आरम्भ होती है। पृथ्वी के वातावरण में उपलब्ध एक प्रतिशत आरगन लगभग सम्पूर्णतः द्वितीय प्रतिक्रिया से उत्पन्न हुआ है। ये रेडियो-सक्रियताएँ भी काफी दिलचस्प हैं, क्योंकि मानव-तंतु में पोटाशियम^{४०} काफी परिणाम में सदा उपस्थित रहता है।

आवर्त-प्रणाली (Periodic system) के भारी छोर पर सभी न्यष्टियाँ रेडियो-सक्रिय अल्फा-कण बिखेरनेवाली होती हैं। उदाहरणस्वरूप, यूरेनियम में स्थायी आइसोटोप नहीं होते; वे सब अल्फा-क्षय की प्रक्रिया में जाते हैं। परन्तु यूरेनियम के स्वतःक्षय का एक और प्रकार भी है, जो अल्फा-क्षय की तुलना में होता तो बहुत कम है, पर जिसका व्यावहारिक महत्व बहुत अधिक है।

विघटन-प्रक्रिया (Fission process) में भी, अल्फा-क्षय की भाँति, न्यष्टि दो खंडों में विभक्त हो जाती है। पर इन दोनों प्रक्रियाओं में प्रमुख अन्तर उनके खंडों के वजन को लेकर होता है। उदाहरण के लिए, यू^{२३८} के अल्फा-क्षय में एक खंड का वजन ४ होता है और दूसरे खंड का २३४। विघटन-प्रक्रिया में दोनों खंड लगभग बराबर दिखायी पड़ते हैं। उदाहरणस्वरूप,

एक खंड का वजन ९० हो सकता है और दूसरे का १४८।[1] इसी तरह वजन के दूसरे संयोग भी सम्भव हैं।

स्वतःविघटन की व्याख्या सारतः अल्फा-क्षय के ही समान है। परन्तु स्वतःविघटन एक कम सम्भाव्य प्रक्रिया है, क्योंकि अल्फा-क्षय की तुलना में अधिक मजबूती से इसके दोनों खंड न्यैष्टिक शक्तियों-द्वारा आपस में बँधे रहते हैं। अतः शक्ति-बाधा (Energy barrier) को पार करने के लिए इसे अवश्य ही अतिरिक्त शक्ति का ऋण लेना पड़ेगा और वह भी एक लम्बी अवधि के लिए।

स्वतःविघटन और अल्फा-क्षय की तुलनात्मक सम्भावनाएँ निम्नलिखित तथ्य से प्रकट हो जाती हैं। एक घंटे में एक ग्राम यू^{२३८} में ४५० लाख अल्फा-क्षय की क्रियाएँ होती हैं, जब कि स्वतःविघटन की क्रियाएँ केवल २५।

एक बार शक्ति-बाधा को पार कर लेने के बाद, अल्फा-क्षय या स्वतः-विघटन में त्यक्त शक्ति दोनों खंडों के विद्युत्-परिमाणों के अनुपात में होती है। अल्फा-क्षय में, विद्युत्-परिमाणों का उत्पादन होता है २×९०=१८०; स्वतः-विघटन में यह उत्पादन होगा ४०×५२=२,०८०। इस प्रकार अल्फा-द्वारा मुक्त शक्ति की तुलना में विघटन-द्वारा मुक्त शक्ति १० से १५ गुनी अधिक प्रतीत होती है। वास्तव में, विघटन-द्वारा इससे भी अधिक शक्ति मुक्त होती है — अल्फा-द्वारा मुक्त शक्ति की तुलना में ४०-५० गुनी अधिक। इतने बड़े परिमाण में शक्ति की मुक्ति, परमाणविक शक्ति के व्यावहारिक उपयोग की दृष्टि से, विघटन-प्रक्रिया की एक अत्यंत महत्वपूर्ण विशेषता है।

आवर्त-प्रणाली के एक छोर पर होने के कारण, अधिकाधिक स्थायित्व प्राप्त करने के लिए यूरेनियम को, प्रोटोनों की तुलना में, न्यूट्रनों के एक बड़े अनुपात की जरूरत होती है। परन्तु विघटन के खंड तत्व-प्रणाली के मध्य में रहते हैं; अतः उन्हें स्थायित्व प्राप्त करने के लिए प्रोटोनों के मुकाबले न्यूट्रन के अपेक्षाकृत छोटे अनुपात की आवश्यकता होती है। इसके दो परिणाम निकलते हैं।

एक तो यह कि स्वयं खंडों के ही अस्थायी होने की अधिक सम्भावना रहेगी। न्यूट्रनों और प्रोटोनों के स्थायी संयोग की स्थिति तक पहुँचने से पहले उन्हें

१. वस्तुतः दोनों खंडों का सम्मिलित वजन शायद ही २३८ होता है, क्योंकि इस प्रक्रिया में एक या अधिक न्यूट्रन बिखर जाते हैं और उनके साथ मूल राशि का कुछ अंश भी निकल जाता है।

कई बार लगातार बीटा-क्षय (इलेक्ट्रन-परित्याग) की परिस्थिति से गुजरना होगा। विघटनोत्पादनों (Fission products) की इस रेडियो-सक्रियता में विघटन-मूलक परमाणविक शक्ति के व्यावहारिक उपयोग के लिए सम्भावित आशंकाएँ छिपी हैं। इस पुस्तक के आगे के अध्यायों में हम विशेष रूप से परमाणविक विस्फोटों से उत्पन्न रेडियो-सक्रिय विघटनोत्पादनों की वर्षा और परमाणविक प्रतिकारियों (Atomic reactors) के संचालन और संरक्षण के फलस्वरूप उत्पन्न खतरों पर विचार करेंगे।

न्यूट्रनों की अधिकता का एक दूसरा फल यह है कि विघटन-प्रक्रिया के तुरन्त बाद खंडों से न्यूट्रन उबल कर बाहर आ जा सकते हैं। ऐसा इसलिए हो सकता है कि खंडों के अन्दर विघटन-प्रक्रिया के कारण काफी अव्यवस्थित आन्तरिक गति पैदा हो जाती है और इन खंडों का अपने न्यूट्रनों पर विशेष तौर से प्रबल नियंत्रण नहीं रहता। इन प्रमुक्त न्यूट्रनों के व्यावहारिक मूल्य के विषय में हम आगे के एक अध्याय में भलीभाँति चर्चा करेंगे। फिलहाल हम इतना ही कहते हैं कि ये न्यूट्रन उस यांत्रिकता को जन्म देते हैं, जिससे एक सम्बद्ध प्रतिक्रिया सम्भव हो पाती है।

प्रकृति में ९२ से अधिक विद्युत्-परिमाणवाले तत्वों का न पाया जाना स्वतः-विघटन और अल्फा-क्षय के कारण ही है। इन तत्वों का आरम्भ में निश्चय ही निर्माण हुआ था, परन्तु ये कभी के क्षयमान हो चुके हैं।

स्वतः न्यैष्टिक विघटन का एक दिलचस्प उदाहरण है कैलिफोर्नियम^{२५४} (Californium ^{254}), जिसका विद्युत्-परिमाण ९८ होता है और अर्द्धजीवन ५५ दिन। कतिपय नक्षत्रीय विस्फोटों में, जिन्हे 'सुपर-नोवे' (Super-novae) कहते हैं, यह आइसोटोप काफी बड़े परिमाण में पैदा होता है। हजार वर्ष में एक बार, अरबों सितारों में से एक सितारा, अकथनीय चमक के साथ, प्रज्वलित हो उठता है। कुछ सप्ताहों तक यह सितारा अरबों साधारण सितारों की संयुक्त शक्ति और चमक के साथ अकेला चमकता रहता है और उसके बाद धीरे-धीरे लुप्त हो जाता है। एक ऐसा 'नया' सितारा (नोवा), जिसमें विकिरण की सर्वाधिक शक्ति होती है, 'सुपर-नोवा' (Super-nova) कहलाता है।

हमारा विश्वास है कि एक 'सुपर-नोवा' में कई न्यैष्टिक प्रतिक्रियाएँ घटित होती हैं। ऐसा देखा गया है कि प्रकाश के प्रारम्भिक विस्फुरण के कुछ सप्ताह बाद, प्रकाश की तीव्रता एक वर्ष या इसके आसपास तक, प्रत्येक ५५ दिनों

पर दो के भाज्य से कम होती जाती है। इस अवधि में सितारे में उत्पन्न शक्ति का कारण यदि कैलिफोर्नियम^{२५४} का स्वतः विघटन होता, तो भी ठीक यही अपेक्षा की जाती। प्राकृतिक रूप से रेडियो-सक्रिय तत्वों के साथ क्या घटता है, उसका यह एक अच्छा उदाहरण है। इनमें से पृथ्वी पर सिर्फ वही तत्व बच गये हैं, जिनके अर्द्धजीवन सर्वाधिक दीर्घ थे—यथा, यूरेनियम, थोरियम और पोटाशियम।

अध्याय ६

न्यष्टियों के बीच परस्पर-प्रतिक्रियाएँ

रसायनशास्त्रियों (Alchemists) ने कृत्रिम रूप से एक तत्व को दूसरे में रूपान्तरित करने का प्रयास किया। उन्होंने ताप और रासायनिक द्रव्यों का उपयोग किया, यहाँ तक कि जादू-टोनों का भी। पर वे असफल रहे। उनका सरलतम तरीका—रूपान्तर के लिए तत्व को गर्म करना—दरअसल सही था। पर दिक्कत यह थी कि उनके तापमान बहुत न्यून थे—इतने न्यून कि उनसे दस हजार-गुना से भी अधिक डिग्री तापमान की आवश्यकता थी। दरअसल, इसके लिए करोड़ों डिग्री तापमान चाहिए।

इतने अधिक तापमान में दो न्यष्टियाँ अपने भीतर वैद्युतीय प्रतिसारण अनुभव करने के बावजूद समय-समय पर एक-दूसरे के निकट पहुँच सकती हैं। कभी-कभी तो वे एक-दूसरे के इतने निकट आ जा सकती हैं कि उनमें न्यैष्टिक प्रतिक्रिया सम्भव हो सके। यदि न्यैष्टिक विद्युत्-परिमाण न्यून होता है, तो ऐसा, निस्संदेह, बिना अधिक कठिनाई के हो जाता है। उद्जन-न्यष्टियाँ, जिनका विद्युत्-परिमाण १ होता है, ऐसी प्रतिक्रियाओं में सर्वाधिक सरलता से हिस्सा लेती हैं।

सितारों के अन्तःभाग में तापमान १ करोड़ से १० करोड़ डिग्री तक होता है और वहाँ न्यैष्टिक प्रतिक्रियाएँ होती हैं। सितारों में शक्ति-उत्पादन के लिए जिम्मेदार प्रतिक्रिया है—

$$४\ \text{एच}^{१} \rightarrow \text{एच-ई}^{४} + \text{शक्ति}$$

चार प्रोटोन मिल कर, शक्ति-परित्याग के साथ, अल्फा-कण का निर्माण करते हैं। वस्तुतः यह प्रतिक्रिया एक साथ ही सम्पन्न नहीं होती—इसके लिए कई स्तरों की अवश्यकता होती है। अल्फा-कण के बहुत स्थायी होने के कारण यह स्वभावतः ही आशा की जाती है कि शक्ति का परित्याग होगा। ऐसी कोई भी प्रक्रिया, जिसमें हल्की न्यष्टियाँ आपस में मिल कर, शक्ति-परित्याग के साथ, एक भारी न्यष्टि का निर्माण करती हैं, 'सन्धि' (Fusion) कहलाती है।

सितारों में जो विशेष सन्धि-प्रक्रिया कार्यरत होती है, वह कई रूपों में शक्ति का परित्याग करती है—जैसे, पोजीट्रन, न्यूट्रिनो, विद्युत्-चुम्बकीय विकिरण और प्रतिकारी कणों की गति। पोजीट्रन भी प्रतिक्रिया के अतिरिक्त विद्युत्-परिमाण को साथ ले जाते हैं।

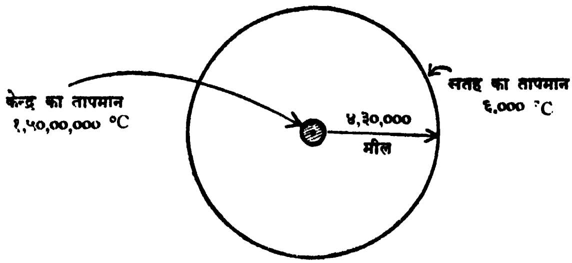
न्यूट्रिनो बिना परस्पर-क्रिया के सितारों से निकलते हैं और अपनी शक्ति के साथ बाह्य दिक् में आ जाते हैं; फिर सम्भवतः वे कभी पदार्थीय सृष्टि के सम्पर्क में नहीं आते। सन्धि-प्रक्रिया से उत्पन्न शक्ति का शेषांश सितारे के अन्तःभाग में ही रह जाता है, जो कि आगे भी सन्धि-प्रक्रिया के चलते रहने के योग्य गर्म रहता है। इस प्रकार की प्रतिक्रिया के लिए 'ऊष्म-न्यैष्टिक' (Thermo-nuclear) नाम ठीक ही प्रयुक्त किया जाता है।

नियंत्रित ऊष्म-न्यैष्टिक प्रतिक्रिया को सम्भव करने के लिए इन दिनों कई कल्पनाशील वैज्ञानिक काफी प्रयत्न कर रहे हैं। इसका मुख्य कारण यह है कि अच्छे ऊष्म-न्यैष्टिक ईंधन (Thermo-nuclear fuels)—जैसे ड्युटिरियम (एच^{2}), प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हैं और सस्ते भी हैं। संसार के महासागरों में ड्यटिरियम इतनी बड़ी मात्रा में उपस्थित है कि मनुष्य के लिए आवश्यक शक्ति की पूर्ति लाखों वर्षों तक मजे में हो सकती है। किन्तु ऐसी प्रतिक्रिया के लिए एक प्रतिबाधक (Container) की खोज की कठिनाई अवश्य है।

नक्षत्रीय अवस्थाओं में भी सन्धिमूलक प्रतिक्रियाओं (Fusion reactions) की दर बहुत अधिक नहीं है। केवल एक प्रतिशत न्यष्टियों की प्रतिक्रिया के लिए लगभग एक अरब वर्षों की आवश्यकता होती है। फलतः अल्प अवधि में शक्ति का बड़ा परिमाण पैदा करने के लिए सितारों से भी अधिक ऊँचे तापमान की जरूरत पड़ती है। किन्तु अब तक किसी भी ऐसे पदार्थ की जानकारी नहीं मिल सकी है, जो कुछ हजार डिग्री सेंटीग्रेड से अधिक तापमान

बर्दाश्त कर सके। एक सुझाव यह है कि ज्वलंत ईंधन को, चुम्बकीय क्षेत्रों के सहारे, पदार्थीय दीवारों से अलग रखा जाये।

क्या ऊष्म-न्यैष्टिक प्रतिक्रियाओं के लिए आवश्यक अत्यधिक तापमान के बिना भी, न्यष्टियों के प्रतिक्रिया-रत होने का कोई मार्ग है? वस्तुतः दो न्यैष्टिक कणों को इतने निकट लाने के लिए प्रयत्न किया जा रहा है कि न्यैष्टिक शक्तियाँ आपस में ही प्रतिक्रिया में संलग्न हो सकें। कोई



सूरज का अन्तःभाग। ऊष्म-न्यैष्टिक प्रतिक्रियाएँ मुख्यतः अधिक गर्म और घने केन्द्रीय क्षेत्र में होती हैं। इस क्षेत्र की त्रिज्या प्रायः २० हजार मील होती है और इसका घनत्व पानी के घनत्व की तुलना में लगभग ५०-गुना अधिक होता है।

कारण नहीं है कि एक ठंडे लक्ष्य-पदार्थ का प्रयोग नहीं किया जाये, जो कि शक्तिशाली न्यैष्टिक प्रक्षेपकों (Projectiles) – जैसे प्रोटोन और अल्फा-कण – के द्वारा बाहर से प्रक्षेपित किये जायें। यदि प्रक्षेपक पर्याप्त शक्तिशाली हुए, तो वे लक्ष्य न्यष्टियों के वैद्युत्-प्रतिसारण को पार कर वस्तुतः उनमें प्रविष्ट हो सकते हैं। इस प्रकार प्रस्तुत 'मिश्रित' (Compound) न्यष्टियाँ या तो अस्थायी होंगी और तत्काल विघटित हो जायेंगी, अथवा प्रायः स्थायी (यानी रेडियो-सक्रिय) होंगी और कुछ काल बाद विघटित होंगी। इन दोनों ही अवस्थाओं में प्रतिक्रिया के अन्तर्गत नये तत्वों की न्यष्टियों का सम्भवतः निर्माण होगा। यह प्रणाली लगती तो सीधी-सादी है, पर इसकी अपनी कठिनाइयाँ हैं।

मुख्य कठिनाई यह है कि लक्ष्य के रूप में न्यष्टि बहुत सूक्ष्म होती है। इसका क्षेत्र सम्पूर्ण परमाणु के क्षेत्र की तुलना में लगभग १० करोड़-गुना कम होता है। यदि पदार्थ के एक खंड पर कोई शक्तिशाली कण प्रक्षेपित किया जाये, तो संयोग ही यह निश्चित करेगा कि कण न्यष्टि की ओर उन्मुख है अथवा नहीं। पर

यह निश्चित है कि यदि कण-द्वारा एक परमाणु की न्यष्टि पर आघात न हो, तो भी यह सम्भावना रहेगी कि वह अपने मार्ग में पड़ने वाले अन्य परमाणुओं की न्यष्टियों पर आघात करे। पर ऐसी सम्भावनाएँ उसके लिए बहुत-सारी नहीं रहतीं, क्योंकि विद्युत्-सम्पन्न होने के कारण वह हर क्षण उन परमाणविक इलेक्ट्रनों के प्रति परस्पर-क्रियारत होता है, जो क्रमशः शक्ति ग्रहण करते हैं और कण को धीमा होने के लिए बाध्य करते है

ज्यो-ज्यों कण धीमा होता है, त्यो-त्यों एक न्यष्टि से उसके टकराने की—यदि वह किसी न्यष्टि की ओर सीधा बढ़ रहा हो, तो भी—सम्भावना कम होती जाती है। इसका कारण उसके विद्युत्-तत्वों और न्यष्टि के विद्युत्-तत्वों क परस्पर-प्रतिसारण है। यदि कण में पर्याप्त गति नहीं होगी, तो वह इस प्रतिसारण को पार नही कर सकेगा।

विद्युत्-सम्पन्न कणों को विशाल विद्युत्-क्षेत्रों की ओर गतिमान करा आवश्यक गति प्राप्त करायी जा सकती है। यदि विद्युत् की एक इकाई एक वाल्ट के ठोस अन्तर से होकर गुजरे, तो उसे एक इलेक्ट्रन-वाल्ट शक्ति प्राप्त होगी। न्यैष्टिक प्रक्षेपण के लिए कई लाख इलेक्ट्रन-वाल्ट की आवश्यकता होती है, जो कि 'साइक्लोट्रान' (Cyclotron)-जैसे परमाणु-भंजक यंत्रों (Atom-smashing machines) से प्राप्त हो सकती है।

इतनी अधिक शक्ति पाने पर भी वस्तुतः बहुत थोड़े न्यैष्टिक प्रक्षेपक लक्ष्य न्यष्टि की ओर बढ़ने का मार्ग पाते हैं। उनमें से अधिकांश इलेक्ट्रनों-द्वारा धीमे बना दिये जाते हैं—उनकी शक्ति लक्ष्य पदार्थ को उत्तप्त करने में नष्ट हो जाती है। सम्भवतः दस लाख में से एक ही प्रक्षेपक न्यैष्टिक प्रतिक्रिया सम्पन्न कराने में सफल होगा।

यदि न्यैष्टिक अभिप्रेरक यंत्रों (Nuclear accelerating machines) का काम सस्ती शक्ति पैदा करना होता, तो वे अधिक महत्व के नहीं साबित होते। एक न्यैष्टिक प्रतिक्रिया में सामान्यतः ५० लाख से २ करोड़ इलेक्ट्रन-वाल्ट तक शक्ति पैदा होती है। किन्तु यह प्रतिक्रिया सम्पन्न कराने के लिए लाखों कणों को लाखों इलेक्ट्रन-वाल्ट शक्ति प्राप्त करानी होगी और कुल लागत शक्ति का एक बहुत छोटा भाग पुनःप्राप्ति और उपयोग के योग्य होगा।

दूसरी ओर, वैज्ञानिक आविष्कार के हेतु एक यंत्र के रूप में, परमाणु-भंजकों (Atom-smashers) का बहुत महत्व है। लाखों में से इसी एक उपलब्धि ने न्यैष्टिक भौतिक विज्ञान के बारे में हमें इतनी जानकारी प्रदान की है।

पर कण-प्रहार-द्वारा न्यैष्टिक प्रतिक्रियाओं की उपलब्धि वस्तुतः मानव-निर्मित अभिप्रेरक यंत्रों के आविष्कार के लिए रुकी नहीं रही। शक्तिशाली अल्फा-कण भारी तत्वों के रेडियो-सक्रिय क्षय से प्राप्त होते हैं। सन् १९१९ में अर्नेस्ट रदरफोर्ड ने ऐसे रेडियो-सक्रिय तत्वों का अल्फा-कणों के स्रोत के रूप में उपयोग किया। अल्फा-कणों का सामान्य नाइट्रोजन पर प्रहार किया गया और यह प्रतिक्रिया उत्पन्न हुई—

$$\underset{\left(\begin{matrix}\text{२ प्रोटोन}\\ \text{२ न्यूट्रन}\end{matrix}\right)}{\text{एच-ई}^{४}} + \underset{\left(\begin{matrix}\text{७ प्रोटोन}\\ \text{७ न्यूट्रन}\end{matrix}\right)}{\text{एन}^{१४}} \longrightarrow \underset{\left(\begin{matrix}\text{८ प्रोटोन}\\ \text{९ न्यूट्रन}\end{matrix}\right)}{\text{ओ}^{१७}} + \text{प्रोटोन}$$

अर्थात् एक अल्फा-कण में नाइट्रोजन^{१४} न्यष्टि के संयोग से जो प्रतिक्रिया होती है, वह आक्सीजन^{१७} (स्थायी) न्यष्टि और एक प्रोटोन को जन्म देती है। आक्सीजन^{१७} न्यष्टि में ८ प्रोटोन और ९ न्यूट्रन होते हैं। आक्सीजन जिस साधारण रूप में प्रचुर परिमाण में उपलब्ध है, उसमें ८ प्रोटोन और ८ न्यूट्रन होते हैं। प्राकृतिक आक्सीजन में आक्सीजन^{१७} बहुत अल्प परिमाण में होता है।

तदुपरान्त सन् १९३४ में, आइरेन क्यूरी जोलियट (रेडियम की आविष्कर्तृ मैडम क्यूरी की पुत्री) और उसके पति फ्रेडरिक जोलियट ने प्रथम बार कृत्रिम रेडियो-सक्रिय न्यष्टियों के निर्माण के लिए प्राकृतिक रूप में उपलब्ध अल्फा-कणों का उपयोग किया। इसकी प्रतिक्रिया यह हुई—

$$\underset{\left(\begin{matrix}\text{२ प्रोटोन}\\ \text{२ न्यूट्रन}\end{matrix}\right)}{\text{एच-ई}^{४}} + \underset{\left(\begin{matrix}\text{१३ प्रोटोन}\\ \text{१४ न्यूट्रन}\end{matrix}\right)}{\text{एल्युमिनियम}^{२७}} \longrightarrow \underset{\left(\begin{matrix}\text{१५ प्रोटोन}\\ \text{१५ न्यूट्रन}\end{matrix}\right)}{\text{फास्फोरस}^{३०}} + \text{न्यूट्रन}$$

फास्फोरस^{३०} एक अस्थायी न्यष्टि है और सिलिकन^{३०} (जो कि स्थायी है) में परिणत होने के लिए एक बीटा-किरण (एक पोजीट्रन) का परित्याग करती है। इस क्षय का अर्द्धजीवन २·५ मिनट है। जोलियट-दम्पति की प्रतिक्रिया वह पहली घटना थी, जिसमें मनुष्य ने रेडियो-सक्रियता उत्पन्न की और उसे जाना। वस्तुतः साइक्लोट्रान पिछले दो वर्षों से एक बड़े परिमाण में रेडियो-सक्रियता पैदा कर रहे थे,:पर भौतिक विज्ञानवेत्ता इस तथ्य से अनभिज्ञ थे।

यह एक दिलचस्प बात है कि प्रकृति ने भी हमें एक परमाणु-भंजक यंत्र प्रदान किया है और यह यंत्र यथार्थतः मनुष्य-निर्मित किसी भी यंत्र से अधिक शक्ति पैदा करता है। यह यंत्र अंतःनक्षत्रीय दिक् के अस्थिर और उग्र चुम्बकीय

क्षेत्र के सिद्धांत के अनुसार कार्यरत होता है। ब्रह्माण्डीय कण (Cosmic particles)–मुख्यतः प्रोटोन, पर कुछ अल्फा-कण और भारी न्यष्टियाँ भी–इन परिवर्तनशील चुम्बकीय क्षेत्रों-द्वारा अभिप्रेरित होते हैं और समय-समय पर पृथ्वी के वातावरण में प्रविष्ट होते हैं। इन ब्रह्माण्डीय कणों की शक्ति बहुत अधिक होती है–अरबों इलेक्ट्रन-वाल्ट से लेकर उसके लाखों-गुना अधिक तक।

जब एक ब्रह्माण्डीय कण पृथ्वी के वातावरण में प्रविष्ट होता है, तब किसी नाइट्रोजन या आक्सीजन की न्यष्टि से टकराये बिना अधिक आगे नहीं जा पाता। इस न्यैष्टिक घटना के फलस्वरूप, अब तक जितने मौलिक कणों का उल्लेख हुआ है, वे सब तथा कुछ अन्य कण, जिन्हें 'मेसन' (Meson) कहते हैं, प्रकट होते हैं। मेसन ऐसे कण होते हैं, जो विद्युत्-सम्पन्न भी हो सकते हैं और विद्युत् से अप्रभावित भी। इनका वजन एक इलेक्ट्रन की तुलना में कई सौ-गुना अधिक होता है। इन कणों में से कुछ के बारे में ऐसा विश्वास किया जाता है कि वे न्यष्टि को संयुक्त रखनेवाली शक्तियों से सम्बद्ध होते हैं।

इस टक्कर से उद्भूत न्यैष्टिक भग्नावशेष (Nuclear debris) स्वयं ही काफी शक्ति-सम्पन्न होते हैं और आगे भी नाइट्रोजन और आक्सीजन-न्यष्टियों को भंग करने में समर्थ होते हैं। अतः अविलम्ब ही इलेक्ट्रनों, पोजीट्रनों, मेसनों, न्यूट्रनों, प्रोटोनों और विद्युत्-चुम्बकीय विकिरण का एक प्रपात-सा तैयार हो जाता है, जो पृथ्वी की ओर बढ़ता है।

लगभग हर सेकण्ड में पृथ्वी के वातावरण का प्रत्येक वर्ग इंच क्षेत्र बाह्य दिक् से एक ऐसा शक्तिशाली कण प्राप्त करता है। पूर्वोक्त प्रवाह के साथ पृथ्वी की सतह पर प्रभेदक विकिरण (Radiations) भी आते है। अतः सभी जीवनधारियों के लिए विकिरण की यह पृष्ठभूमि सदा उपस्थित रहती है। यह भी एक महत्वपूर्ण तथ्य है कि हवा से गुजरने के क्रम में इस विकिरण का घनत्व घट जाता है और डेनवर और लिमा के निवासी लास एंजिल्स या न्यूयार्क के निवासियों की तुलना में अधिक ब्रह्माण्डीय विकिरण प्राप्त करते हैं।

वातावरण में प्राथमिक ब्रह्माण्डीय कणों की टक्कर से निर्मित कुछ न्यूट्रन नाइट्रोजन की न्यष्टियों से टकरा सकते हैं। जब ऐसा होता है, तब यह प्रतिक्रिया उत्पन्न होती है—

$$\underset{\left(\begin{array}{l}\text{७ प्रोटोन}\\ \text{७ न्यूट्रन}\end{array}\right)}{\text{नाइट्रोजन}^{१४}} + \text{न्यूट्रन} \rightarrow \underset{\left(\begin{array}{l}\text{६ प्रोटोन}\\ \text{८ न्यूट्रन}\end{array}\right)}{\text{कार्बन}^{१४}} + \text{प्रोटोन}$$

कार्बन[१४] रेडियो-सक्रिय इलेक्ट्रन का परित्याग करता है और इसका अर्द्ध-जीवन ५,६०० वर्षों का होता है। यह अर्द्धजीवन काफी दीर्घ है और इसके अनुसार, आज संसार में उपलब्ध अधिकांश कार्बन[१४] का निर्माण सम्भवतः १० से २० हजार वर्ष पहले हुआ होगा। बिलर्ड लिब्बी ने इस प्रक्रिया का बहुत ही सावधानीपूर्ण और परिमाणात्मक ढंग से अध्ययन किया; जीवित प्राणियों में वातावरण से रेडियो-सक्रिय कार्बन के प्रवेश का इतिहास प्रस्तुत किया और ऐतिहासिक अवशेषों में निहित कार्बन[१४] को माप कर पुरातत्व-विद्या की एक सम्पूर्ण नयी शाखा का उद्घाटन किया।

जीवित प्राणी हवा के कार्बन (कार्बन डाइ-आक्साइड के रूप में) में साँस लेते हैं। इस कार्बन का अधिकांश साधारण स्थायी कार्बन[१२] होता है; इसका एक बहुत छोटा अंश ही कार्बन[१४] होता है। जीवनधारी इन दोनों आइसोटोपों के अंतर को अनुभव नहीं कर पाते और वातावरण में उपस्थित कार्बन[१२] के अनुपात में कार्बन[१४] को ग्रहण करते है। जीवनधारी के सम्पूर्ण जीवन-काल में यह अनुपात बना रहता है; किन्तु जब वह मर जाता है और नया कार्बन संगृहीत नहीं होता, तब कार्बन[१४] न्यष्टियों के क्रमशः विघटन के कारण यह अनुपात घटने लगता है। अस्थि-अवशेषों और पुरातत्व की अन्य सामग्रियों में कार्बन[१२] के मुकाबले कार्बन[१४] के अनुपात को देख कर उस तिथि का हिसाब लगाया जा सकता है, जब उसकी मृत्यु हुई होगी। इसी प्रणाली से प्राचीन मिस्री 'ममियों' (Mummies) की आयु का अनुमान लगाया गया है और यह पाया गया है कि कुछ 'सिकोइया' (एक विशाल वृक्ष) की लकड़ियाँ डेढ़ हजार वर्षों से भी अधिक पुरानी हैं। विगत हिम-क्षेत्र के प्रसार के समय काल-कवलित वृक्षों में उपलब्ध कार्बन[१४] को माप कर और विगत हिम-युग के प्राणियों के अवशेषों का अध्ययन करके यह बतलाना सम्भव हो सका है कि उक्त हिम-युग का अस्तित्व आज से दस हजार वर्ष पहले ही था — २० हजार वर्ष पहले नहीं, जैसा कि पहले विश्वास किया जाता था। इस प्रकार, कार्बन[१४] के आधार पर तिथि-निर्धारण ने समय की उस गति के नियम में हमारे अनुमानों का पूर्णतः संशोधन किया है, जिससे पृथ्वी पर सर्वाधिक जंगली अवस्थाओं से इतिहास-उल्लिखित साम्राज्यों का आविर्भाव हुआ है। इस तर्क का एक विवेचनात्मक अंग यह है कि समान तत्व के आइसोटोप रासायनिक दृष्टि से भी अभिन्न होते हैं।

नाइट्रोजन पर न्यूट्रनों के आघात के फलस्वरूप एक दूसरी प्रतिक्रिया यह पैदा हो सकती है—

$$\text{एन}^{14} + \text{न्यूट्रन} \longrightarrow \text{कार्बन}^{12} + \text{एच}^{3}$$

(७ प्रोटोन)	(६ प्रोटोन)	(१ प्रोटोन)
(७ न्यूट्रन)	(६ न्यूट्रन)	(२ न्यूट्रन)

एच^3; ट्राइटन भी रेडियो-सक्रिय है और अपने को एच-ई^3 (२ प्रोटोन और १ न्यूट्रन) में रूपान्तरित करने के लिए, जिसका अर्द्धजीवन १२·२५ वर्षों का होता है, बीटा-क्षय की प्रक्रिया अपनाता है। पुरानी वस्तुओं के तिथि-निर्धारण में ट्राइटनों का भी प्रयोग हो सकता है–उदाहरणस्वरूप, पुरानी शराब। शराब के बोतल में बंद कर दिये जाने के बाद उसके जल की पुनःपूर्ति ब्रह्माण्डीय किरणवाले टाइट्रनों से नहीं हो सकती। अतः हर १२·२५ वर्षों के बाद आधे ट्राइटन लुप्त हो जाते हैं।

यूट्रन-प्रहार से उद्भूत न्यैट्रिक प्रतिक्रियाओं के दो उदाहरण यहाँ हमारे समक्ष हैं। रसायनशास्त्रियों के लिए न्यैष्टिक प्रक्षेपकों के रूप में विद्युत्-सम्पन्न कणों की असुविधाओं को ध्यान में रखते हुए यह निश्चय ही प्रतीत होगा कि इस कार्य के लिए न्यूट्रन आदर्श वस्तु हैं। चूँकि वे विद्युत्हीन होते हैं, इसलिए न तो वे न्यष्टियों-द्वारा वैद्युत् रूप से पीछे ढकेले जाते हैंऔर न इलेक्ट्रनों के साथ शक्ति-क्षयकारी टक्करों से निरंतर शिथिल पड़ते हैं। पदार्थ के एक बड़े टुकड़े में विचरण करनेवाला लगभग हर न्यूट्रन निश्चित रूप से एक न्यष्टि से टकराता है।[1] न्यूट्रन आदर्श न्यैष्टिक प्रक्षेपक हैं। इनके साथ दिक्कत सिर्फ यह है कि ये सहज-सुलभ नहीं हैं।

उदजन और हेलियम-परमाणुओं की न्यष्टियों की भाँति प्रोटोन और अल्फा-कण प्रकृति में बहुतायत से उपलब्ध हैं। परन्तु न्यूट्रन प्रकृति में उपलब्ध नहीं हैं। अतीत में विद्युत्-सम्पन्न कणों-द्वारा आरम्भ की गयीं न्यैष्टिक प्रतिक्रियाओं में उनका जन्म हुआ था। उदाहरणस्वरूप—

$$\text{एच-ई}^{4} + \text{बेरिलियम}^{9} \longrightarrow \text{सी}^{12} + \text{न्यूट्रन}$$

(२ प्रोटोन, २ न्यूट्रन)	(४ प्रोटोन, ५ न्यूट्रन)	(६ प्रोटोन, ६ न्यूट्रन)

1. केवल बहुत थोड़े दुर्भाग्यशाली न्यूट्रन पहले ही बीटा-क्षय के शिकार होते हैं।

लेकिन अब हमारे सामने विद्युत्धारी कणों (Charged particles) से सम्बन्धित एक कठिनाई भी है। दस लाख अल्फा-कणों में से सिर्फ एक कण न्यैष्टिक प्रतिक्रिया में रत होता है, जिससे एक न्यूट्रन का जन्म होता है। हाँ, न्यूट्रन अवश्य हर बार एक न्यैष्टिक प्रतिक्रिया उत्पन्न करता है। इस प्रकार दस लाख न्यैष्टिक प्रक्षेपकों पर एक की जगह हमें दो न्यैष्टिक प्रतिक्रियाएँ उपलब्ध होती हैं। इन प्रणालियों के साथ हमारी स्थिति प्राचीन रसायनशास्त्रियों से अधिक अच्छी नहीं है। पर न्यूट्रनों का एक सस्ता और प्रचुर स्रोत रसायन-शास्त्रियों को कार्यसंलग्न रख सकेगा। इस प्रकार दुर्लभ तत्वों और रेडियो-सक्रिय आइसोटोपों का निर्माण किया जा सकता है और इससे भी महत्वपूर्ण बात यह है कि केंद्रीभूत न्यैष्टिक शक्ति का उपयोग किया जा सकता है।

अध्याय ७

विघटन और सम्बद्ध प्रतिक्रिया

न्यैष्टिक प्रहार के लिए न्यूट्रन इसलिए आदर्श प्रक्षेपक हैं कि वे विद्युत्-सम्पन्न नहीं होते, न्यष्टियों तक आसानी से पहुँच सकते हैं और उनके साथ दृढ़तापूर्वक परस्पर-क्रिया में रत हो सकते हैं। वैद्युतीय दृष्टि से निष्पक्ष इन कणों का आविष्कार सन् १९३२ में जेम्स चाडविक ने किया था और कुछ ही काल बाद एनरिको फरमी और उसके साथियों ने आवर्त-सूची के अधिकांश तत्वों पर प्रहार करने के काम में उनका प्रयोग किया। इन प्रयोगों में प्रायः एक न्यष्टि एक न्यूट्रन को ग्रहण कर लेती और अपने विद्युत्-परिमाण की तुलना में वजन बहुत बढ़ जाने के कारण अस्थायी बन जाती। तब न्यष्टि को स्थायित्व प्रदान करता एक बीटा-क्षय, जिसके कारण न्यष्टि के पास एक इकाई विद्युत्-परिमाण और बढ़ जाता। सन् १९३४ में फरमी ने यह प्रयोग यूरेनियम (९२ विद्युत्-परिमाण) के साथ किया, जो उस समय तक ज्ञात सर्वाधिक विद्युत्-सम्पन्न तत्व था। उसने इस प्रयोग के द्वारा ९३ विद्युत्-परिमाणवाले एक 'ट्रान्सयूरेनिक' (यूरेनियम से अधिक परमाणुओंवाले) तत्व के निर्माण की आशा की।

इन सब प्रयोगों में यूरेनियम रेडियो-सक्रिय प्रतिरोधों से सम्पन्न पाया गया और अपनी प्राकृतिक अवस्था से कहीं अधिक रेडियो-सक्रिय दिखा।

इस रेडियो-सक्रियता के कारण का पता लगाने का कोई साधन नहीं था, सिवाय यह धारणा बनाने के, कि न्यूट्रनों के प्रहार की प्रक्रिया में नये तत्व अस्तित्व में आये थे। पर रासायनिक समीक्षा से ८६ से ९१ विद्युत्-परिमाण तक के तत्वों का कोई पता नहीं चला। फलतः फरमी ने यह नतीजा निकाला कि ९२ विद्युत्-परिमाण से कम के तत्वों का निर्माण नहीं हुआ है और यह रेडियो-सक्रियता अवश्य ही ९२ से अधिक विद्युत्-परिमाणों के कारण है, जिससे यह निष्कर्ष निकलता है कि प्रयोगशाला में 'ट्रान्सयूरेनिक' तत्वों का निर्माण हुआ था।

लेकिन इस निष्कर्ष से न तो फरमी को तुष्टि मिली और न किसी दूसरे को, क्योंकि रेडियो-सक्रियता की बहुत सारी किस्में थीं। अतः ऐसा सोचने को बाध्य होना पड़ा कि न केवल ९३ विद्युत्-परिमाण का तत्व तैयार हो रहा था, बल्कि ९४, ९५ और इससे भी अधिक विद्युत्-परिमाण के तत्व तैयार हो रहे थे। पर इसे समझ सकना बड़ा कठिन कार्य था। तभी ईडा नोड्डाक[1] नाम की एक महिला रसायनशास्त्री ने अपना मंतव्य प्रकाशित किया और उस प्रयोग की एक विकल्पात्मक व्याख्या प्रस्तुत करते हुए कहा कि यूरेनियम की एक न्यष्टि, जब वह एक न्यूट्रन को ग्रहण करती है, सम्भव है कि दो खंडों में विघटित हो जाती हो और ये खंड किसी भी विभिन्न वजन और विद्युत्-परिमाण वाले होते हों। दूसरे शब्दों में, उसने यह सुझाव रखा कि फरमी ने एक न्यैष्टिक विघटन प्रस्तुत किया था।

पर स्वयं फरमी का ऐसा विश्वास था कि विघटन-प्रक्रिया एक असम्भव बात है। उसके पास एक सबल प्रमाण था, जिसका आधार न्यष्टियों के वजनों का मापित मूल्य और आइन्स्टीन का फार्मूला ई = एम-सी² ($E = mc^2$) था। इस फार्मूले के अनुसार ही फरमी ने यूरेनियम के दो खंडों में विभक्त होने पर मुक्त होनेवाली शक्ति का हिसाब लगाया; फिर टुकड़ों के बीच के वैद्युत् प्रतिसारण की शक्ति का अनुमान लगाया और इन सबके परिणामस्वरूप यह पाया कि शक्ति-बाधा इतनी बड़ी थी कि विघटन-प्रक्रिया सम्भव नहीं हो सकती थी। यह प्रमाण पूर्णतः सही था। त्रुटि केवल यही थी कि न्यष्टियों के वजनों का मापित मूल्य उस वक्त सही नहीं था।

---

1. वह और उसके पति दो तत्वों-'रेनियम' (Rhenium) और 'मसूरियम' (Masurium)-के आविष्कारक थे। इनमें से एक अभी अस्तित्व में है।

सिर्फ इसी कारणवश विघटन-प्रक्रिया का आविष्कार सन १९३८ के बजाय १९३४ में नहीं हो सका। यदि ऐसा होता, तो परमाणविक बम बनानेवाला प्रथम राष्ट्र नाजी जर्मनी होता। उस समय कुछ जर्मन वैज्ञानिक सैनिक उपयोगों के क्षेत्र में कार्यसंलग्न थे। अमरीकी भौतिक विज्ञानवेत्ताओं ने इस विषय पर तब तक पूरा ध्यान नहीं दिया था।

फरमी के प्रयोग की एक महत्वपूर्ण विशेषता उसे प्राप्य रेडियो-सक्रियता का एक बड़ा परिमाण और विविधता है। इस विविधता का कारण, जैसा कि अब हम जानते हैं, यह था कि विघटन-प्रक्रिया किसी विशिष्ट ढंग से सम्पन्न नहीं होती। दोनों प्रमुख विघटनोद्भूत खंड शायद ही कभी बराबर वजन और विद्युत्-परिमाणवाले होते हैं। औसत रूप से हल्के खंड का वजन लगभग ९० होता है और भारी खंड का लगभग १४०। कभी-कभी तो हल्के खंड का वजन केवल ७५ होता है और बड़े खंड का १६०। वजन की विविधता के अनुसार ही विद्युत्-परिमाण भी घटता-बढ़ता रहता है। हल्के खंड का विद्युत्-परिमाण औसत रूप से ३८ होता है, जो कि 'स्ट्रानटियम' (Strontium) है और भारी खंड का ५४ जो कि 'क्षेनन' (Xenon) है। कुल मिला कर प्रमुख विघटनोद्भूत खंडों में एक सौ से भी अधिक प्रकार की न्यष्टियाँ प्रकट होती हैं।

व्यवहारतः ये सब न्यष्टियाँ रेडियो-सक्रिय होती हैं और स्थायित्व प्राप्त करने से पूर्व तीन या चार बार विघटित होती हैं। फलतः यूरेनियम की विघटन-प्रक्रिया में कई सौ स्पष्ट रेडियो-सक्रिय तत्व पैदा होते हैं। ४३ से ६१ विद्युत्-परिमाणवाले तत्व (जो कि प्रकृति में उपलब्ध नहीं हैं) भी विघटनोत्पादनों के रूप में काफी अच्छे परिमाण में पाये गये हैं। अधिकांश विघटनोत्पादन अल्पायुवाले इलेक्ट्रन होते हैं और गामा का परित्याग करते हैं, जो कि केवल स्थानीय और निकटतम रेडियो-सक्रियता की आशंका में वृद्धि कर सकते हैं। इनमें से दो उत्पादन दीर्घायु होते हैं, जो प्रचुर परिमाण में उपलब्ध होने के साथ-साथ महत्वपूर्ण भी हैं। ये हैं–सेसियम^{१३७} (Cesium^{137}) और स्ट्रानटियम^{९०} (Strontium^{90})।

सेसियम^{१३७} का अर्द्धजीवन ३० वर्षों का होता है और यह ६ लाख इलेक्ट्रन-वाल्ट शक्तिवाली गामा-किरण बिखेरता है। स्ट्रानटियम^{९०} का अर्द्ध-जीवन २८ वर्षों का होता है और यह २२० हजार इलेक्ट्रन-वाल्ट की औसत शक्तिवाला इलेक्ट्रन प्रमुक्त करता है। इस प्रक्रिया में अवशिष्ट न्यष्टि

(Daughter nucleus) होती है इट्रियम^{९०} (Yttrium^{90}), जो कि औसतन १० लाख इलेक्ट्रन-वाल्टवाले एक अन्य इलेक्ट्रन का परित्याग करती है। इट्रियम^{९०} का अर्द्धजीवन ६४ घंटे का होता है। अतः वस्तुतः स्ट्रानटियम^{९०} दो इलेक्ट्रनों का परित्याग करता है, जो औसतन ६ लाख इलेक्ट्रन-वाल्ट शक्तिवाले होते हैं। दीर्घावधिवाले रेडियो-सक्रिय खतरे के लिए, विशेष कर परमाणविक विस्फोटों से सम्बन्धित विश्वव्यापी विनाशकारी रेडियो-सक्रिय वर्षा के लिए, ये दोनों आइसोटोप (सेसियम^{१३७} और स्ट्रानटियम^{९०}) बहुत ही महत्वपूर्ण हैं। स्ट्रानटियम प्राणधारियों के लिए अधिक खतरनाक है, क्योंकि यह हड्डियों में प्रवेश कर शरीर में बहुत लम्बी अवधि तक बना रहता है।

रेडियो-सक्रियता के अलावा विघटन-प्रक्रिया की एक और विशेषता है, जो कि बहुत ही स्पष्ट है। फिर भी फरमी उस पर ध्यान देने में कैसे चूक गया, यह समझ में नहीं आता। यह विशेषता है, परिमुक्त शक्ति का विशाल परिमाण। यूरेनियम की एक अकेली न्यष्टि का विघटन २० करोड़ इलेक्ट्रन-वाल्ट शक्ति मुक्त करता है, जब कि साधारण रेडियो-सक्रिय क्षय की शक्ति ५० लाख से १ करोड़ इलेक्ट्रन-वाल्ट तक होती है। (कोयले के एक परमाणु के जलने से केवल ४ इलेक्ट्रन-वाल्ट शक्ति पैदा होती है।)

विघटन में परिमुक्त २० करोड़ इलेक्ट्रन-वाल्टों में से एक करोड़ तो विघटन-प्रक्रिया के कारण पैदा हुई गामा-किरणों और न्यूट्रनों में ही लग जाते हैं। यह शक्ति तत्काल और स्थानीय विकिरण के खतरों को बढ़ाती है। इसके बाद २ करोड़ ४० लाख इलेक्ट्रन-वाल्ट विघटनोत्पादनों की रेडियो-सक्रियता में लग जाते हैं—इसमें से आधे तो न्यूट्रिनों के काम आते हैं, जो न तो हानिकारक होते हैं और न लाभकारी और बाकी आधे को इलेक्ट्रन ग्रहण करते हैं, जिनसे विलम्बित रेडियो-सक्रियता का खतरा बढ़ता है। किन्तु अधिकांश शक्ति, जो कि १६ करोड़ इलेक्ट्रन-वाल्ट से भी अधिक होती है, विघटन के कारण उत्पन्न दोनों प्रमुख खंडों की गत्यात्मक शक्ति में लगती है। इस परिमाण में से औसतन १० करोड़ इलेक्ट्रन-वाल्ट हल्के खंड में प्रवेश पाते हैं।

१० करोड़ इलेक्ट्रन-वाल्ट के विघटनोद्भूत खंड अवश्य ही फरमी के रेडियो-सक्रिय गणकों (Counters)-द्वारा अनुभव किये जाते, बशर्ते वे गणकों तक पहुँचने में सक्षम होते। पर वे खंड गणकों तक पहुँचने में असमर्थ रहे। कारण यह था कि फरमी एक सावधान कार्यकर्ता था। वह जानता था कि उसके द्वारा प्रयुक्त यूरेनियम न्यूट्रनों के प्रहार के पहले भी कुछ रेडियो-सक्रिय कणों का

परित्याग करेगा। वह इस प्राकृतिक रेडियो-सक्रियता को, प्रयोग में पैदा होनेवाली रेडियो-सक्रियता के साथ मिलाना नहीं चाहता था। अतः उसने यूरेनियम और रेडियो-सक्रिय गणकों के बीच शीशे पर पारे की एक जज्ब करनेवाली परत रख दी। विघटनोद्भूत खंड उस परत को पार नहीं कर सके।

इसके कुछ ही काल बाद एक और प्रख्यात भौतिक विज्ञानवेत्ता ने फरमी के प्रयोग को दुहराया, पर इस बार उक्त बाधाजनक परत का प्रयोग नहीं किया गया। फिर भी वह कोई महत्त्वपूर्ण परिणाम नहीं पा सका, क्योंकि किसी अज्ञात कारणवश उसके गणक-यंत्र से चिनगारियाँ निकलने लगीं।

फलतः विघटन एक रहस्य बना रहा। परन्तु इंग्लैंड में लियो जिलार्ड (Leo Szilard) ने न्यैष्टिक सम्बद्ध प्रतिक्रिया को पेटेण्ट करवाया। उसने बतलाया कि कतिपय न्यैष्टिक प्रतिक्रियाओं में स्वतंत्र न्यूट्रन परिमुक्त हो सकते हैं। तदुपरान्त ये न्यूट्रन आगे भी कुछ ऐसी प्रतिक्रियाएँ उत्पन्न कराने में सफल हो सकते हैं, जो कि और भी न्यूट्रन पैदा करें। यदि प्रत्येक प्रतिक्रिया में उत्पन्न एक भी न्यूट्रन किसी अन्य न्यष्टि में एक प्रतिक्रिया उत्पन्न करने में समर्थ हो, तो एक सम्बद्ध या श्रृंखलाबद्ध प्रतिक्रिया हो सकेगी।

निश्चय ही, मुख्य समस्या न्यूट्रनों को भारी संख्या में लुप्त होने से रोकने की थी। इनके लोप के मुख्यतः दो मार्ग हैं। एक तो यह कि न्यष्टियों में इनका व्यर्थ अनुत्पादनीय ढंग से संचय हो जाये और दूसरा यह कि पदार्थ की सतह से न्यूट्रन बाहर निकल जायें। जिलार्ड ने बतलाया कि दूसरे प्रकार के न्यूट्रन-लोप को भारी परिमाण में श्रृंखलाबद्ध प्रतिक्रियाकारी पदार्थ के प्रयोग से कम किया जा सकता है।

तथ्य यह है कि एक न्यैष्टिक प्रतिक्रिया में उत्पन्न न्यूट्रन के लिए, अन्य प्रतिक्रिया उत्पन्न करने से पूर्व, कुछ औसत दूरी तक भ्रमण करना आवश्यक है। यदि श्रृंखलाबद्ध प्रतिक्रियाकारी पदार्थ का आकार इस दूरी से बहुत कम हुआ, तो व्यवहारतः सभी उद्भूत न्यूट्रन पदार्थीय सतह से होकर निकल भागेंगे और सम्बद्ध प्रतिक्रिया सम्भव नहीं हो सकेगी। यदि पदार्थ का आकार इस दूरी से बड़ा हुआ, तो न्यूट्रनों का पलायन-सम्बन्धी लोप बहुत सामान्य होगा और सम्बद्ध प्रतिक्रिया की सम्भावना सम्पूर्ण प्रथम किस्म के लोप (न्यष्टियों में व्यर्थ संचय) के परिमाण पर निर्भर करेगी। यदि इस लोप का परिमाण अधिक नहीं हुआ और सम्बद्ध प्रतिक्रिया सम्भव हुई, तो पदार्थ का एक न्यूनतम आकार होगा, जिस पर औसतन प्रति प्रतिक्रिया एक न्यूट्रन, अन्य प्रतिक्रिया कराने में सफल

होगा। एक परमाणविक प्रतिकारी (Atomic reactor) में इसी तरह की न्यूनतम सम्बद्ध प्रतिक्रिया की आवश्यकता होती है।

यदि पदार्थ का आकार उक्त न्यूनतम आकार से बड़ा होगा, तो औसतन प्रति प्रतिक्रिया एक से अधिक न्यूट्रन अन्य प्रतिक्रिया सम्पन्न करायेंगे और सम्बद्ध प्रतिक्रिया पलायन कर जायेगी। उदाहरण के लिए, यदि दो न्यूट्रन अन्य प्रतिक्रिया के कारण बनते हैं, तो प्रथम पीढ़ी के बाद दो न्यूट्रन होंगे, द्वितीय पीढ़ी के बाद चार, तीसरी पीढ़ी के बाद आठ और इसी तरह आगे भी होगा। परमाणविक बम का यही सिद्धान्त है।

लगभग ८० पीढ़ियों के बाद, पदार्थ की सभी न्यष्टियों का एक बड़ा भाग एक न्यैष्टिक रूपान्तर से होकर गुजरेगा और इतनी अधिक शक्ति परिमुक्त होगी कि पदार्थ अगली पीढ़ी पैदा करने के लिए आवश्यक थोड़े-से समय के लिए भी गठित नहीं रह सकेगा। सम्पूर्ण पदार्थ अलग-अलग हो जायेगा, प्रणाली न्यूनतम से भी नीची अवस्था में आ जायेगी और सम्बद्ध प्रतिक्रिया रुक जायेगी। यह सम्पूर्ण प्रक्रिया एक माइक्रोसेकण्ड के कुछ भाग में ही पूरी हो जाती है।

इस प्रकार विघटन के आविष्कार के पहले ही जिलार्ड ने परमाणविक बम और न्यैष्टिक सम्बद्ध प्रतिकारी के निर्माण का आधार प्रस्तुत कर दिया। जिन पदार्थों में सम्भवतः सम्बद्ध प्रतिक्रिया सम्पन्न हो सकती थी, वे उसके अनुसार 'थोरियम', 'यूरेनियम' और 'बेरिलियम' थे। पर 'बेरिलियम' के बारे में उसकी धारणा गलत थी, क्योंकि इस परमाणु की राशि का सही पता उस समय तक नहीं लगा था। 'थोरियम' के बारे में उसका अनुमान अच्छा था और 'यूरेनियम' के मामले में तो उसका तीर ठीक निशाने पर बैठा था।

अन्ततः दिसम्बर, १९३८ में रहस्योद्घाटन हुआ। जर्मनी में हैन (Hahn) और स्ट्रैसमान (Strassmann) ने एक यूरेनियम के लक्ष्य का, जो न्यूट्रनों के लिए खुला था, रासायनिक विवेचन किया। वे पहले के अन्वेषकों की अपेक्षा कहीं अधिक सही मार्ग पर थे और उन्होंने ५६ विद्युत्-परिमाणवाले 'बेरियम' का पता लगाया, जो उनके प्रयोग के पहले लक्ष्य पदार्थ में उपस्थित नहीं था। इसकी एकमात्र सम्भव व्याख्या 'विघटन-प्रक्रिया' हो सकती थी। कुछ ही सप्ताहों के अन्दर गणक-यंत्रों में विघटनोत्पादनों के जोरदार आघात लक्ष्य किये गये और परवर्ती दिनों में यह प्रयोग सारे संसार में दुहराया गया।

अब इस बारे में कोई सन्देह नहीं रह गया था कि न्यूट्रन यूरेनियम की न्यष्टियों में विघटन पैदा कर सकते थे। कुछ सप्ताह और बीतने के बाद यह

बात निश्चित हो गयी कि विघटन-प्रक्रिया में न्यूट्रन परिमुक्त होते हैं, जिनके कारण आगे भी और अधिक विघटन सम्भव है।

परन्तु श्रृंखलाबद्ध प्रतिक्रिया अब भी अस्तित्व में नहीं आयी थी। नील्स बोर (Niels Bohr) और जान ह्वीलर (John Wheeler) ने यह प्रमाणित किया कि न्यूट्रन यू^{२३८} में तब तक विघटन नहीं करा सकता, जब तक उसकी शक्ति १० लाख इलेक्ट्रन-वाल्ट से अधिक न हो। जब विघटन-प्रक्रिया में न्यूट्रन प्रथम बार पैदा होते हैं, तब उनमें से अनेक की शक्ति १० लाख इलेक्ट्रन-वाल्ट से अधिक होती है। परन्तु विघटन-क्रिया सम्पन्न करने के पहले प्रायः ही यूरेनियम-न्यष्टियों से उनकी अविघटन-मूलक टक्करें होती हैं। इसके परिणामस्वरूप उनकी कुछ शक्ति न्यष्टियों में चली जाती है और कुछ उनके पास बच जाती है। अब न्यष्टियों के पास विघटन के लिए पर्याप्त शक्ति नहीं रह जाती और न्यूट्रनों के पास भी आगामी मुकाबलों में विघटन पैदा करने के योग्य शक्ति नहीं शेष रहती। अतः बहुत ही कम न्यूट्रन अपना पुनरुत्पादन कर पाते हैं और इस प्रकार श्रृंखला सम्भव नहीं हो पाती।

परन्तु इसके साथ ही बोर और ह्वीलर ने यह सुझाया कि दुर्लभ आइसोटोप यूरेनियम – यू^{२३५} – किसी भी न्यूट्रन के (एक सुस्त न्यूट्रन के भी) आघात से विघटन-रत हो सकता है। अतः यू^{२३५} में सम्बद्ध प्रतिक्रिया सम्भव है। शीघ्र ही इस कथन की पुष्टि उन प्रयोगों-द्वारा भी हो गयी, जो जान डनिंग और अल्फ्रेड ड्रायर तथा कोलम्बिया-विश्वविद्यालय के उनके साथियों ने किये।

आइसोटोप २३५ और २३८ का आचरण क्यों इतना भिन्न होता है, यह समझना कठिन नहीं है। आइसोटोप २३५, आइसोटोप २३८ की तुलना में अधिक विस्फोटक है और विघटन-रत होने के लिए अधिक अधोमुख है; क्योंकि यह अपेक्षाकृत छोटा होता है और इस कारण इसके प्रोटोन एक-दूसरे को अधिक दृढ़ता से आघात पहुँचाते हैं। इससे भी अधिक महत्व की बात यह है कि आइसोटोप २३५-द्वारा ग्रहण किये जाने पर एक न्यूट्रन, आइसोटोप २३८-द्वारा ग्रहण किये जानेवाले न्यूट्रन की तुलना में, अल्पक्षेत्रीय न्यैष्टिक आकर्षण के कारण अपेक्षाकृत अधिक गत्यात्मक शक्ति उपलब्ध करता है। ऐसा होने का साधारण-सा कारण यह है कि न्यष्टियाँ, जब उनमें सम संख्या में न्यूट्रन (या प्रोटोन) होते हैं, तब विषम संख्या में उनके होने की अपेक्षा, स्थायित्व-लाभ की अधिक प्रवृत्ति दिखाते हैं। यू^{२३५} में चूंकि विषम संख्या में न्यूट्रन होते हैं, इसलिए वह यू^{२३८} की तुलना में, जिसके पास पहले से ही सम

संख्या में न्यूट्रन होते हैं, एक अतिरिक्त न्यूट्रन प्राप्त करने का विशेष आग्रह दिखाता है। परिणामतः आइसोटोप २३५-द्वारा एक सुस्त न्यूट्रन की उपलब्धि प्रायः ही विघटन-प्रक्रिया को अभिप्रेरित करती है, जब कि आइसोटोप २३८ में न्यूट्रन-द्वारा पैदा की गयी अतिरिक्त शक्ति न्यष्टि से एक गामा-किरण के रूप में निकल जाती और यू^{२३८} यू^{२३९} बन जाता है।

यू^{२३५} में सम्बद्ध प्रतिक्रिया सम्भव है, पर यह आवश्यक है कि इस दुर्लभ आइसोटोप को प्रचुरता से उपलब्ध यू^{२३८} से अलग कर दिया जाये। यह पृथक्करण की प्राक्रिया आसान नहीं होती, क्योंकि समान तत्व के आइसोटोप रासायनिक दृष्टि से अभिन्न होते हैं। यहाँ तक कि इनके वजन का अन्तर भी १ प्रतिशत से कुछ ही अधिक होता है। बोर ने बड़े पैमाने पर इस पृथक्करण-क्रिया को सम्पन्न करने के विचार को यह कह कर रद्द कर दिया कि इसके लिए सम्पूर्ण देश को एक कारखाना बना देना पड़ेगा। खैर, अब तो यह बात इतिहास का विषय बन गयी है कि यह कार्य, द्वितीय विश्व-युद्ध-काल में मनहट्टन-योजना के अन्तर्गत, वस्तुतः सम्पन्न किया गया। युद्ध-काल में बोर (उर्फ निकोलस बेकर) पुनः अमरीका गया और उसे वहाँ जब पृथक्करण के कारखाने दिखाये गये, तब उसने उन्हें देख कर कहा—"मैंने ठीक कहा था न! आपने सारे देश को एक कारखाने में बदल दिया।"

प्राकृतिक यूरेनियम में एक भाग यू^{२३५} का, तो १३९ भाग यू^{२३८} का होता है। पहले ऐसी आशा की गयी थी कि यह जमाव एक सम्बद्ध प्रतिक्रिया उत्पन्न करने के लिए पर्याप्त होगा और खर्चीली सम्पन्नतादायक प्रक्रियाओं से बचा जा सकेगा। ऐसा इसलिए सम्भव प्रतीत हुआ, कि एक इलेक्ट्रन-वाल्ट की एक खंड शक्ति में न्यूट्रन, यू^{२३८} के मुकाबले में, यू^{२३५} द्वारा अधिक आसानी से ग्रहण किये जाते हैं और इससे अल्प जमाव के कारण अभाव की पूर्ति हो जाती है। वस्तुतः जब तक उनकी शक्ति ताप-जनित सामान्य उत्तेजन में भाग लेनेवाले सभी कणों की शक्ति के समान अल्प नहीं हो जाती, न्यूट्रनों को धीमा हो जाना पड़ता है। यह शक्ति इस कार्य के लिए पर्याप्त रूप से अल्प होती है।

परन्तु विघटन-प्रक्रिया में निर्मित होनेवाले न्यूट्रनों की शक्ति लगभग दस लाख इलेक्ट्रन-वाल्ट होती है। पर्याप्त रूप से धीमा पड़ने के पूर्व, उन्हें अवश्य ही एक ऐसे स्तर से गुजरना पड़ता है, जहाँ उनकी शक्ति लगभग ७ इलेक्ट्रन-वाल्ट हो जाती है। इस शक्ति-स्तर के आसपास यू^{२३८} के लिए इस बात की

बहुत अधिक सम्भावना होती है कि वह एक न्यूट्रन ग्रहण करके यू^{२३९} में परिणत हो जाये। कुछ अन्य शक्तियों के आसपास भी इसी तरह की – भले ही ही वे छोटी हों – बाधाएँ पार करनी पड़ती हैं। इसलिए प्राकृतिक यूरेनियम शृंखलाबद्ध प्रक्रिया के लिए प्रयुक्त नहीं किया जा सकता। सन् १९४० में फरमी और जिलार्ड ने, जो आजकल अमरीका में कार्यरत हैं, इस कठिनाई का एक हल निकाला।

उन्होंने प्राकृतिक यूरेनियम में एक ऐसा पदार्थ मिला कर देखा, जिसकी न्यष्टियाँ इतने कम वजन की हैं कि जब उन पर न्यूट्रन का आघात पहुँचता है, तो वे काफी सिकुड़ जाती हैं और न्यूट्रन की शक्ति का एक बड़ा भाग जज्ब कर लेती हैं। इस प्रकार न्यूट्रन शीघ्रता से और बड़े शक्ति-अन्तरों में कम शक्तिवाला बन जाता है, जिसके परिणामस्वरूप या तो वह प्रतिकूल शक्तियों के पास, जहाँ उसे यू^{२३८} ग्रहण कर सकता है, अधिक समय नहीं गँवाता; अथवा इन शक्तियों के साथ उसका बिल्कुल ही मुकाबला नहीं होता। अतः दोनों का समप्राकृतिक मिश्रण तैयार करने के बजाय, न्यूनकारी पदार्थ में यूरेनियम को सामूहिक रूप से बिछाने से ग्राह्यता और भी अच्छी हो सकती है।

नियंत्रित सम्बद्ध प्रतिक्रिया के लिए या तो सम्पन्नता की प्रणाली (Method of enrichment) अपनायी जा सकती है या न्यूनीकरण की प्रणाली (Method of moderation), अथवा दोनों ही। किन्तु एक जोरदार शृंखलाबद्ध प्रतिक्रिया – एक परमाणविक बम – पैदा करने के लिए केवल सम्पन्नता की प्रणाली ही कारगर होगी। इसका कारण यह है कि बम की सारी शक्ति इतने अल्प समय में निर्मित होनी चाहिए, जितने में एक बम फूट कर चूर-चूर होता है, यानी एक माइक्रोसेकंड (सेकंड का दस लाखवाँ भाग) का भी एक छोटा हिस्सा। यदि प्राकृतिक यूरेनियम का प्रयोग होगा, तो प्रतिक्रिया बड़ी ही सुस्त और मंद गतिवाली होगी और न्यष्टियों के एक काफी बड़े भाग की प्रतिकिया के पहले ही समाप्त हो जायेगी।

यह बात भी दिलचस्प है कि ६ अरब वर्ष पहले, जब कि यू^{२३५} क्षयमान नहीं हुआ था और दुर्लभ आइसोटोप नहीं बना था, सम्बद्ध प्रतिक्रियाकारी तत्व आसानी से उपलब्ध किये जा सकते थे। (उस समय यू^{२३५} आइसोटोप यू^{२३८} के समान ही प्रचुर परिणाम में उपलब्ध था।) फिर भी उनका रासायनिक पृथक्करण आवश्यक होता और इसलिए हमें यह नहीं सोचना

चाहिए कि प्राथमिक अवस्था में पृथ्वी पर सम्बद्ध प्रतिक्रियाकारी मिश्रण स्वतः ही एकत्र हुए थे।

दूसरी ओर, आज से ६ अरब वर्ष बाद यू^{२३५} इतना दुर्लभ हो जायेगा कि न्यूनीकरण की प्रणाली-द्वारा संचालित प्रतिकारी (Reactor) पा सकना ही असम्भव हो जायेगा। साथ ही, आइसोटोपों का पृथक्करण बहुत ही खर्चीला बन जायेगा, क्योंकि पृथक् किया जानेवाला आइसोटोप दस लाख में से १०० भाग से भी कम परिमाण में प्राप्त होगा। उन लोगों के लिए, जो सुदूर भविष्य की चिन्ता करते हैं, हम यह कहना चाहेंगे कि परमाणविक शक्ति प्राप्त करने के अन्य तरीके उस समय सम्भव रहेंगे। और, यह मानने का भी पर्याप्त कारण है कि कुछ नक्षत्रीय विस्फोट यू^{२३५} पैदा करते हैं, जिसे दिक् से सम्पर्क रखनेवाले लोग निश्चय ही उपलब्ध कर लेंगे।

वर्तमान स्थिति में, अन्य भारी तत्वों के समान ही, यूरेनियम भी दुर्लभ है। परन्तु पृथ्वी कई परतों में विभाजित है और उसकी ऊपरी दस मील की गहराई में दुर्लभ पदार्थ बहुत-कुछ उपलब्ध हैं। विशेष रूप से हमारे इस ग्रह में जितना भी यूरेनियम है, वह ठीक हमारे पैरों के नीचे जमा है, जिसे हम अपनी सुविधा और आवश्यकता के अनुसार प्रयोग में ला सकते हैं।

अध्याय ८

पदार्थ पर विकिरण का प्रभाव

जब शक्ति-सम्पन्न कण, पदार्थ (जीवनधारी या जीवनहीन) से होकर गुजरता है, तब क्या होता है, यह रसायन-विज्ञान की चर्चा का विषय है। रसायन-विज्ञान वह विषय है, जो परमाणुओं और अणुओं में इलेक्ट्रनों की व्यवस्था और पुनर्व्यवस्था पर विचार करता है। एक रासायनिक पुनर्व्यवस्था के लिए सामान्यतः कुछ इलेक्ट्रन-वाल्टों के आसपास शक्ति की आवश्यकता होती है। (जैसा कि हमने देखा है, एक इलेक्ट्रन-वाल्ट वह शक्ति है, जो एक वाल्ट परिमाण से एक इलेक्ट्रन के गुजरने पर मुक्त होती है ; अर्थात् एक प्रामाणिक विद्युत्-निष्कासन-मार्ग में उपलब्ध प्रेरक शक्ति के एक प्रतिशत से कुछ कम।) एक शक्ति-सम्पन्न कण में – जैसे कण रेडियो-सक्रिय क्षय में प्रमुक्त होते हैं – विशेष

रूप से कुछ लाख इलेक्ट्रन-वाल्ट शक्ति होती है। इस प्रकार ऐसे एक कण में लगभग दस लाख रासायनिक पुनर्व्यवस्थाओं की क्षमता होती है।

शक्ति-सम्पन्न कण विद्युत्धारी भी हो सकते हैं और निष्पक्ष भी, हल्के भी हो सकते हैं और भारी भी; या स्वभाव में विद्युत्-चुम्बकीय भी हो सकते हैं। इस विविधता के कारण ऐसा सोचा जा सकता है कि पदार्थ पर विभिन्न कणों के प्रभावों की तुलना के लिए कोई समान आधार नहीं होगा। प्रत्येक कण की सम्भवतः अपने अलग ढंग की रासायनिक पुनर्व्यवस्थाएँ होती होंगी। पर वस्तुतः ऐसा है नहीं।

कतिपय रासायनिक विषों की तरह, जो हमारे शरीर में कुछ विशेष प्रकार के अणु ढूँढ़ते हैं, ये शक्ति-सम्पन्न कण आचरण नहीं दिखाते—ये अपने मार्ग में आ जानेवाले सभी परमाणुओं और अणुओं को आघात पहुँचाते हैं, अर्थात् एक भारी हथौड़े की तरह कार्य करते हैं। इनके प्रभावों को सीधे आघात की तीव्रता (या शक्ति) से मापा जा सकता है। यदि समान परिमाण में शक्ति व्यक्त होती है और समान तंतु (सजीव पदार्थों के) प्रभावित होते हैं, तो कौन-सा कण प्रहार करता है, यह विशेष महत्व नहीं रखता। परन्तु प्रहार के पश्चात् कुछ विशिष्ट रासायनिक प्रभाव प्रकट हो सकते हैं। जब विकिरण-द्वारा शरीर का जल या कोई दूसरा अणु भंग होता है, तब उद्भूत खंड स्वयं ही रासायनिक विष हो सकते हैं और प्राणिविज्ञान की दृष्टि से महत्वपूर्ण बड़े अणुओं पर माध्यमिक ढंग से हमला कर सकते हैं। यथार्थतः यह सम्भव दीखता है कि जीवित प्राणियों को विकिरण से पहुँचनेवाली क्षति (स्वास्थ्य की दृष्टि से भी और आनुवंशिक दृष्टि से भी) का अधिकांश इसी तरह पैदा होता होगा।

यद्यपि सभी शक्ति-सम्पन्न कण पदार्थ पर अंतिम प्रभाव—परमाणुओं और अणुओं का सामूहिक विनाश—की दृष्टि से समान होते हैं, तथापि विनाश उपस्थित करने के ढंग में वे कुछ अन्तर रखते हैं। विद्युत्धारी कण एक ढंग से कार्य करते हैं, गामा-किरणें अन्य ढंग से और न्यूट्रन अन्य ढंग से। सबसे पहले विद्युत्धारी कणों से ही अपनी चर्चा आरम्भ करना सरलतम होगा।

सर्वाधिक महत्वपूर्ण विद्युत्धारी कण वे हैं, जिनका रेडियो-सक्रियता और ब्रह्माण्डीय किरणों की प्राकृतिक पृष्ठभूमि और विघटन-प्रक्रिया से सम्बन्ध है। इनमें अल्फा-किरणें, बीटा-किरणें, मेसन और विघटनोद्भूत खंड शामिल हैं। जानकारी के लिए इन कणों और कुछ अन्य कणों के वजनों और विद्युत्-परिमाणों की एक तालिका यहाँ उपस्थित की जाती है। हमने प्रोटोन

के वजन और विद्युत्-परिमाण का इकाइयों के रूप में व्यावहारिक प्रयोग किया है।

कण		वजन	विद्युत्-परिमाण
प्रोटोन		१	१
अल्फा		४	२
इलेक्ट्रन	बीटा-किरणें	१।१८४०	–१
पोजीट्रन	बीटा-किरणें	१।१८४०	१
ड्युटिरन		२	१
ट्राइटन		३	१
मेसन		१।८	१,–१
औसत हल्का विघटनोद्भूत खंड		९७	२०
औसत भारी विघटनोद्भूत खंड		१३८	२२

यदि विघटनोद्भूत खंडों को अपने धुरीय इलेक्ट्रनों से पूर्णतः मुक्त कर दिया जाता, तो उनके विद्युत्-परिमाण, तालिका में दिखाये गये परिमाण से भी अधिक होते। पाठकों को स्मरण होगा कि हल्के विघटनोद्भूत खंड की न्यष्टि का औसत विद्युत्-परिमाण ३८ होता है और भारी विघटनोद्भूत खंड की न्यष्टि का ५४। लेकिन ऐसे गहन रूप से धनात्मक विद्युत्-सम्पन्न कण इलेक्ट्रनों को अपनी ओर अधिक खींचते हैं। इनमें से कुछ तो विघटन-प्रक्रिया के समय भी उनसे संलग्न ही रहते हैं। चूँकि विघटनोद्भूत उत्पादन पदार्थ से गुजरते समय अपनी गति खोते हैं, इसलिए वे और भी इलेक्ट्रनों को ग्रहण करते हैं और क्रमशः अपना विद्युत्-परिमाण खोते हैं।

जब इनमें से कोई भी शक्ति-सम्पन्न विद्युत्धारी कण पदार्थ में से होकर गुजरता है, तब परमाणुओं में इलेक्ट्रनों के साथ परस्पर-क्रियारत होता है। इस परस्पर-क्रिया के परिमाणस्वरूप इलेक्ट्रन अपनी गति की साधारण अवस्थाओं से हट जा सकते हैं। यदि परस्पर-क्रिया शान्तिपूर्ण हो – या तो इसलिए कि विद्युत्धारी कण परमाणु से कुछ हट कर गुजर जाता है, या इसलिए कि कण इतनी तेजी से गतिशील हो कि परस्पर-क्रिया बहुत अल्प काल के लिए हो–तो सम्भव है कि, इलेक्ट्रन अपनी अवस्था में अचल रहे। यदि परस्पर-क्रिया अधिक अशान्तिपूर्ण होगी, तो इलेक्ट्रन उसी परमाणु या अणु में रहते हुए भी, उत्तेजित होकर गति की और उत्तेजित अवस्था को ग्रहण कर सकते हैं, अथवा वहाँ से निष्कासित होकर किसी अन्य परमाणविक स्थल पर जाकर

समाप्त हो जा सकते हैं। दूसरी अवस्था में मौलिक परमाणु बचे हुए धनात्मक विद्युत्-परिमाण के साथ शेष रह जाता है और उसे आयनीकृत (Ionised) कहा जाता है। साथ ही, विस्थापित इलेक्ट्रन किसी पार्श्ववर्ती परमाणु या अणु के साथ संयुक्त हो जाता है और इस प्रकार एक ऋणात्मक आयन (Ion) की सृष्टि करता है। इस सम्पूर्ण प्रक्रिया को एक आयन-जोड़ी का निर्माण कहा जा सकता है। इस प्रकार विद्युत्धारी कण के कारण आयनीकृत और उत्तेजित परमाणु और अणु उपलब्ध होते हैं। अब हम देखेंगे कि, परमाणुओं की एक पुनर्व्यवस्था आरम्भ होगी, जो कि नये रासायनिक मिश्रणों को जन्म देगी। पर यह बात हमारे लिए महत्वपूर्ण है कि जिस कण ने आयनीकरण पैदा किया, उसके प्रकार और आयनीकरण तथा उत्तेजना के अनुपात पर ये रासायनिक परिवर्तन निर्भर नहीं करते। अतः रासायनिक प्रतिक्रिया अन्त में प्रायः समान ही रह जाती है। मोटे तौर पर, जीवित कोषों में जितनी अधिक आयनों की जोड़ियाँ तैयार होती हैं, उतनी ही अधिक प्राणिविषयक हानि पहुँचती है।

आयनों की जोड़ी तैयार होने में कुछ परिमाण में शक्ति खर्च होती है। ऐसा प्रतीत हो सकता है कि यह परिमाण आवश्यक रूप से कण के वजन, विद्युत्-परिमाण और शक्ति तथा उस माध्यम पर निर्भर करेगा, जिससे होकर कण विचरता है। पर बात ऐसी नहीं है। इन पर वह निर्भर जरूर करता है, पर बहुत अल्प मात्रा में। किसी भी शक्तिवाला विद्युत्धारी कण किसी भी माध्यम — हवा, पानी, मिट्टी या जीवन्त कोष — से होकर विचरते समय ३२ इलेक्ट्रन-वाल्ट पर प्रायः १ की दर से आयनों की जोड़ियाँ तैयार करता है। दस लाख इलेक्ट्रन-वाल्ट का एक कण अपनी सम्पूर्ण शक्ति का परित्याग करने से पहले लगभग ३० हजार आयनों की जोड़ियाँ तैयार करता है। (जब यह अपनी शक्ति का परित्याग करता है, तब यदि यह धनात्मक रूप से विद्युत्धारित कण हुआ तो, अपने को निष्पक्ष बना सकने के योग्य पर्याप्त इलेक्ट्रनों को ग्रहण कर लेता है। उदाहरणस्वरूप, एक अल्फा कण साधारण हेलियम-परमाणु बन जायेगा और एक प्रोटोन, उद्जन का एक परमाणु।)

हम कह चुके हैं कि समान शक्तिवाले दो विद्युत्धारी कण आयनीकरणों की समान कुल संख्या पैदा करते हैं। लेकिन एक महत्वपूर्ण विषय में समान शक्तिवाले विद्युत्धारी कण भिन्न हो सकते हैं। यह भिन्नता उनके मार्गों में आयनीकरण के घनत्व के क्षेत्र में होगी। मुख्यतः कण

जितनी धीमी गति से विचरण करेगा और जितना अधिक उसका विद्युत्-परिमाण होगा, उतना ही अधिक आयनीकरण होगा और उतना ही अधिक एक निश्चित दूरी में वह नुक्सान पैदा करेगा। साथ ही, वह अपनी शक्ति का भी अधिक तेजी से परित्याग करेगा। यदि हम पदार्थ में गतिशील दो समान शक्तिवाले विद्युत्धारी कणों की तुलना करें, तो उनमें से जो अधिक गहराई में विचरण कर रहा होगा, वह अधिक शीघ्रता से रुक जायेगा।

यदि विद्युत्-परिमाण अधिक हो, तो यह समझना आसान है कि वैद्युत्-परस्पर-क्रिया बढ़ जायेगी और परिणामस्वरूप प्रत्येक परमाणविक इलेक्ट्रन को अधिक दृढ़ता से व्याघात पहुँचेगा। दूसरी ओर, यदि कण अधिक धीमी गति से विचरेगा (भारी कणों के मामले में अधिकतर ऐसा ही होता है), तो वह परमाणविक इलेक्ट्रनों के आसपास अधिक समय बितायेगा। इस प्रकार वैद्युत-परस्पर-क्रिया दीर्घावधिवाली और इलेक्ट्रन के निष्कासन में अधिक प्रभावकारी होती है। इसी कारण से एक विशेष विद्युत्धारी कण के मार्ग में आयनीकरण का घनत्व, कण के धीमा होने के साथ-साथ, अधिकाधिक होता जाता है। वस्तुतः इस प्रवृत्ति का, एक विघटनोद्भूत खंड के मामले में, कण-द्वारा इलेक्ट्रनों के ग्रहण किये जाने में सम्भावित वृद्धि और विद्युत्-परिमाण में कमी के कारण, विरोध होता है। परिणामतः इन खंडों में आयनीकरण का घनत्व प्रायः एकरूप होता है। यदि एक भारी विद्युतधारी सुस्त कण पदार्थ से होकर गुजरता है, तो इतने अधिक व्याघात-प्राप्त और विस्थापित अणु पीछे छूट जाते हैं कि ये अणु आपस में ही प्रतिक्रिया-संलग्न हो जा सकते हैं। इसलिए भारी आयनीकरण विचित्र प्रभावों को जन्म दे सकता है। साथ ही, सभी आयन पैदा करनेवाले कण मोटे तौर पर समान रासायनिक परिवर्तन और विनाश के कारण बनते हैं।

बीटा-किरणों के अलावा, सभी विद्युत्धारी कण इलेक्ट्रन की तुलना में बहुत वजनी होते हैं। परिणामतः जब वे पदार्थ से होकर विचरते हैं और परमाणविक इलेक्ट्रनों से परस्पर-क्रियारत होते हैं, तब उनके मार्ग मूल दिशा से इतने परिवर्तित नहीं होते कि परिवर्तन लक्ष्य किया जा सके। दूसरी ओर, बीटा-किरणें, जिनका वजन परमाणविक इलेक्ट्रनों के ही बराबर होता है, अपने प्रतिरोधों से काफी प्रभावित होती हैं और प्रायः ही दिशा-परिवर्तन के लिए विवश होती हैं। इसलिए उनके मार्ग प्रायः ही टेढ़े-मेढ़े और अनिश्चित होते हैं।

चूँकि बीटा-किरण एक सीध में विचरण नहीं करती, इसलिए पदार्थ में प्रवेश पाने की इसकी क्षमता को इसके कुल मार्ग की लम्बाई से नहीं मापना चाहिए।

बीटा-किरण का परिभ्रमण-क्षेत्र — इसके द्वारा मौलिक दिशा में किया गया कुल परिभ्रमण – इसके परिभ्रमण की कुल लम्बाई का लगभग आधा होता है। पर अधिक परिमाण में विद्युत् धारण करनेवाले कणों के मामले में, परिभ्रमण-क्षेत्र और कुल परिभ्रमित दूरी के बीच कोई अन्तर नहीं होता।

विद्युत्धारी कणों के परिभ्रमण-क्षेत्रों के बारे में सर्वाधिक महत्व की बात यह है कि वे छोटे होते हैं। उदाहरणस्वरूप, कुछ लाख इलेक्ट्रन-वाल्ट की रेडियो-सक्रिय शक्तिवाले एक अल्फा-कण का परिभ्रमण-क्षेत्र जल में (या जीवन्त तंतु में) एक इंच का कुछ हजारवाँ हिस्सा होता है। ऐसा कण एक कागज के पन्ने में प्रवेश नहीं कर सकता। और, एक विघटनोद्भूत खंड, अपनी बड़ी शक्ति के बावजूद, एक अल्फा-कण की तुलना में भी, कम भेदक होता है। एक प्रोटोन का क्षेत्र अल्फा-कण की तुलना में कुछ अधिक होता है। किन्तु अपने कम वजन के कारण बीटा-किरण किसी भी विद्युत्धारी कण के मुकाबले में सर्वाधिक परिभ्रमण-क्षेत्रवाली होती है। लेकिन यह भी ठोस या तरल पदार्थों में एक इंच के केवल एक लघु अंश तक ही जा सकती है।

नीचे की तालिका में कुछ विद्युत्धारी कणों के हवा और पानी में परिभ्रमण-क्षेत्रों (इंचों में) को शक्ति (दस लाख इलेक्ट्रन-वाल्टों में) की एक क्रिया के रूप में प्रदर्शित किया गया है—

परिभ्रमण-क्षेत्र

	हवा				पानी (जीवन्त तंतु के समान)			
शक्ति	·५	१	२	५	·५	१	२	५
अल्फा	०·१	०·२	०·४	१·४	०·०००१	०·०००२	०·०००४	०·००१४
प्रोटोन	०·३	०·९	२·८	१३·४	०·०००५	०·००१	०·००३	०·०१४
बीटा	४९·	१३०·	३००·	७७०·	०·०६३	०·१६	०·३८	१·०

इस तालिका से यह प्रकट होता है कि विद्युत्धारी कण पदार्थ में बहुत अल्प दूरी तय करते हैं। इस कारण ये कण गम्भीर बाह्य विकिरण के खतरे नहीं हैं। प्रोटोन और अल्फा-किरणें सामान्यतः एक फुट से कम हवा से रुक जाती हैं। साधारण वस्त्र या हमारी त्वचा की बाहरी परत भी (जो कि जीवनहीन कोषों से बनी होती है) उन्हें पूर्णतः रोक देगी।

बीटा-किरणें ७० फुट से कुछ कम हवा से या एक इंच अथवा इससे कम ठोस पदार्थ से रुक जाती हैं। वस्तुतः विघटन-प्रक्रिया में पैदा हुई अधिकांश बीटा-किरणों में दस लाख इलेक्ट्रन-वाल्ट या इससे कम शक्ति होती है और इसीलिए उनके परिभ्रमण-क्षेत्र और भी छोटे होते हैं।) बीटा-परित्यागियों का रेडियो-सक्रिय विष-तत्व सीधे कपड़ों पर या शरीर पर पड़ने से हानि पहुँचा सकता है, किन्तु उनके तुरन्त रगड़ कर साफ कर दिये जाने से यह समस्या हल हो जायेगी। एक मकान या इमारत का भीतरी भाग, सर्वाधिक शक्ति-सम्पन्न बीटा-किरणों के अतिरिक्त, रेडियो-सक्रिय तत्वों-द्वारा परित्यक्त विद्युत्धारी कणों के किसी भी बाह्यवर्ती स्रोत से सुरक्षित होना चाहिए। खतरा सिर्फ तभी पहुँच सकता है, जब विद्युत्धारी कणों का स्रोत शरीर के अन्दर हो, जिससे अपने सीमित परिभ्रमण-क्षेत्र के बावजूद, ये कण सूक्ष्मग्राही तंतुओं के पास पहुँच जायें। ऐसी स्थिति में, जैसा कि हम आगे के एक अध्याय में देखेंगे, खतरा विचारणीय हो जा सकता है।

एक विशेष प्रकार के विद्युत्धारी कण दूसरों से भिन्न होते हैं। ये कण हैं, ब्रह्माण्डीय किरणों में पाये जानेवाले मेसन। ये कण शक्तिशाली बीटा-किरणों की तरह तेजी से विचरते हैं और उन्हीं की तरह विद्युत्-परिमाण से भी सम्पन्न होते हैं। इसलिए उनके प्राणि-विषयक प्रभाव भी वही होते हैं, जो बीटा-विकिरण के होते हैं। सिर्फ एक बड़ा अन्तर होता है। ब्रह्माण्डीय किरणवाले मेसन कहीं अधिक शक्ति का वहन करते हैं और इसलिए उनका परिभ्रमण-क्षेत्र बड़ा होता है। जब कि बीटा-किरणें त्वचा में ही रुक जाती हैं, मेसन सारे शरीर को क्षति पहुँचा सकते हैं। मेसन ठीक वैसे ही प्रभाव उत्पन्न करते हैं, जैसे कि वह तत्व, जो सारे शरीर में बीटा-विकिरण को समान रूप से फैला देता है। यह बात महत्वपूर्ण है। यह हमें उस स्थिति में पहुँचा देती है, जहाँ हम मानव-निर्मित रेडियो-सक्रियता के प्रभावों की उन ब्रह्माण्डीय किरणों के प्रभावों से तुलना कर सकते हैं, जिनके खतरे हमारे समक्ष सदा उपस्थित रहते हैं।

ब्रह्माण्डीय किरणों की सम्पूर्ण शक्ति का मेसनों-द्वारा ही परिवहन नहीं होता। हम इलेक्ट्रनों की बौछारें भी पाते हैं। ये लगभग बीटा-किरणों की ही तरह होती हैं, सिवाय इसके कि इनमें शक्ति अधिक होती है और ये समानान्तर मार्गों पर यात्रा करती हुई काफी बड़ी संख्या में प्रायः ही पहुँचती रहती हैं। परन्तु इनके प्रभाव लगभग मेसनों के प्रभाव के ही समान होते हैं।

अभी हम विद्युत्धारी कणों और परमाणविक इलेक्ट्रनों की परस्पर-क्रिया पर विचार करते रहे हैं। विद्युत्धारी कणों और न्यष्टियों के बीच की परस्पर-क्रिया का अब तक कोई उल्लेख नहीं हुआ है। न्यैष्टिक परस्पर-क्रियाएँ भी कभी-कभी उपस्थित होती हैं, किन्तु विद्युत्धारी कण को धीमा करने में उनका प्रभाव बड़ा नगण्य होता है। परन्तु वे बीटा-किरणों को अवश्य प्रभावित करती हैं।

जब एक बीटा-किरण एक अत्यधिक विद्युत्धारी न्यष्टि से टकराती है, तब बीटा-कण तेजी से मुड़ जाता है। इस प्रक्रिया की तीव्रता न्यष्टि के अत्यधिक विद्युत्-परिमाण और बीटा-कण की अल्प राशि के कारण होती है। इस समय वेग में अचानक उपस्थित होनेवाले परिवर्तन के कारण इलेक्ट्रन को घेरनेवाले विद्युत्-शक्ति-क्षेत्र का एक अंश विघटित हो जाता है और परिणाम-स्वरूप उच्च आवृत्ति का विकिरण पैदा होता है, जिसे क्ष-किरणें (X-rays) कहते हैं। ऐसे विद्युत्-चुम्बकीय विकिरण का महत्व यह है कि यह पदार्थ में अधिक गहराई तक पहुँच सकता है। हमारे शरीरों में विशिष्ट बीटा-किरण-शक्तियों को पैदा करने के लिए, बीटा-किरण-शक्ति का केवल एक छोटा हिस्सा क्ष-किरणों में परिणत होता है। परन्तु कई रेडियो-सक्रिय प्रक्रियाओं में गामा-किरणें (जो प्राकृतिक रूप से क्ष-किरणों के ही समान होती हैं) प्रचुर परिमाण में पैदा होती हैं। ये किरणें बीटा-किरणों के बराबर या उनसे भी अधिक शक्ति का वहन कर सकती हैं।

विद्युत्धारी कणों, जो पदार्थ से विचरण करते समय निरन्तर परस्पर-क्रिया करते हैं, के विपरीत गामा-किरणें काफी दूर तक बिना किसी प्रतिरोध के जा सकतीं हैं। वास्तविक दूरी गामा-किरण की शक्ति, इसके विचरण के माध्यम और विशुद्ध संयोग पर निर्भर करती है। औसत रूप से एक दस लाख वाल्ट-वाली गामा-किरण पानी में लगभग छः इंच तक बिना किसी बाधा के चली जाती है। ४० लाख वाल्ट की गामा-किरण लगभग एक फुट तक जाती है। जीवित पदार्थों में भी ये दूरियाँ प्रायः समान ही रहती हैं। इस प्रकार बाह्य स्रोतवाली गामा-किरणें शरीर में गहराई तक पहुँच सकती हैं।

यह बात अवश्य है कि केवल एक गामा-किरण के उपस्थित रहने से जीवित पदार्थ को क्षति नहीं पहुँचती। इस बात की भी किंचित् सम्भावना है कि गामा-किरण एक भी प्रतिरोध के बिना समूचे शरीर के भीतर से गुजर जाये। यदि ऐसा हो, तो शरीर पर कोई प्राणि-विषयक प्रभाव नहीं पड़ेगा। प्रभाव तभी होता है, जब गामा-किरण पदार्थ के साथ परस्पर-क्रियारत होती है। इस प्रकार की परस्पर-क्रिया उपस्थित होने के तीन सर्वाधिक महत्वपूर्ण तरीके हैं।

एक तरीका है, किसी एक परमाणविक इलेक्ट्रन-द्वारा गामा-किरण का सीधा जज्ब कर लिया जाना। इस प्रक्रिया में गामा-किरण लुप्त हो जाती है और इसकी सम्पूर्ण शक्ति इलेक्ट्रन ग्रहण कर लेता है। इस शक्ति का एक लघु अंश परमाणु से इलेक्ट्रन के बंधन को तोड़ने में प्रयुक्त होता है। बाकी शक्ति इलेक्ट्रन की गत्यात्मकता में लगती है। ऐसी अवस्था में इलेक्ट्रन मुक्त हो जाता है और अन्य परमाणविक इलेक्ट्रनों को उत्तेजित और आयनीकृत करके शारीरिक क्षति पहुँचा सकता है। वस्तुतः अब यह वही वस्तु बन जाता है, जिसे हम बीटा-किरण कहते हैं।

गामा-किरण पदार्थ के साथ जिस दूसरे ढंग से परस्पर-क्रिया कर सकती है, वह है बिखरने की क्रिया। इस अवस्था में गामा-किरण लुप्त नहीं होती, बल्कि सिर्फ अपनी शक्ति का एक अंग परमाणविक इलेक्ट्रन को दे देती है। अब इलेक्ट्रन शारीरिक क्षति पहुँचाने के लिए स्वतंत्र हो जाता है और गामा-किरण अपने अगले प्रतिरोध की ओर बढ़ जाती है।

तीसरे तरीके के लिए यह आवश्यक होता है कि गामा-किरण एक न्यष्टि के पास हो और उसकी शक्ति १० लाख इलेक्ट्रन-वाल्ट से अधिक हो। (साधारण क्ष-किरणें, जिनका उपयोग चिकित्सा-कार्यों में होता है, इतनी शक्ति-सम्पन्न नहीं होतीं कि यह प्रक्रिया सम्भव हो सके।) ऐसी परिस्थितियों में, गामा-किरण एक साथ एक इलेक्ट्रन और एक पोजीट्रन के जन्म के साथ लुप्त हो जा सकती है। यह विशुद्ध शक्ति से पदार्थ के निर्माण का एक दृष्टान्त है। फार्मूला $E=mc^2$ के अनुसार, गामा-किरण की शक्ति का एक अंश निश्चित राशियोंवाले कणों के उत्पादन में लग जाता है। यह परिमाण लगभग १० लाख इलेक्ट्रन-वाल्ट होता है। गामा-किरण की बाकी शक्ति दोनों कणों की गत्यात्मकता में लग जाती है। प्राणि-विषयक क्षति विद्युत्धारी कणों के कारण उद्भूत क्रमिक आयनीकरण से पैदा होती है। जब पोजीट्रन आयनीकरण-प्रक्रिया में अपनी गत्यात्मक शक्ति को खर्च कर देता है, तब वह विलुप्त होने के क्रम में

एक इलेक्ट्रन के साथ मिल जाता है । अब शक्ति पुनः दो या तीन गामा-किरणों के रूप में प्रकट होती है । (इनमें से प्रत्येक की शक्ति मौलिक गामा-किरण से कम होती है ।)

किसी भी स्थिति में गामा-किरण प्राणि-विषयक क्षति के लिए प्रत्यक्षतः जिम्मेदार नहीं होती । क्षति सदा ही इलेक्ट्रनों (या पोजीट्रनों) के द्वारा पहुँचायी जाती है, जिन्हें गामा-किरण अपनी सम्पूर्ण शक्ति या उसका एक अंश दे देती है । किन्तु इससे गामा-किरणें और भी खतरनाक बन जाती हैं । वे पहले शरीर के सूक्ष्मग्राही तंतुओं में प्रवेश कर सकती हैं और फिर आयनीकरण पैदा कर सकती हैं ।

हम पहले ही कह चुके हैं कि क्ष-किरणें गामा-किरणों की तरह ही होती हैं । गामा-किरणें एक उत्तेजित न्यष्टि से पैदा होती हैं और क्ष-किरणें एक न्यष्टि के साथ एक इलेक्ट्रन (या एक बीटा-किरण) की टक्कर से । मानवनिर्मित क्ष-किरणें, पहले इलेक्ट्रनों की धारा को गतिमान कर और फिर उन्हें एक अत्यधिक विद्युत्धारी न्यष्टि से सम्पन्न एक लक्ष्य से टकराने के लिए छोड़ कर, प्राप्त की जाती हैं ।

क्ष-किरणों की उपयोगिता, निस्संदेह, उनकी भेदन-शक्ति को लेकर है; पर यही वह विशेषता है, जो क्ष-किरणों को खतरनाक भी बनाती है । मानव-शरीर के अन्दर क्या है, यह जानने के लिए क्ष-किरणों का प्रयोग किया जा सकता है। किन्तु ऐसा, क्ष-किरणों के मार्ग में पड़नेवाले तंतुओं को विचलित और पुनर्व्यवस्थित किये बिना नहीं किया जा सकता । यह क्षति रेडियो-सक्रियता या ब्रह्माण्डीय किरणों-द्वारा पहुँचायी जानेवाली क्षति के ही समान होती है ।

पदार्थ पर न्यूट्रनों के प्रभाव, गामा-किरणों के प्रभाव की ही तरह होते हैं । गामा-किरणों की तरह न्यूट्रन भी पदार्थ में लम्बी दूर तक बिना किसी परस्पर-क्रिया के जा सकते हैं । औसत रूप से एक दस लाख वाल्ट का न्यूट्रन, बिना किसी प्रकार की टक्कर के, पानी में कुछ इंचों तक जाता है । फिर, गामा-किरणों की तरह ही, न्यूट्रन भी किसी प्राणि-विषयक क्षति के लिए प्रत्यक्ष रूप से जिम्मेदार नहीं होते । निष्पक्ष होने के कारण वे केवल परमाणविक न्यष्टियों के साथ ही परस्पर-क्रिया करते हैं, क्योंकि उनकी ओर वे विशेष रूप से आकृष्ट रहते हैं । इन परस्पर-क्रियाओं में सर्वाधिक महत्वपूर्ण, उद्जन की न्यष्टियों के साथ होनेवाली परस्पर-क्रिया होती है । ये न्यष्टियाँ जीवन्त तन्तुओं में प्रोटीन और जलीय अणुओं के रूप में बड़ी संख्या में होती हैं ।

उद्जन-न्यष्टियों (अर्थात् प्रोटोनों) के साथ होनेवाली टक्करें इसलिए महत्वपूर्ण होती हैं कि इस प्रक्रिया में न्यूट्रन की शक्ति का एक बड़ा भाग स्थानान्तरित हो जाता है। ऐसा इसलिए होता है कि न्यूट्रन और प्रोटोन का वजन लगभग समान होता है। यदि न्यूट्रन एक भारी न्यष्टि पर आघात करता है, तो इस टक्कर में वह अपनी शक्ति का सिर्फ एक अल्पांश ही खोता है।[१] उद्जन या एक भारी न्यष्टि के साथ टकराने के बाद न्यूट्रन आगे भी ऐसी टक्करों के लिए बढ़ता जाता है। परंतु न्यष्टि, जो अब विद्युत्-सम्पन्न और शक्तिशाली बन जाती है, परमाणविक इलेक्ट्रनों में उत्तेजना और आयनीकरण की सृष्टि करती है। इस प्रकार गामा-किरणों की भाँति ही शक्तिशाली न्यूट्रन भी बहुत अधिक खतरनाक हैं, क्योंकि वे पहले प्रवेश करके फिर आयनीकरण पैदा कर सकते हैं।

न्यूट्रन शक्ति-सम्पन्न न होने पर भी खतरनाक होते हैं। एक शक्तिहीन न्यूट्रन जीवन्त पदार्थ की न्यष्टियों के साथ कई तरीकों से प्रतिक्रियारत हो सकता है। इनमें सें दो विशेष रूप से सम्भव हैं। या तो न्यूट्रन को एक प्रोटोन ग्रहण करके एक ड्युटिरन का निर्माण कर सकता है, जिसके परिणामस्वरूप अतिरिक्त शक्ति २० लाख वाल्ट की गामा-किरण के रूप में, जो कि और भी क्षति पहुँचा सकती है, परित्यक्त होगी; या फिर न्यूट्रन नाइट्रोजन[१४] (जीवन्त पदार्थ में प्रचुरता से उपलब्ध) की न्यष्टि के साथ प्रतिक्रियारत हो सकता है और इसके परिणामस्वरूप कार्बन[१४] की एक न्यष्टि और एक शक्तिशाली प्रोटोन का जन्म हो सकता है। इस प्रकार एक शक्तिहीन न्यूट्रन का जो प्राणि-विषयक प्रभाव पड़ेगा, वह एक शक्ति-सम्पन्न गामा-किरण या एक शक्ति-सम्पन्न प्रोटोन तथा एक शक्ति-सम्पन्न कार्बन[१४] के आयन-द्वारा पड़नेवाले प्रभाव के बराबर होगा।

संक्षेप में, सभी कणों का, चाहे वे विद्युत्-सम्पन्न हों अथवा नहीं, पदार्थ पर समान प्रभाव पड़ता है। प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से वे उत्तेजित परमाणुओं, अणुओं और आयनों की जोड़ियों को जन्म देते हैं। ये प्रक्रियाएँ सदा ही लगभग समान अनुपातों में उपस्थित होती हैं और इसलिए विकिरण के प्रभावों को मापने के लिए नवनिर्मित आयनों की जोड़ियों की संख्या मापदंड बन सकती है। जीवन्त पदार्थ में जितनी अधिक आयनों की जोड़ियाँ पैदा होंगी, उतनी ही

---

१. यदि न्यूट्रन काफी तेज होगा, तो शक्ति का एक बड़ा भाग विलुप्त हो जायेगा। ऐसी स्थिति में न्यूट्रन न्यष्टि में आन्तरिक उत्तेजना पैदा कर सकता है।

अधिक प्राणि-विषयक क्षति पहुँचेगी। इसी कारण से विकिरण के प्रभावों की चर्चा, शरीर के विभिन्न अंगों के जीवन्त तन्तुओं के एक 'ग्राम' में पैदा हुई आयनों की जोड़ियों के रूप में, की जाती है। चूँकि प्रत्येक आयन-जोड़ी लगभग ३२ इलेक्ट्रन-वाल्ट शक्ति के स्थानान्तरण के बराबर होती है, इसलिए संगृहीत शक्ति के परिमाण के रूप में इसकी विकल्पात्मक व्याख्या की जा सकती है। इस कार्य के लिए जिस इकाई का सामान्यतः प्रयोग किया जाता है, वह रोएंटजन (Roentgen) है, जिसका अर्थ शरीर को (जिसमें विकिरण संगृहीत होता है) एक इंच का पचीसवाँ हिस्सा उठाने-योग्य शक्ति के समानान्तर होता है। यह प्रति औंस ६० अरब आयन-जोड़ियों के बराबर होता है। यह कहना कम सटीक, पर अधिक महत्त्वपूर्ण है कि एक रोएंटजन हमारे शरीर के कोष में कुछ हजार आयन-जोड़ियाँ एकत्र कर देता है।

निश्चय ही, कोष-विशेष के अन्दर आयनीकरण का परिमाण आसानी से नहीं मापा जा सकता। इसके बदले जो सामान्यत: जाना जाता है, वह कई कोणों से युक्त तंतु के एक टुकड़े में रोएंटजन की मात्रा है। यदि आयनीकरण को प्रेरित करनेवाले विद्युत्धारी कण इलेक्ट्रन हुए (जैसा कि एक बीटा-किरण या एक गामा-किरण के प्राथमिक विकिरण में होता है), तो आयनीकरण प्रभावित पार्श्ववर्ती कोषों में प्रायः एक रूप से वितरित हो जायेगा। यदि विद्युत्धारी कण भारी हुए – एक प्रोटोन या एक अल्फा-किरण – तो इसके द्वारा प्रस्तुत आयनीकरण का घनत्व बहुत अधिक होगा। फलतः कुछ कोषों को तो अनेक आयनजोड़ियाँ प्राप्त होंगी, जब कि निकटवर्ती अन्य कण, सम्भव है, एक भी आयन-जोड़ी न पायें। इस कारण से कभी-कभी केवल यह बतलाना पर्याप्त नहीं होता कि तंतु में कितने रोएंटजन हैं, बल्कि किस प्रकार का विकिरण इसके लिए जिम्मेदार है, यह भी स्पष्ट करना महत्वपूर्ण होता है।

बाद के एक अध्याय में हम विकिरण के विभिन्न परिमाणों के प्राणि-विषयक प्रभावों पर विचार करेंगे। पर यहाँ यह तो उल्लेख कर ही दें कि क्ष-किरणों या गामा-किरणों के १,००० रोएंटजन यदि कुछ घंटों के अन्दर एक मनुष्य के सम्पूर्ण शरीर में न्यूनाधिक समानता में वितरित हो जायें, तो मृत्यु प्राय: निश्चित होगी। और, यह एक उल्लेखनीय तथ्य है कि प्रकृति ने हमें कोई चेतावनी नहीं दे रखी है। विकिरण हानि नहीं पहुँचाता। इसीलिए इस बात की और भी अधिक आवश्यकता है कि हम इस प्रक्रिया को समझें, जिसका प्रभाव हमारे कुशल-मंगल पर तो पड़ता है, लेकिन हमारी इन्द्रियाँ जिससे निष्प्रभावित रहती हैं।

अध्याय ९

परीक्षण

परमाणविक विस्फोटक पदार्थों का परीक्षण साधारणतः सुन्दर वातावरण में किया जाता है। इसका समुचित कारण है : रेडियो-सक्रिय विनाशकारी तत्वों की वर्षा।

विनाशकारी तत्वों की इस वर्षा के कारण परीक्षण-स्थल अवश्य ही एकान्त होना चाहिए। मनुष्यों की आबादी से प्रकृति में सुधार नहीं आता (इसके कुछ अपवाद भी हैं, पर वे दुर्लभ और अधिक उल्लेखनीय हैं) फिर परीक्षण-स्थल को स्वच्छ रखने के लिए यह भी आवश्यक है कि परीक्षण वर्षा-काल में न हो। अतएव परीक्षण-स्थल साधारणतः वही होते हैं, जहाँ अच्छी धूप और एकान्त हो।

इसमें भाग लेनेवालों के लिए प्रकृति की सुन्दरता कठिन, किंतु साथ-ही-साथ उत्तेजनात्मक परीक्षणों की तैयारी में, प्रेरक पृष्ठभूमि का काम करती है। अन्त में, परमाणविक विस्फोट सदा ही अपनी पृष्ठभूमि के सामने तुच्छ लगते हैं। किन्तु विस्फोट-क्रिया में केवल लपट और धड़ाका ही नहीं होता, बल्कि इसके द्वारा जो कार्य सम्पन्न होता है, उसका महत्व सर्वथा अन्य है।

एक परीक्षण के वस्तुतः महत्वपूर्ण परिणाम फोटोग्राफिक प्लेटों पर उभरनेवाले चिह्न होते हैं। प्लेटों को तैयार करनेवाले अधिकांश यंत्र तो विस्फोट में नष्ट हो जाते हैं, पर इतना अंश अवश्य शेष रह जाता है, जिससे यह जाना जा सके कि बटन दबाने से लेकर पर्यवेक्षक के उसे पूरा देख लेने तक, एक सेकंड के कुछ हिस्सों में क्या-कुछ घटा। एक सेकंड के उन थोड़े-से हिस्सों में इस क्षेत्र में एक और वृद्धि होती है, जिसे हम नभोवस्तु-यांत्रिकता (Astrophysical engineering) कह सकते हैं। न्यैष्टिक विस्फोटों में क्या होता है और क्या परिलक्षित होता है, इन दोनों का नक्षत्रों के आंतरिक भागों में स्थित पदार्थ के आचरण से बहुत निकट का सम्बन्ध है।

न्यैष्टिक विस्फोट का विवरण यहाँ तीन कारणों से उपस्थित नहीं किया जा सकता। प्रथम, ये विवरण गुप्त हैं। द्वितीय, इस पुस्तक का आकार और पाठकों की पूर्व-जानकारी सीमाबद्ध है। और तीसरी बात, इस प्रकिया का एक

छोटा भाग ही हम समझते हैं। इन सीमाओं में रहते हुए, जो-कुछ उल्लेखनीय घटता है, वह यह है।

वास्तविक न्यैष्टिक प्रतिक्रिया में एक माइक्रोसेकंड का केवल एक अल्पांश समय लगता है। (एक माइक्रोसेकंड = एक सेकंड का दस लाखवाँ हिस्सा)। बम की सारी शक्ति इसी अल्पकाल में मुक्त होती है। इस अवधि की समाप्ति पर न्यैष्टिक पदार्थ का मुख्य भाग बड़ी तेजी से अलग हटने लगता है और इस गति के कारण आगे की न्यैष्टिक प्रतिक्रियाएँ रुक जाती हैं। न्यूनाधिक व्यवस्थित बाह्य गति के अतिरिक्त शक्ति के कुछ बड़े अंश अव्यवस्थित ऊष्मा-गति में पाये जाते हैं। यह उष्मा-गति अपनी न्यष्टियों से अधिकांश इलेक्ट्रनों को निकाल चुकी होती है और परमाणुओं को उन्मुक्त तथा अशान्त रूप से गतिशील विद्युत्धारी कणों के जमाव में परिणत कर चुकी होती है। अब तक कई मौलिक न्यष्टियाँ, अंशतः विघटन-प्रक्रिया और अंशतः बम के पदार्थों में मूल रूप से उपस्थित सभी प्रकार के परमाणुओं में न्यूट्रनों के संचय के कारण, रेडियो-सक्रिय तत्वों की न्यष्टियों में रूपान्तरित हो चुकी होती हैं।

इसके बाद भी शक्ति का एक अन्य अंश विद्युत्-चुम्बकीय विकिरण के रूप में उपस्थित रहता है। यह विकिरण बहुत-कुछ प्रकाश की तरह होता है, सिवाय इसके कि इसका तरंगदैर्घ्य उससे छोटा होता है और इसलिए दृश्य नहीं होता; परन्तु इसे सभी प्रकार के पदार्थ ग्रहण करके पुनः परित्यक्त कर सकते हैं और यह विस्फोटित बम के टुकड़ों के साथ शक्ति का गम्भीर रूप से विनिमय करता है।

यह सम्पूर्ण क्रिया उस क्षेत्र से बाहर की ओर फैलती है, जहाँ बम के आवरणकर्ता निर्माता तत्वों के साथ न्यैष्टिक प्रतिक्रिया सम्पन्न होती है। बाहर की ओर विस्तार की अवधि में और भी परमाणु तथा स्थान घिर जाते हैं। उत्तेजना और विकिरण किंचित् कम गर्म हो जाते हैं।

यह गर्म क्षेत्र एक स्पष्ट एवं स्थिर सीमा से, जो 'आघात-प्रक्षेत्र' कहलाती है और जो बाहर की ओर प्रति सेकंड कई सौ मील की गति से परिभ्रमण करती है, मर्यादित-सा प्रतीत होता है। यह प्रक्षेत्र अन्ततः उस न्यूनाधिक सघन पदार्थ की सीमाओं में पहुँचता है, जहाँ सम्पूर्ण बम का ढाँचा मूलतः बन्द रहता है; तदुपरान्त इस सीमा को तोड़ कर पार्श्ववर्ती हवा में मिल जाता है। इसके फलस्वरूप आसपास की हवा गर्म हो उठती है और यही 'अग्निगोला' (Fireball) का आरम्भ है।

इसी क्षण से उच्च तापवाली हवा के दबाव के कारण शक्ति फैलने लगती है, एक तीक्ष्ण आघात-प्रक्षेत्र का निर्माण होता है और साधारण ध्वनि की गति से भी अधिक तेजी से यह बाहर की ओर निकलता है। इस गर्म और विस्तारशील गोले में रेडियो-सक्रिय सामग्री रहती है।

जैसे-जैसे अग्निगोला विस्तृत होता है और तापमान गिरता है, त्यों-त्यों अधिकाधिक दृश्य विकिरण परित्यक्त होता है। वस्तुतः ज्यों-ज्यों ढाँचा विस्तृत और ठंडा होता है, त्यों-त्यों सतह की चमक कम होती जाती है, परन्तु इसका बढ़ा हुआ आकार और विकिरण के परित्याग के लिए उपलब्ध काल-दीर्घता इस बाधा को पार कर लेती है। अन्ततः, यदि एक छोटा बम हुआ, तो कुछ सौ फुट की, और बड़ा बम हुआ, तो एक मील की त्रिज्या में पहुँच कर, अग्निगोले का विस्तार रुक जाता है। ऐसा इसलिए होता है कि अब आघात-प्रक्षेत्र में हवा को प्रकाशमान बनाने के लिए पर्याप्त शक्ति नहीं रहती। फलतः चमक न केवल आगे बढ़ने से रुक जाती है, बल्कि बुरी तरह आलोड़ित हवा के अणुओं से निर्मित तत्वों को ग्रहण कर धुँधली पड़ जाती है।

विस्फोट की इस स्थिति तक पहुँचने में कितना समय लगता है, यह बम की शक्ति पर निर्भर करता है। यदि दो विस्फोटों की तुलना की जाये और बड़े बम की विस्फोट-शक्ति छोटे बम से एक हजार-गुनी हो, तो बड़े बम के अग्निगोले के चरम विस्तार तक पहुँचने में, छोटे बम के अग्निगोले की तुलना में, दस-गुना अधिक समय लगेगा। जो भी हो, विस्फोट-स्थल से काफी निकट के पर्यवेक्षक के लिए दृढ़ रूप से ग्रहणशील शीशे का चश्मा लगाना आवश्यक होता है—इसके अभाव में वह अन्धा हो जा सकता है। छोटे बमों के मामले में अग्निगोले का विस्तार इतना कम होता है कि उसको ठीक से लक्ष्य करना भी कठिन है। वास्तविक बड़े बमों के अग्निगोले को बढ़ते हुए देखा जा सकता है। यह इतना समय लेता है कि आपको आश्चर्यपूर्वक प्रतीक्षा करनी पड़ेगी कि यह कब रुकेगा। अरक्षित आँखों के लिए छोटे बम भी बड़े बमों की तरह ही खतरनाक होते हैं, क्योंकि पलक झपकने-योग्य पर्याप्त समय भी उपलब्ध नहीं होता।

दूसरी ओर, आघात-तरंग (Shock wave), जो अब अग्निगोले से अलग हो चुकी होती है, हवा से होकर गुजरती है और अपने साथ मूल विस्फोट-शक्ति का एक बड़ा अंश ले जाती है। बम-द्वारा पहुँचनेवाली क्षति के एक महत्वपूर्ण भाग का कारण यह अदृश्य चाप-तरंग (Pressure wave)

होती है, जो अन्ततः शान्त तथा हानिरहित होने के पहले कई मील तक प्रायः ध्वनि की गति से फैलती है।

शक्ति का शेष भाग अब भी विस्फोट-स्थल के पास अग्निगोले में रहता है। अब गर्म हवा अपने इर्द-गिर्द के वातावरण को चीरती हुई ऊपर की ओर उठती है। इसके गर्म आन्तरिक भाग कभी-कभी खुल पड़ते हैं और भारी लपटवाली राशि अथवा पिंड-जैसे दिखाई पड़ते हैं — कम-से-कम चलचित्र में तो — जो इस क्रिया को धीमा रूप प्रदान करता है और आकार को छोटा कर देता है — ऐसा ही दिखाई पड़ता है। साधारण लपटों की तुलना में विकीर्ण लपटें काफी बड़ी और तीव्र होती हैं।

इस स्तर तक पहुँचते-पहुँचते दृश्य काफी पीला पड़ने लगता है और नंगी आँखों से भी देखा जा सकता है। मूलतः गर्म राशियाँ अब तक प्रकाश के रूप में काफी शक्ति का परित्याग कर चुकी होती हैं और ठंडी हवा की काफी बड़ी राशि के साथ मिल जाती हैं, जिसके फलस्वरूप उनकी चमक तेज नहीं रहती। मध्यवर्ती और उत्थानशील गैस की इस राशि में व्यवहारतः सभी रेडियो-सक्रियताएँ होती हैं। ये रेडियो-सक्रियताएँ न केवल वे होती हैं, जो विस्फोट में मूलतः बनती हैं, बल्कि उन न्यूट्रनों-द्वारा निर्मित भी होती हैं, जो बम से बाहर आकर आसपास की हवा, पानी, या पृथ्वी की विविध न्यष्टियों-द्वारा संचित कर लिये जाते हैं।

अब विस्फोट के परिणामस्वरूप एक ऐसा दृश्य उपस्थित होता है, जो तेजी से, लेकिन एक निश्चित परिमाण में, बढ़ता जाता है। इस अवस्था में पर्यवेक्षक न केवल उसे देख सकता है, बल्कि अपनी बुद्धि और भावनाओं का भी इन घटनाओं को समझने में प्रयोग कर सकता है। जो गगनधूलि प्रथम बार उड़ती है, उसका विकास अब एक स्तम्भ के रूप में होता है। इसके शीर्ष पर अधिकाधिक उत्तेजित उबलती हुई राशियाँ जमा हो जाती हैं और अगल-बगल में बर्फ-सरीखे दीखनेवाले तिरछे छोर उतरते-जैसे दिखाई पड़ते हैं। यह सफेद राशि क्या है, जो विचित्र आकार के मेघ-जैसी दिखाई पड़ती है और जो कुछ ही मिनटों के अन्दर हमारी आँखों के सामने स्वर्ग (या नक्षत्र-विशारदों की भाषा में 'मौसमोत्तर क्षेत्र') की ऊँचाई तक उठ जाती है ?

यह वस्तुतः एक मेघ ही है — पानी की छोटी-छोटी बूँदों का जमाव, जो वर्षा के लिए तो पर्याप्त नहीं होता, पर जो सूरज के श्वेत प्रकाश को प्रतिबिम्बित करता है। आँधी के मेघ-समूहों की तरह ही इसका भी निर्माण होता है। सचमुच समूह-

पर-समूह एकत्र होने से कई मंजिला दुर्ग तैयार होने का यह एक सुन्दर उदाहरण है। किन्तु आश्चर्य की बात तो यह है कि इस मेघ का निर्माण बम की ऊष्मा के कारण नहीं होता। विशाल गुब्बारे की तरह ऊपर की ओर उठते हुए अग्निगोले के अवशेष के रूप में खींची गयीं वायु-राशियों के ठंडा होने के फलस्वरूप इसका जन्म होता है। इस गुब्बारे के अन्तर्गत हवा ऊपर की ओर खिंचती है। जैसे-जैसे यह हवा ऊपर उड़ती है, वैसे-वैसे ठंडी होती जाती है और इसके अन्दर का जलवाष्प बूँदों में परिणत हो जाता है; अर्थात् यह प्रक्रिया लगभग वही है, जो गर्मी के दिनों में तूफान के बादलों का निर्माण करती है।

सफेद छोर (जो कि सदा वर्तमान नहीं रहते) में ऐसा कोई पदार्थ नहीं होता, जो मेघ से गिरता हो। इसके विपरीत हवा की एक आर्द्र परत बगल से मेघ-द्वारा खींची जाती है और इस परत की बूँदों से एक मेघीय चादर का निर्माण होता है, जो एक छोर के रूप में लटकती प्रतीत होती है।

बड़े बमों के मामले में शीर्षस्थान के पास एक विशेष रूप से पतली और सफेद टोपी-जैसी दिखाई पड़ती है। यह भी जमाव ही है, पर बूँदों के रूप में नहीं, बर्फ के दानों के रूप में। कुछ विस्फोटों में एक से अधिक टोपियाँ भी दिखाई पड़ती हैं।

अन्त में, मेघ अपनी पूरी ऊँचाई पर पहुँच जाता है। बम के आकार के अनुसार यह २० हजार फुट से १ लाख फुट, या इससे भी अधिक ऊँचाई तक पहुँच जाता है। तब विभिन्न दिशाओं में विभिन्न स्तरों पर बहनेवाली हवा इसके सम्पूर्ण ढाँचे को विच्छिन्न कर देती है और कुछ टुकड़ों को पूरब की ओर उड़ा देती है, तो कुछ को पश्चिम की ओर। इस प्रकार रेडियो-सक्रिय अवशेषों की यात्रा आरम्भ हो जाती है।

यह रेडियो-सक्रियता क्या करेगी, प्राणधारियों पर इसका क्या प्रभाव पड़ेगा, यह वस्तुतः कितना खतरनाक है—इन सब बातों पर हम आगे के अध्यायों में विचार करेंगे। लेकिन एक बात स्पष्ट है और यह परमाणविक परीक्षण में भाग लेनेवाले सभी लोगों के मस्तिष्क में उपस्थित रहती है—इस परीक्षण के खतरे उस संकटावस्था की तुलना में कुछ भी नहीं हैं, जो एक अनियंत्रित न्यैष्टिक युद्ध में इन अस्त्रों के बड़ी संख्या में प्रयोग के फलस्वरूप उपस्थित हो सकती है।

अक्सर ही इस बात को दुहराया गया है कि हमारे वर्तमान परमाणविक विस्फोटक पदार्थ विशालतम देशों के नगरों और उद्योगों को मटियामेट

कर दे सकते हैं। तब इनके अधिक विकास तथा परीक्षण किये जाने की और क्या जरूरत है ?

इसका उत्तर सरल है—युद्ध का मुख्य उद्देश्य शत्रु के नागरिक क्षेत्रों को नष्ट करना नहीं, बल्कि उसकी सशस्त्र सेनाओं को पराजित करना होता है। और, इसके लिए हमें हर प्रकार और आकार के सुनियंत्रित तथा परिष्कृत शस्त्रास्त्र चाहिए। हमें ऐसे शस्त्रास्त्र चाहिए, जिनसे हम अपने नगरों की रक्षा कर सकें। हमें ऐसे शस्त्रास्त्र भी चाहिए, जिनसे हम अपने मित्रों की रक्षा कर सकें और विशेष रूप से हमें ऐसे शस्त्रास्त्र चाहिए, जो आक्रमणकारी के विरुद्ध अपना काम पूरा करें और निर्दोषों को कम-से-कम क्षति पहुँचायें।

इस अन्तिम उद्देश्य की पूर्ति की दिशा में विशेष उल्लेखनीय प्रगति की गयी है। हम ऐसे परिष्कृत बमों का विकास कर रहे हैं, जो अपने विस्फोट और ऊष्मा की दृष्टि से पूर्ण प्रभावकारी हों, पर बहुत कम रेडियो-सक्रियता पैदा करें। निस्संदेह, विस्फोट और ऊष्मा केवल विस्फोट-स्थल के आसपास के क्षेत्रों को क्षति पहुँचायेंगे। रेडियो-सक्रियता हवा के द्वारा उड़ा कर ले जायी जा सकती है और काफी हद तक मनुष्य के नियंत्रण से बाहर हो जा सकती है।

यह स्पष्ट है कि युद्ध सदा ही भयंकर रहा है और अभी भी है। हम यह विश्वास करने के लिए तैयार नहीं हैं कि युद्ध का संकट सदा हम पर रहेगा, लेकिन जब तक संसार आधा स्वतंत्र और आधा गुलाम है, तब तक हम युद्ध के खतरे को नजरअंदाज नहीं कर सकते।

एक नियंत्रित अथवा अनियंत्रित परमाणविक युद्ध, विगत युद्धों से अधिक प्रपीड़क सिद्ध होगा, ऐसा हमें नहीं समझना चाहिए। हाँ, इतना अवश्य है कि यह युद्ध अधिक प्रचंड होगा और अल्पकालीन भी।

एक कथा के अनुसार, जो युद्ध मानवता के इतिहास में सर्वाधिक भयानक सिद्ध हुआ, वह इस सन्देश के साथ आरम्भ हुआ था—"तुमने युद्ध को स्वयं चुना है। अब जो बीतेगा, सो अवश्यम्भावी है। आगे क्या होगा, यह हम नहीं जानते–केवल ईश्वर ही जानता है।" स्वतंत्र जनता के लिए शायद यही सम्भव मार्ग है कि वह युद्ध के लिए अच्छी तरह तैयार रहे, लेकिन जहाँ तक उसकी पसंदगी की गुंजायश रहे, वह युद्ध को नहीं चुने। लेकिन क्या होगा, यह तो केवल ईश्वर ही जानता है।

अध्याय १०

रेडियो-सक्रिय मेघ

फरवरी, १९५४ में एक उद्जन-बम के विस्फोट के लिए बिकिनी प्रवाल-द्वीप (Bikini Atoll) में तैयारियाँ की गयी थीं। विस्फोट की तिथि १ मार्च निश्चित थी, किन्तु उस तिथि को विस्फोट करना सम्भव नहीं प्रतीत हो रहा था, क्योंकि विस्फोट हवा की अनुकूल स्थितियों में ही सम्भव हो सकता था। इस विस्फोट से काफी परिमाण में रेडियो-सक्रियता, खास कर विघटनोत्पादनों, के प्रकट होने की आशा की जाती थी। अतः विस्फोट तभी सम्भव हो सकता था, जब हवा के रुख की ओर आबाद क्षेत्र न पड़ते हों।

बिकिनी एक अंडाकार मूँगे की पहाड़ी – एक प्रवाल-द्वीप – है। 'मार्शल-द्वीपों' के नाम से पुकारे जानेवाले द्वीप-समूह के अंतर्गत कई प्रवाल-द्वीपों में से एक यह है। नक्शा देखने पर आपको बिकिनी से २०० मील की दूरी पर एनिवेटोक (Eniwetok) नामक स्थान मिलेगा, जहाँ हमारे आदमी आगामी परीक्षणों के लिए तैयारियाँ कर रहे थे।

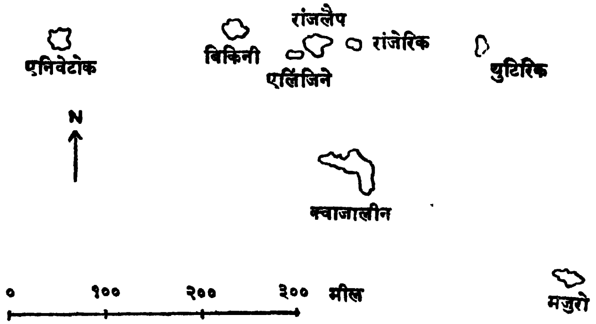
बिकिनी से पूरब, लगभग एक सौ मील की दूरी पर, रांजलैप प्रवाल-द्वीप (Rongelap Atoll) है। उस समय वहाँ ६४ व्यक्ति रहते थे। वे लोग द्वीप के दक्षिणी हिस्से में, जंगलियों की तरह, ताड़ के पत्तों से बने मकानों में रहते थे। उत्तरी हिस्सा आबाद नहीं था।

पास के ऐलिंजिने प्रवाल-द्वीप (Ailinginae Atoll) में १८ मार्शल-द्वीपवासी मछलियों का शिकार करने गये थे और इससे भी आगे, पूरब में स्थित रांजेरिक (Rongerik) द्वीप में २८ अमरीकी सैनिक मुख्यतः मौसम-सम्बंधी आँकड़े तैयार करने के लिए भेजे गये थे। वे सैनिक वहाँ एल्युमिनियम की झोंपड़ियों में रह कर काम करते थे।

और भी आगे, पूरब में, बिकिनी से ३०० मील दूर, युटिरिक (Utirik) द्वीप है, जिसमें उस समय १५७ मार्शल-द्वीपवासी रहते थे।

१ मार्च के प्रातःकाल एक जापानी मछुआ-नौका रांजलैप के उत्तर में कहीं सागर में थी। उसका नाम था 'फ़ुकुर्यु मारू', जिसका अर्थ होता है 'सौभाग्य-

शाली पक्षीसर्प' । उस पर २३ व्यक्ति थे । वस्तुतः वह नौका गश्ती-क्षेत्र में ही थी, पर गश्ती-विमान-द्वारा देखी नहीं जा सकी थी ।



मार्शल-द्वीपों का नक्शा

परीक्षण के लिए तैयारियों का निर्देशन संयुक्त लक्ष्यपूर्ति-सेना ७ (Joint Task Force 7) के जहाजों-द्वारा हो रहा था । १ मार्च के प्रात:काल से कई दिन पहले से ही मौसम-निरीक्षक हवाओं के नक्शे तैयार कर रहे थे । पश्चिम की ओर रुखवाली हवा एनिवेटोक के लिए बुरी होती और पूरब की ओर रुखवाली हवा रांजलैप तथा रांजेरिक को क्षति पहुँचा सकती थी । दक्षिण की ओर रुखवाली हवा क्वाजालीन को प्रभावित करती । अतः परीक्षण के लिए आदर्श हवा उत्तर की ओर रुखवाली होती, किन्तु ऐसी हवा महीनों तक उपलब्ध नहीं हो सकती थी । विस्फोट के दिन सवेरे हवा का रुख उत्तर-पूरब की ओर था, इसलिए मौसम-विशेषज्ञों ने अपनी स्वीकृति प्रदान कर दी । वह १ मार्च, १९५४ का उषाकाल था ।

९ व्यक्तियों का एक समुदाय, जिसका नेतृत्व जैक क्लार्क नामक एक पर्याप्त अनुभवी व्यक्ति कर रहे थे, अन्तिम व्यवस्थाओं के लिए जिम्मेदार था । वे लोग, परीक्षण-स्थल से २० मील दूर प्रवाल-द्वीप के दक्षिणी हिस्से में, अस्थायी रूप से निर्मित एक लघुदुर्ग में थे । इसके अलावा १००० से भी अधिक व्यक्ति अल ग्रेव्स (Al Graves) की दिशा में, जहाजों पर सवार होकर

विस्फोट का निरीक्षण कर रहे थे — वे इस कार्य के तांत्रिक पहलुओं के लिए जिम्मेदार थे। उनके जहाज बिकिनी से दक्षिण और पूरब में थे।

बम-विस्फोट की यांत्रिक प्रक्रिया का संचालन लघुदुर्ग में किया गया। एक-के-बाद-एक प्रकट होनेवाले संकेत यह बतलाने लगे कि विभिन्न प्रयोग और पर्यवेक्षण कार्यशील हैं। अंत में, एक लाल बत्ती बुझ गयी और पट पर हरा प्रकाश दिखायी देने लगा। इसका मतलब था कि बम-विस्फोट किया जा चुका था।

जहाजों पर के लोग रंगीन चश्मों से विशाल अग्निगोले को देखने लगे, लेकिन जिन व्यक्तियों ने विस्फोट-प्रक्रिया का सम्पादन किया था, वे कुछ नहीं देख सके, क्योंकि वे अपने दुर्ग में सभी ओर से बन्द थे। कुछ सेकंड बीतने के बाद उनके रेडियो पर ग्रेव की आवाज प्रतिध्वनित हुई — "विस्फोट अच्छा रहा!" शीघ्रता से लगाये गये एक अनुमान ने १५ मेगाटन व्यक्त किया।

कुछ और सेकंड बीते और प्रत्याशित भूमि-आघात एक बड़े भूकम्प की तरह प्रस्तुत हुआ। वह क्षण बड़ा बुरा बीता। लघुदुर्ग हिल उठा, पर धराशायी नहीं हुआ।

लगभग एक मिनट के पश्चात वायु-आघात ऊपर से होकर गुजरा। इस समय दरवाजों के चूलों के हिलने की आवाज सुनी जा सकती थी—परन्तु यह भयकारी नहीं थी।

क्या जल की तरंगें उनके दुर्ग पर चली आयेंगी? अन्दर जल के प्रविष्ट न होने की वहाँ पूरी व्यवस्था थी। १५ मिनट बाद एक निर्गमन-छिद्र (Port-hole) खोला गया। पानी अन्दर नहीं आया। लघुदुर्ग के आदमी परमाणविक मेघ (Atomic cloud) को देखने के लिए बाहर निकले।

जब वे उसका निरीक्षण करते रहे, जैक क्लार्क का विकिरण-यंत्र कुछ आँकड़े प्रस्तुत करने लगा। तुरत सभी लोगों को दुर्ग में वापस बुला लिया गया। वहाँ बालू के पर्याप्त परिमाण से घिरे एक निम्नतम कोने में वे सुरक्षित थे। बाहर, वाष्प बने और जमे हुए प्रवाल अधिकाधिक रेडियो-सक्रियता के साथ, छोटे दानों के रूप में विखरने लगे।

इसके साथ-साथ जहाजों पर भी विनाशकारी तत्वों की वर्षा हो रही थी। विस्फोट-काल के बाद वायु ने निश्चय ही अपनी दिशा बदल दी थी। शीघ्र ही

सक्रियता धो डाली गयी। किसी से भी इसका खतरनाक संयोग नहीं हो पाया, लेकिन अब वहाँ से जहाजों को हटा लेने में ही बुद्धिमानी थी। लघुदुर्ग को संदेश भेज दिया गया कि हम आप लोगों को लेने के लिए शाम को लौटेंगे।

लगभग एक घंटे से कुछ अधिक समय के बाद लघुदुर्ग के आसपास की सक्रियता में कमी आने लगी। विस्फोटकारी समुदाय धैर्यपूर्वक, बिना किसी संवाद-वहन या प्रकाश के, बाकी दिन वहीं रुका रहा।

अन्त में जहाज वापस आये। सूर्यास्त-वेला के समय, एक 'हेलीकोप्टर' दिन के यथासम्भव अन्तिम प्रकाश का उपयोग कर और सक्रियता को कम होने का अधिकाधिक अवसर देकर, द्वीप में उतरा। क्लार्क और उनके साथी ऐसी चादरों में अपने को लपेट कर, जिनसे बीटा-किरणों और रेडियो-सक्रिय धूल से रक्षा हो सके, लघुदुर्ग से बाहर निकले और शीघ्रातिशीघ्र विमान में चढ़ गये, ताकि खतरे की सम्भावना कम-से-कम हो।

यह एक बड़ा भयप्रद अनुभव था, लेकिन दो रोएंटजनों से अधिक का संयोग उनके शरीरों से नहीं हुआ और यह मात्रा चिकित्सा-सम्बन्धी क्ष-किरण के उपयोग से अधिक नहीं है। पर पूरब की ओर, कुछ लोग वस्तुतः संकट में थे।

विस्फोट के छः या सात घंटे बाद, रांजेरिक-स्थित अमरीकी सैनिकों ने अत्यधिक रेडियो-सक्रिय धूल की कुहरे-जैसी वर्षा देखी। परमाणविक मेघ को आबादीवाले क्षेत्रों—ऐलिंजिने, रांजलैप और रांजेरिक द्वीपों—की ओर ले जाने-योग्य परिमाण में वायु ने मोड़ ले ली थी। उन चिन्तनीय घंटों में कितनी क्षति पहुँची, कोई नहीं कह सकता था।

रांजेरिक के अमरीकियों को रेडियो-सक्रियता के खतरों के बारे में कुछ जानकारी थी। उन्होंने स्नान किया, अधिक कपड़े पहन लिये और अधिक-से-अधिक समय तक वे एल्युमिनियम की झोंपड़ियों के भीतर रहे। इस सावधानी के कारण वे बीटा-किरण से अपनी त्वचा को जलने से बचा सके, पर रांजलैप और ऐलिंजिने के मार्शल-निवासियों को इस खतरे के बारे में कोई जानकारी नहीं थी और इसलिए उन्होंने कोई सतर्कता नहीं बरती। उनमें से कई की त्वचा बुरी तरह जल गयी।

लक्ष्यपूर्ति-सेना की सुविधाओं के अनुसार, जितनी जल्दी उन आहत व्यक्तियों को वहाँ से हटाया जा सकता था, हटा कर काजालीन ले जाया गया।

किन्तु प्रवाल-द्वीप में घूम-घूम कर क्षति के परिमाण का अनुमान लगाने के लिए विकिरण-मापक यंत्रों के साथ आदमियों के भेजे जाने की व्यवस्था विस्फोट के लगभग एक सप्ताह के बाद ही की जा सकी।

रांजेरिक के दक्षिणी प्रदेश में जब उन्होंने सक्रियता को मापा, तब पता चला कि अमरीकी सैनिकों पर लगभग ७८ रोएंटजनों का प्रभाव हुआ था। यह एक सुसंवाद था, क्योंकि ५० से १०० रोएंटजनों तक की मात्रा घातक नहीं होती और शायद ही कभी इतनी मात्रा के कारण कोई व्यक्ति रुग्ण होता है। कुछ भी हो, ऐसे व्यक्तियों के कुछेक दिनों के अन्दर ही स्वस्थ हो जाने की आशा की जाती है।

पर रांजेरिक प्रवाल-द्वीप का भ्रमण करते हुए उस मापक-दल ने कुछ स्थानों पर काफी बड़े परिमाण में विकिरण का प्रभाव पाया। उत्तरी छोर पर तो एक व्यक्ति के शरीर में २०० से भी अधिक रोएंटजन रेडियो-सक्रियता प्रविष्ट हो सकती थी।

ऐलिंजिने प्रवाल-द्वीप में भी रांजेरिक के समान ही रेडियो-सक्रियता प्रकट हुई। ऐलिंजिने के निवासियों के शरीर में ६९ रोएंटजन रेडियो-सक्रियता प्रविष्ट हुई थी।

रांजलैप की स्थिति अधिक बुरी थी। प्रवाल-द्वीप के दक्षिणी भाग में हुई पैमाइश ने यह व्यक्त किया कि रांजलैप के निवासी लगभग १७५ रोएंटजन रेडियो-सक्रियता से प्रभावित हुए थे। इतनी मात्रा घातक तो नहीं होती, पर कुछ लोग बीमार जरूर हो सकते थे।

तदुपरान्त मापक-दल द्वीप के शेष भाग की जाँच में गया। ज्यों-ज्यों वे लोग उत्तर की ओर बढ़े, रोएंटजनों की मात्रा बढ़ती गयी। द्वीप के मध्य-भाग में, आबाद क्षेत्र से केवल १०-१५ मील दूर, शरीर में विकिरण की ४०० रोएंटजन से भी अधिक मात्रा प्रविष्ट हो सकती थी। लेकिन इस स्तर पर भी उसके जीवित बच जाने की ५० प्रतिशत सम्भावना रहती।

द्वीप के उत्तर-भाग में, लगभग ३० मील दूर, यह मात्रा एक हजार रोएंटजन से अधिक हुई होती। इतनी मात्रा के शरीर में जाने पर एक महीने के अन्दर मृत्यु निश्चित है।

निम्नलिखित तालिका में, वहाँ जो-कुछ हुआ था, वह सार-रूप में प्रस्तुत है।

	व्यक्तियों की संख्या	विस्फोट के उपरांत विनाशकारी तत्व-वर्षा का समय (घंटों में)	विस्फोट के उपरांत स्थानांतरण में लगा समय (घंटों में)	मात्रा (रोएंटजनों में)
रांजलैप	६४	४ से ६	५१	१७५
ऐलिंजिने	१८	४ से ६	५८	६९
रांजेरिक	२८	७	३२	७८
युटिरिक	१५७	२२	६५	१४
'सौभाग्यशाली पक्षीसर्प' (जापानी नौका)	२३	४		२००

क्वाजालीन में मार्शलवासियों की देखभाल की गयी और उनका चिकित्सा-जन्य पर्यवेक्षण किया गया। शीघ्रातिशीघ्र उनकी त्वचा और बाल को साबुन और पानी से साफ किया गया। पर उनके बाल में लगे नारियल के तेल ने स्वच्छीकरण को कुछ कठिन बना दिया।

इस सम्पूर्ण अवधि में उस क्षेत्र में जापानी मछुआ-नौका की उपस्थिति की शंका तक नहीं की गयी थी। विस्फोट के दो सप्ताह बाद, जब वह छोटी नौका यैजू (Yaizu) बन्दरगाह में पहुँची, तब कहीं लोगों को उसका पता लगा। उस समय तक, उस पर सवार २३ व्यक्ति काफी बीमार हो गये थे। हमें ठीक-ठीक तो नहीं मालूम कि उन मछुओं में रोएंटजनों की कितनी मात्रा थी, पर अनुमानतः वह २०० थी। दुर्भाग्यवश उन मछुओं में से एक की मृत्यु, सम्भवतः विकिरण के सम्मुख पड़ने से सम्बद्ध कारणों से, हो गयी।[1] पर बाकी २२ अब स्वस्थ हैं और पुनः अपने काम में लग गये हैं।

मार्शल-द्वीपवासियों के सम्बन्ध में हमारी चिकित्सा-सम्बन्धी सूचनाएँ पूर्ण हैं। क्वाजालीन में तीन मास तक रहने के बाद, उन्हें मजुरो (Majuro)

१. इस बात की काफी सम्भावना प्रतीत होती है कि उसकी मृत्यु एक तरह के यकृत-शोथ (Hepatitis) से हुई, जो कि विकिरण-प्रभाव से सम्पूर्णतः असम्बद्ध था।

प्रवाल-द्वीप में ले जाया गया, जहाँ उनके लिए मकान बनवा दिये गये थे और जहाँ उनके स्वास्थ्य की देखरेख उस घटना के बाद से बराबर हो रही है। प्रायः ही उनके सम्पूर्ण चिकित्सा-जन्य परीक्षण किये गये, हालाँकि उनसे बातचीत के लिए एक दुभाषिये की समस्या बराबर बनी रही।

पहले २४ घंटों में कुछ विकिरण-प्रभावित लोगों ने मिचली, ज्वर और उदर-पीड़ा की शिकायत की। लेकिन ये शिकायतें बिना किसी इलाज के ही शीघ्रता से दूर हो गयीं। त्वचा में पीड़ा और जलन की भी कुछ शिकायतें थीं, पर वे भी कुछ दिनों के अन्दर ही दूर हो गयीं। इसके बाद एक सप्ताह तक उन्हें पूरा आराम रहा और उन्होंने कोई शिकायत नहीं की। तदुपरान्त त्वचा पर घाव होना और बाल उड़ना आरम्भ हुआ।

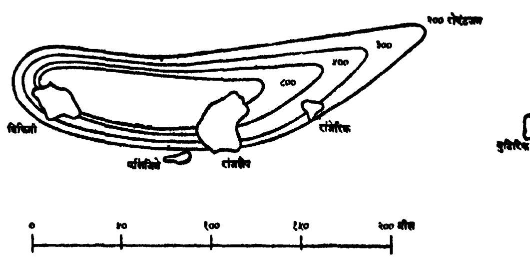
इस संयोग-काल में ५० से ८० प्रतिशत तक बीटा-किरणों में औसत रूप से ३ लाख इलेक्ट्रन-वाल्ट शक्ति थी। इस शक्ति का एक बड़ा भाग त्वचा की बाह्य परत में, जो कि एक इंच का २ हजारवाँ भाग मोटी होती है, रुक गया। शेष बीटा-किरणों में औसत रूप से ६ लाख इलेक्ट्रन-वाल्ट शक्ति थी—ये बीटा-किरणें आसानी से त्वचा की आन्तरिक परत में प्रविष्ट हो सकती थीं। पर सर्वाधिक महत्वपूर्ण तथ्य यह था कि किसी भी तरह का वस्त्र, एक बारीक सूती वस्त्र भी, सभी बीटा-किरणों से सुरक्षा प्रदान कर सकता था। घाव शरीर के केवल उन्हीं भागों में हुए, जो कपड़ों से ढँके नहीं थे, अर्थात् बीटा-किरणों के आक्रमण के सामने खुले हुए थे। उन भागों में भी घाव हुए, जहाँ पदार्थ के एकत्र होने की गुंजाइश रहती है, जैसे काँख और गर्दन। लेकिन नंगे पैरों की अवस्था सबसे खराब थी। उस संकट-काल में कुछ लोग अपनी एड़ी के बल चले थे।

छः महीने बीतने पर उड़े हुए बाल पुनः उसी परिमाण और रंग में उग आये तथा त्वचा के घाव भी भर गये। सभी व्यक्ति स्वस्थ होकर अपनी सामान्य स्थिति में दिखायी देने लगे। उन पर कोई परवर्ती प्रभाव नहीं परिलक्षित होता था।

विस्फोट-काल में रांजलैप की चार स्त्रियाँ गर्भवती थीं। इनमें से एक के मृत बच्चा पैदा हुआ और बाकी तीन के बच्चे सामान्य अवस्था में थे। पर इस बात का भी कोई प्रमाण नहीं है कि वह बच्चा विकिरण के प्रभाव के कारण ही मरा था। वस्तुतः रांजलैप-निवासियों में मृत बच्चों के जन्म का प्रतिशत यों ही बहुत अधिक है। आँकड़ों की दृष्टि से, चार में से एक बच्चे का मृत-रूप में जन्म लेना अस्वाभाविक नहीं है।

आज, उस दुर्घटना के तीन वर्ष बाद, विकिरण से प्रभावित सभी मार्शल-निवासी और अमरीकी पूरी तरह स्वस्थ प्रतीत होते है। किसी भी तरह की बुराई या रक्त के श्वेत कोषों की वृद्धि की शिकायत अब तक नहीं देखी गयी है, लेकिन अब भी दीर्घावधिवाले प्रभावों का, परमाणविक शक्ति-आयोग का चिकित्सक-दल, बड़ी गम्भीरता से निरीक्षण कर रहा है।

फिर भी, कुछ गम्भीर, किन्तु सीमित क्षति पहुँची है। इसे बाल-बाल बचना ही कहा जा सकता है। यह रक्षा भी एक संयोग-मात्र था। नीचे के नक्शे को देखने से यह स्पष्ट हो जायेगा। इस नक्शे में ४५ घंटे तक विकिरण का संयोग बना रहने के कारण उत्पन्न रोएंटजन की मात्रा दिखलायी गयी है। रांजलैप के दक्षिणी हिस्से में, जहाँ लोग रहते थे, यह मात्रा १७५ रोएंटजन थी। लेकिन केवल ३० मील दूर, उत्तरी हिस्से में, यह मात्रा १००० रोएंटजनों से अधिक थी। यदि वायु का मुड़ाव केवल कुछ और दक्षिण की ओर होता, तो सम्भवतः ऐलिंजिने, रांजलैप और रांजेरिक द्वीपों के सभी लोग मर जाते।



विनाशकारी तत्वों की वर्षा आरम्भ होने के बाद के प्रथम ४८ घंटों में विकिरण की मात्रा का नक्शा

इस विस्फोट ने कई वर्षों से विवादग्रस्त इस बात को प्रमाणित कर दिया कि रेडियो-सक्रियता एक परमाणविक विस्फोट का केवल आकस्मिक अंश नहीं है। रांजलैप के निवासी विस्फोट और ऊष्मीय प्रभावों के खतरे के क्षेत्र से काफी बाहर थे। किन्तु उन्हें विकिरण की एक अच्छी मात्रा से निबटना पड़ा। वास्तव में, एक व्यक्ति विस्फोट-स्थल से केवल ३० मील की दूरी पर, अरक्षित खड़ा रह कर भी, विस्फोट और ऊष्मीय विकिरण से सर्वथा सुरक्षित रह सकता था; लेकिन हवा के रुख की ओर, उतनी ही दूरी पर खड़ा रह कर,

वह विनाशकारी तत्व वर्षा आरम्भ होने के कुछ ही मिनटों के अन्दर प्राणघातक मात्रा में विकिरण ग्रहण कर लेता।

रेडियो-सक्रिय विनाशकारी तत्व-वर्षा के कारण ही, परीक्षण-स्थल विश्व के निर्जन स्थानों में होने चाहिए। अच्छा होता, यदि आबाद क्षेत्रों से इतनी दूरी पर परीक्षण-स्थल ढूँढ़े जाते, जहाँ हवा के रुख का खयाल किये बिना परीक्षण किये जा सकते। दुर्भाग्यवश, बम बहुत बड़े हैं और हमारा यह पृथ्वी-ग्रह बहुत छोटा है।

परिणामतः हर परीक्षण के पहले, हवा पर अवश्य ही नजर रखी जानी चाहिए और यदि वह अनुकूल न हो, तो परीक्षण को स्थगित कर देना चाहिए। मार्शल-द्वीप में जो-कुछ हुआ, वह एक दुर्घटना थी और उसका प्रतिकार हो सकता था, यदि हवा विस्फोट के समय सीधे उत्तर की ओर बहती। इस दुर्घटना के बाद, परीक्षणों के लिए अनुकूल हवा की आवश्यकता अधिक स्पष्ट हो गयी, खतरा-सम्बन्धी हमारा ज्ञान बढ़ा और सुरक्षा के नियम हर दृष्टि से सुधरे। १ मार्च, १९५४ के बाद कई बड़े शक्तिशाली अस्त्रों के परीक्षण हुए हैं, लेकिन कोई दुर्घटना नहीं घटी है। अब हम इस बारे में निश्चिंत हो सकते हैं कि इस तरह की दुर्घटनाएँ काफी असम्भाव्य हैं।

नेवदा (Nevada) के अमरीकी परीक्षण-स्थल के आसपास के आबाद क्षेत्रों में बड़े पैमाने पर विनाशकारी तत्व-वर्षा होने का कोई दृष्टान्त उपलब्ध नहीं है। वहाँ सम्भवतः जो सर्वाधिक चिन्तनीय स्थिति उत्पन्न हुई, वह १९५३ की वसंत-ऋतु में, जब आकाशीय विस्फोट (Upshot-knothole) की परीक्षण-शृंखला आरम्भ हुई। इस शृंखला के नवें विस्फोट के बाद मेघ पूरब में सेंट जार्ज, ऊटा, की ओर बढ़ा। यह नगर ५ हजार लोगों की आबादी का है। सबेरे ९ बजे के कुछ पहले वहाँ थोड़ी रेडियो-सक्रिय तत्व-वर्षा हुई। लगभग साढ़े नौ बजे परमाणविक शक्ति-आयोग के अधिकारियों ने वहाँ के निवासियों को चेतावनी दे दी कि वे अपने-अपने घरों के अन्दर ही रहें। दोपहर तक चेतावनी वापस ले ली गयी और लोगों को अपना रोजमर्रे का काम शुरू करने की अनुमति दे दी गयी। इस घटना ने सभी लोगों को थोड़ा भयभीत तो कर दिया, पर किसी भी व्यक्ति के शरीर में २-३ रोएंटजन से अधिक मात्रा में विकिरण प्रवेश नहीं पा सका।

हम अब तक परीक्षण-स्थल से कुछ सौ मील की दूरी में ही होनेवाली अर्थात् स्थानीय विनाशकारी तत्व-वर्षा (Local Fall-out) की चर्चा करते

रहे हैं। लेकिन विस्फोट में पैदा हुई सम्पूर्ण रेडियो-सक्रियता इस स्थानीय वर्षा में ही नहीं लग जाती। इसमें से कुछ काफी दूर तक—केवल कुछ सौ मील नहीं, बल्कि विस्फोट-सम्मुखीन भूमि (Ground zero) से हजारों मील दूर तक—यात्रा करती है। रेडियो-सक्रियता का यह भाग विश्व-भर में फैलता है और मनुष्य के नियंत्रण से सम्पूर्णतः बाहर हो जाता है। जब तक यह रेडियो-सक्रियता केवल पार्थिव सतह के एक बड़े भाग में फैलती रहती है, तब तक विकिरण की मात्राएँ, निश्चय ही, बहुत कम रहती हैं—एक मेगाटन विस्फोट पर एक रोएंटजन का दस हजारवाँ हिस्सा। इतनी मात्रा से न तो किसी व्यक्ति के मरने की आशंका की जा सकती है और न थोड़ा-सा बीमार होने की ही। परन्तु दीर्घावधिवाले प्रभावों—जैसे हड्डी का कैंसर (Bone Cancer), रक्त के श्वेत कोषों में वृद्धि (Leukemia) और जन्म-सम्बन्धी स्थित्यन्तर (Genetic Mutation)—की सम्भावना बनी रहती है।

निस्सन्देह, विश्वव्यापी खतरा मुख्यतः बड़े बमों के कारण ही है। जिस तरह के बमों का नेवदा में परीक्षण हुआ, वैसे छोटे बम लगभग १० किलोटन (टी-एन-टी के बराबर) विघटनोद्भूत शक्ति परिमुक्त करते हैं। प्रशान्त-क्षेत्र में विस्फोटित कुछ बड़े बम कई मेगाटन विघटनोद्भूत शक्ति पैदा करते हैं। चूँकि रेडियो-सक्रियता का परिमाण परिमुक्त विघटनोद्भूत शक्ति के अनुपात में होता है; अतः एक बड़ा बम कई सौ—या सम्भवतः कई हजार—छोटे बमों के बराबर होता है। नेवदा में कुल मिला कर अब तक ६० या ७० विस्फोट हुए हैं। प्रशान्त-क्षेत्र में बड़े विस्फोटों के फलस्वरूप विश्वव्यापी विनाशकारी तत्व-वर्षा को कम करना तो आवश्यक माना जा सकता है, परन्तु नेवदा के छोटे विस्फोटों के लिए सम्भवतः यह बात अधिक महत्वपूर्ण है कि स्थानीय विनाशकारी तत्व-वर्षा कम की जाये। कितनी रेडियो-सक्रियता स्थानीय विनाशकारी तत्व-वर्षा में जाती है, कितनी विश्वव्यापी वर्षा में और कैसे इन सापेक्ष परिमाणों को नियंत्रित किया जा सकता है—इन्हीं बातों पर इस अध्याय के शेष अंश में विचार किया जायेगा।

विस्फोट में पैदा हुई सम्पूर्ण रेडियो-सक्रियता विनाशकारी तत्व-वर्षा—स्थानीय या विश्वव्यापी—में शामिल नहीं होती। कुछ रेडियो-सक्रिय विघटनोद्भूत खंडों (गामा-परित्यागी) के अर्द्धकाल[1] तो इतने छोटे होते हैं

---

1. रेडियो-सक्रिय न्यष्टियों के अर्द्धजीवन विस्फोट की चरम ऊष्माओं, चापों अथवा कणों की गति की अवस्था या उनके स्थान से प्रभावित नहीं होते।

कि वे बम के बिखरने के पहले ही विघटित हो जाते हैं। कई अन्य, प्रथम पाँच मिनटों में, जब कि परमाणविक मेघ ऊपर उठता रहता है, विघटित हो जाते हैं। इन शीघ्र और तीव्र विघटनों में परिमुक्त होनेवाली शक्तिशाली बीटा और गामा-किरणें कुछ ही दूर जाकर रुक जाती हैं और केवल विस्फोट-स्थल पर के आतंक में वृद्धि करती हैं।

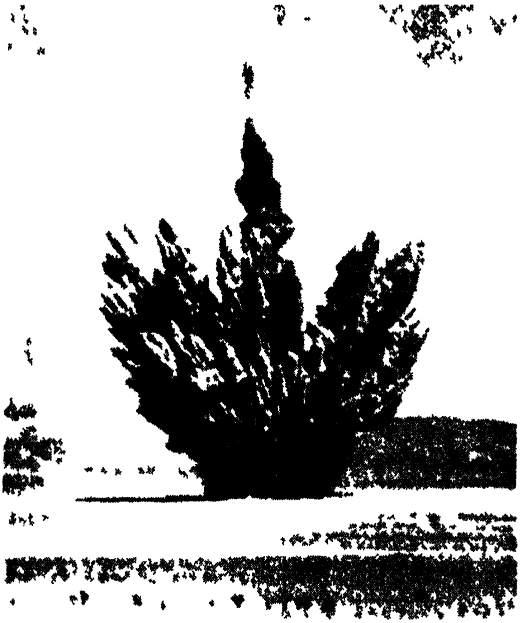
विस्फोट-स्थल से काफी दूरस्थ क्षेत्रों पर रेडियो-सक्रियता का प्रभाव पड़ने के लिए काफी समय बीतना आवश्यक होता है। इस बीच परमाणविक मेघ ऊपर उठ कर क्षितिजीय हवाओं के साथ मँडराता है। इस काल में, मुख्यतः अल्पजीवी न्यष्टियों के कारण, और भी विघटन होते हैं। विघटन का परिमाण अल्पजीवी न्यष्टियों के विलीन होने के साथ-साथ कम होता जाता है। मोटे तौर पर, समय के अनुपात से इसमें कमी आती है। संक्षेप में, जब समय में वृद्धि १-७ के हिसाब से होती है, तो परिमाण अधिक तेजी से — १-१० के हिसाब से — कम होता है। विस्फोट के एक मिनट बाद सक्रियता, उस सक्रियता की तुलना में, जो विस्फोट के एक सेकण्ड बाद थी, १ प्रतिशत कम होती है और एक घंटे बाद तो वह, एक मिनट बाद की सक्रियता की तुलना में १ प्रतिशत से भी कम हो जाती है। विघटनोत्पादनों की सक्रियता में कमी का यह नियम अलबत्ता रेडियो-सक्रिय क्षय के साधारण नियम से बिल्कुल अलग है। परवर्ती नियम केवल एकाकी रेडियो-सक्रिय पदार्थ पर लागू होता है, जबकि विघट-नोत्पादनों में अनेक रेडियो-सक्रिय पदार्थ होते हैं। इनमें से प्रत्येक रेडियो-सक्रिय क्षय के साधारण नियम का पालन करता है, परन्तु सब मिल कर एक अन्य नियम को चरितार्थ करते हैं।

यह बात ध्यान में रखी जानी चाहिए कि एक रेडियो-सक्रिय विघटन से उत्पन्न न्यष्टि स्वयं ही एक पृथक् अर्द्धजीवन-सम्पन्न रेडियो सक्रिय तत्व हो सकती है। उदाहरण के लिए, स्ट्रानटियम^{९०} को ही ले लीजिये। इस आइसोटोप का एक लघुपरिमाण ही सीधे विघटन-प्रक्रिया से तैयार होता है। विघटन-प्रक्रिया में क्रिप्टन^{९०} एक बड़े परिमाण में तैयार होता है, जो कि आधे मिनट के अर्द्धजीवन में रुबिडियम^{९०} (Rubidium^{90}) में रूपांतरित होता है। रुबिडियम^{९०} का अर्द्धकाल तीन मिनट का होता है और यह स्ट्रानटियम^{९०} में क्षयमान होता है। विस्फोट में स्ट्रानटियम^{९०} के तैयार होने की यही प्रक्रिया है। इस प्रकार रेडियो-सक्रियता की सघनता और प्रकृति, दोनों ही समय के साथ परिवर्तित होती रहती हैं।

ये तथ्य बड़े महत्वपूर्ण हैं, क्योंकि इनसे उस खतरे के परिमाण और स्वरूप का पता चलता है, जो रेडियो-सक्रियता के मेघ से गिर कर पृथ्वी की सतह पर एकत्र होने पर पैदा होता है। उन रेडियो-सक्रिय कणों से, जो मेघ में ही विघटित हो जाते हैं, हमें परेशानी नहीं होनी चाहिए, क्योंकि इस विकिरण का जीवनधारियों पर कोई प्रभाव नहीं हो सकता। यदि मेघ पृथ्वी से कुछ सौ फुट ऊपर हों, तो इन विघटनों से परिमुक्त होनेवाली बीटा और गामा-किरणें अपनी शक्ति केवल हवा के आयनीकरण में खर्च कर देती हैं।

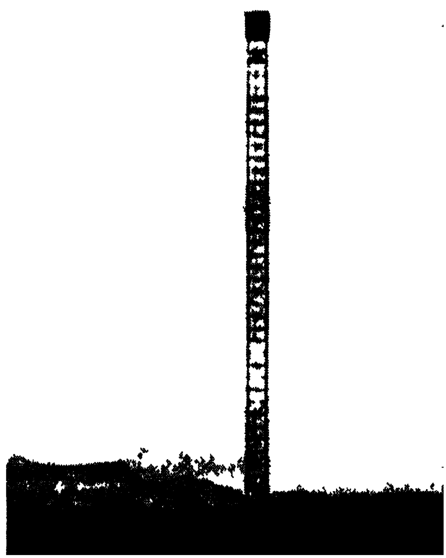
रेडियो-सक्रिय अवशेष मेघ में कितना समय बिताते हैं, यह खास कर एक बात पर निर्भर करता है—पृथ्वी की सतह से विस्फोट की निकटता। सतह की किस्म—मिट्टी हो या पानी—का भी इस पर प्रभाव पड़ता है। यदि विस्फोट भूमि पर अर्थात् मिट्टी की सतह पर हुआ है, तो काफी बड़े और भारी धूल के कण अग्निगोले में मिल जाते हैं और मेघ के ऊपर उठने के पहले ही गुरुत्वाकर्षण के कारण नीचे गिरने लगते हैं। यह वर्षा कुछ घंटों से लेकर सम्भवतः आधे दिन तक होती है। इसके साथ ही कुछ रेडियो-सक्रिय विघटनोत्पादन भी, जो इन धूल-कणों से संयोग कर लेते हैं, नीचे गिरते हैं। यही तथाकथित निकटवर्ती और स्थानीय विनाशकारी तत्व-वर्षा का मूल है, जो विस्फोट-स्थल से हवा के रुख की ओर कुछ मीलों से लेकर कुछ सौ मीलों तक, बम की शक्ति और हवा की तेजी के अनुसार, फैलती है। एक सतहवर्ती विस्फोट में प्रस्तुत विघटनोत्पादनों का लगभग ८० प्रतिशत भाग इस निकटवर्ती वर्षा में शामिल होता है। १ मार्च, १९५४ का विस्फोट इसी ढंग का था।

निकटवर्ती विनाशकारी तत्व-वर्षा के परिमाण को प्रभावित करनेवाली कई सम्भावनाएँ हैं। एक है, बम का गहरे पानी पर विस्फोट। इस दशा में निकटवर्ती विनाशकारी तत्व-वर्षा का परिमाण ३० से ५० प्रतिशत तक होता है। ऐसा इसलिए होता है कि पानी की बहुत-सी बूँदें, जिनसे रेडियो सक्रिय कण संयुक्त होते हैं, जमीन पर आने से पहले ही वाष्प हो जाती हैं। परन्तु पानी छिछला रहने पर यदि अग्निगोला वस्तुतः तले से छू जाता है, तो निकटवर्ती विनाशकारी तत्व-वर्षा भूमि पर हुए विस्फोट के समान ही होती है—लगभग ८० प्रतिशत। भूगर्भ या पानी के अन्दर किये जानेवाले विस्फोटों की निकटवर्ती विनाशकारी तत्व-वर्षा सतहीय विस्फोटों से भी अधिक होती है। वस्तुतः काफी गहरे भूगर्भ में या पानी के अन्दर होनेवाला विस्फोट सम्पूर्णतः आत्मनिहित होगा और कोई सक्रियता आसपास नहीं फैलेगी।



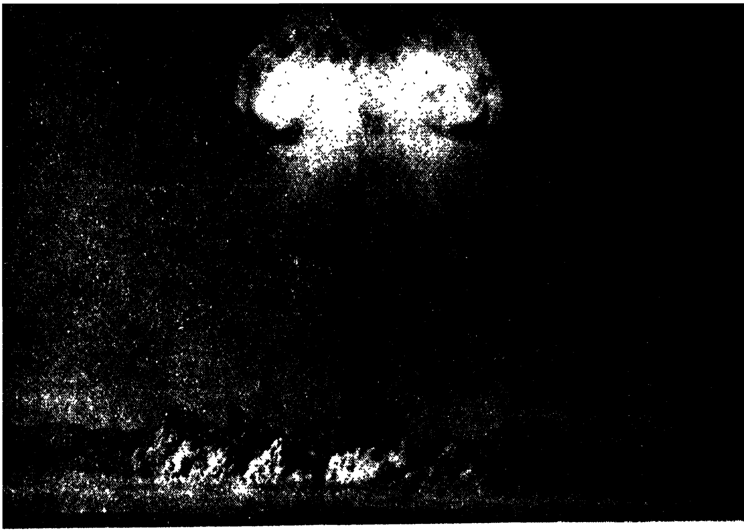
१. जमीन के भीतर कम गहराई पर किया गया विस्फोट। रेडियो-सक्रियता जमीन की गर्द के साथ अच्छी तरह घुलमिल गयी है।

यू एस ए इ सी—
परीक्षण मत्रनालय
का संयुक्त कार्यालय



२. परमाणविक परीक्षण के लिए निर्मित पाँच सौ फुट ऊँचा 'टावर'

यू एस ए इ सी—लुकआउट
माउटेन लेबोरेटरी
यू एस ए एफ

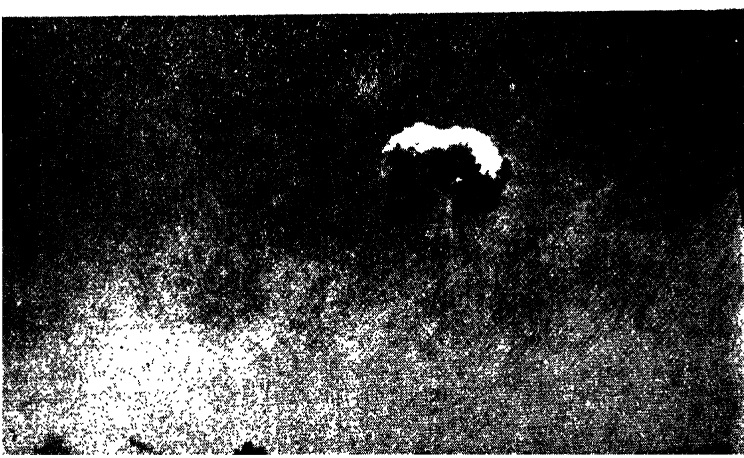


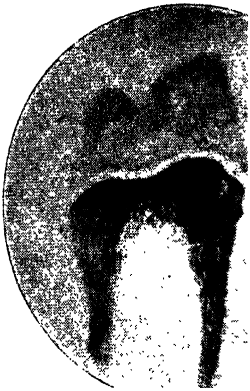
यू एस ए ई सी

३. 'टावर'-विस्फोट — इसमें जमीन से गर्द तो उठती है, लेकिन अग्निगोले के साथ बहुत कम मिल पाती है।

४. जमीन से ३५०० फुट की ऊँचाई पर किया गया हवाई विस्फोट— इसमें जमीन से गर्द बिल्कुल नहीं उड़ती।

एल्टन पी. लार्ड – यू एस ए ई सी





५. एस. आर.^{८९} से इन्जेक्शन देने के दस मिनट बाद मरे हुए एक तीन मास के खरगोश की टाँग की हड्डी। जहाँ-जहाँ स्ट्रानटियम का जमाव हुआ है, वह जगह काली पड़ गयी है। एस. आर.^{९०} और सामान्य एस. आर.^{८९} भी इसी स्थान पर जमा होंगे। यह बात महत्व की है कि यह जमाव हड्डी के जले हुए भाग में समान रूप से हुआ है।

आक्सफोर्ड युनिवर्सिटी प्रेस से १९५२ में प्रकाशित 'बायोलोजिकल हेजार्ड्स आफ एटोमिक एनर्जी' के एक अध्याय से



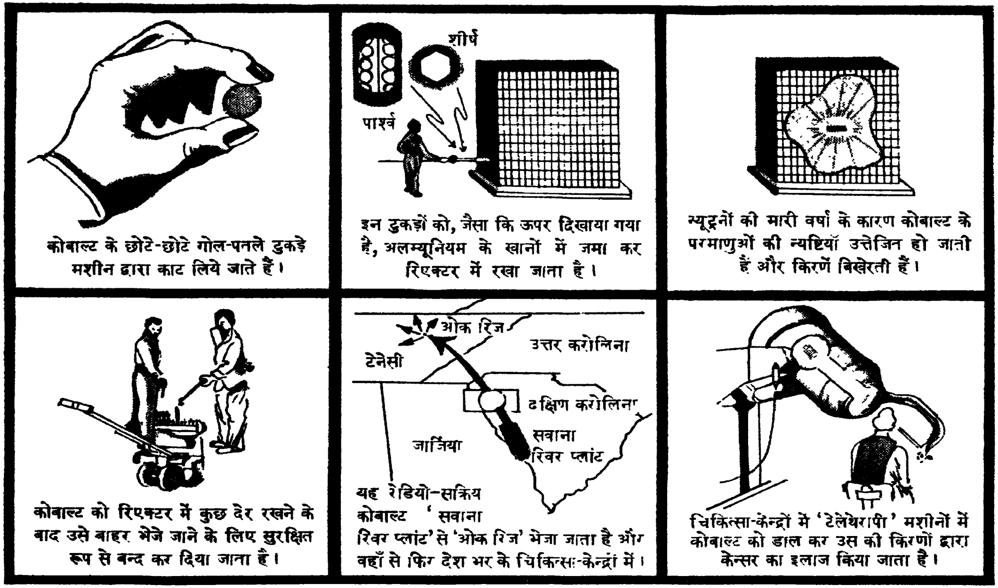
६. रेडियम के विष से मृत एक स्त्री की टाँग की हड्डी। जहाँ-जहाँ रेडियम का जमाव हुआ है, वह हिस्सा सफेद दिखायी देता है और वह कहाँ अधिक हुआ है, यह भी साफ जाहिर है।

'मेडिसिन' पत्र के सितंबर-अंक में प्रकाशित एक लेख से



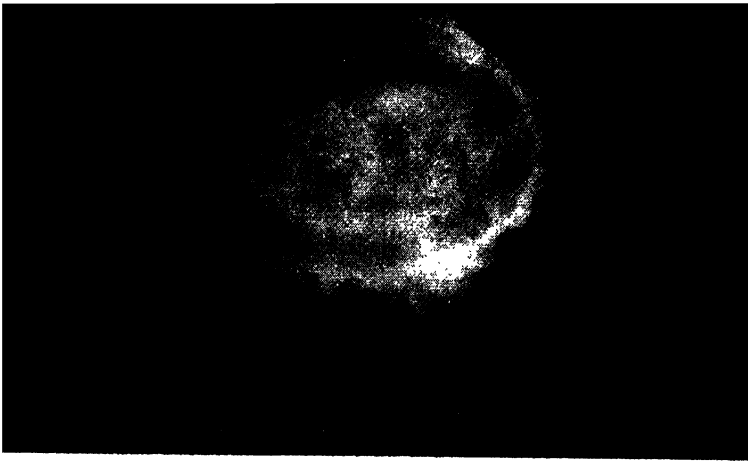
यू एस ए ई सी – नोल्स एटोमिक पावर लेबोरेटरी

७. कोबाल्ट^{६०} के 'केप्स्यूल' पानी से भरे हौज में सुरक्षित रखे हैं। 'गामा' के इस सबल स्रोत की किरणों की बराबरी करने के लिए संसार-भर में इस समय प्राप्य रेडियम से भी दुगुने अर्थात् १२ करोड़ डालर की कीमत के रेडियम की आवश्यकता होगी।



यू एस ए ई सी

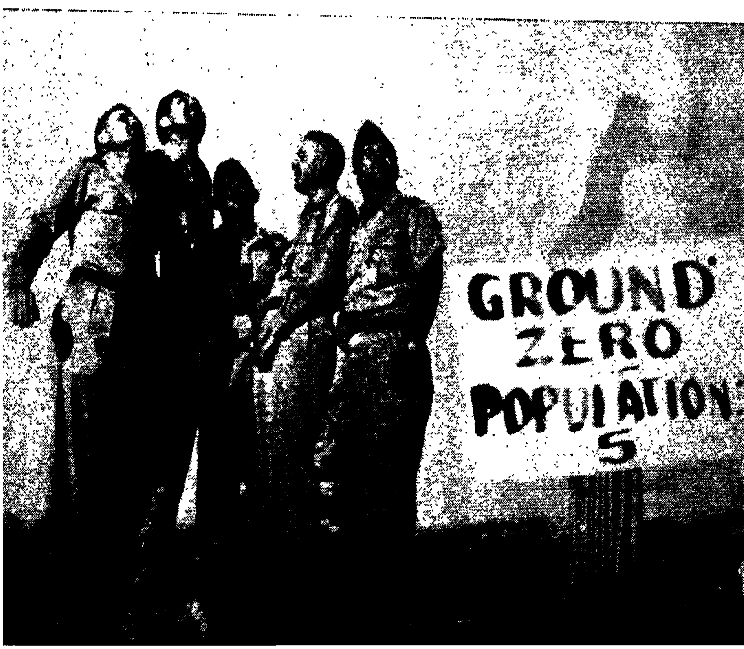
८. रेडियो-सक्रिय कोबाल्ट की किरणों का उपयोग

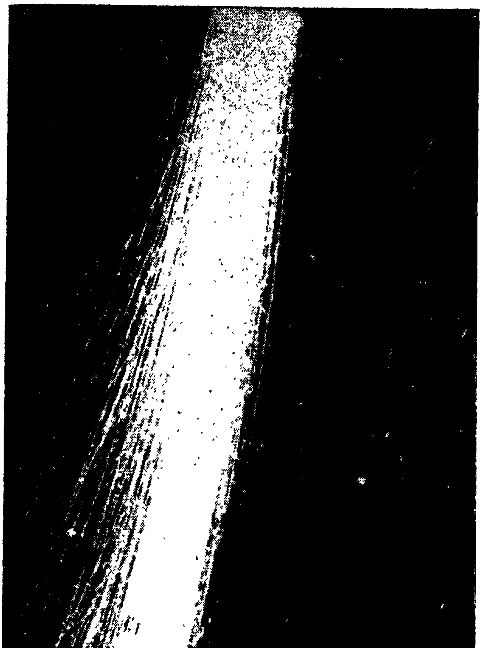


एन टी ओ — लुकआउट माउन्टेन लेबोरेटरी फोटो

९ वायु-प्रतिरक्षा के परमाणविक अस्त्र का गोलाकार धुएँ का बादल।

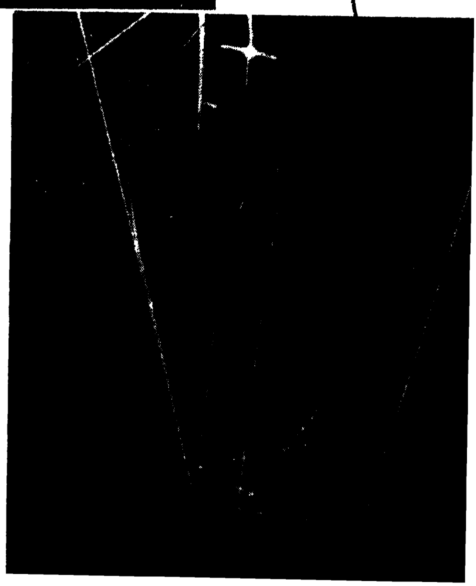
१०. —वाइड वर्ल्ड फोटो





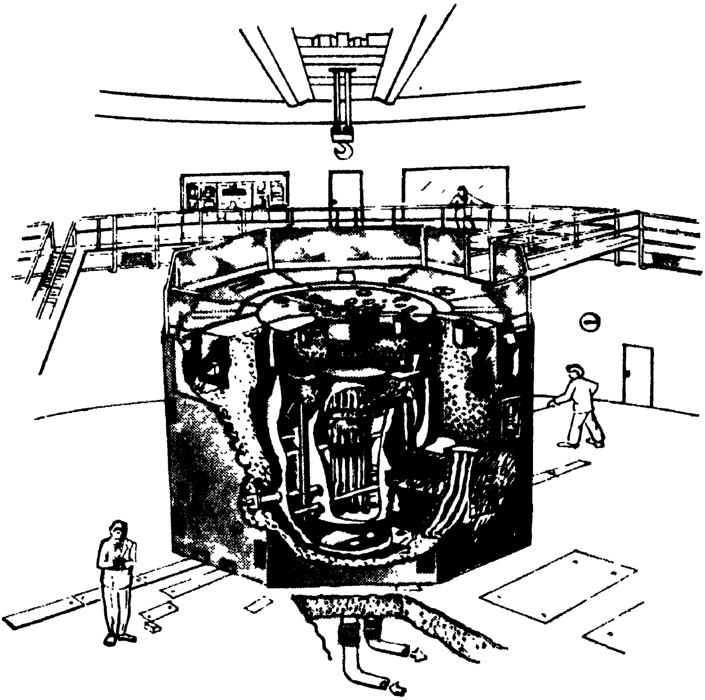
११. ये रेखाएँ 'विल्सन क्लाउड चेम्बर' में विद्युन्मय कणों के भ्रमणपथ हैं। ये चमकदार इसलिए हैं कि 'चेम्बर' प्रकाशमान है और भ्रमणपथ सामान्य मेघ की ही तरह प्रकाश को प्रतिबिम्बित करते हैं।

केलिफोर्निया युनिवर्सिटी की रेडिएशन लेबोरेटरी



१२. 'विल्सन क्लाउड चेम्बर' का एक और चित्र। भ्रमणपथ आपस में सटे होने के कारण मेघ-से दिखायी पड़ रहे हैं। (चुम्बकीय क्षेत्र के वर्तमान होने के कारण ये मार्ग सीधे न रह कर वक्र हो गये हैं।)

केलिफोर्निया युनिवर्सिटी की रेडिएशन लेबोरेटरी



यू एस ए ई सी — अरगोने नेशनल लेबोरेटरी

१३. न्यैष्ठिक प्रतिकारी अर्थात् रिएक्टर का एक ओर से खुला भाग — इस यंत्र का प्रमुख अंग छोटा-सा है और केन्द्र में है। विघटन-द्वारा प्राप्त शक्ति (Fission energy) का उत्पादन यहीं होता है। यंत्र का अधिकांश वजन व आकार उन हिस्सों का है, जो इसे ठंडा रखने और न्यैष्ठिक विकिरण को सुरक्षित रूप से बंद रखने के काम में आते हैं।

निकटवर्ती विनाशकारी तत्व-वर्षा को कम करने की दूसरी सम्भावना बम का इतने ऊँचे स्तम्भ पर विस्फोट किया जाना है कि अग्निगोला भूमि की सतह को न छू सके। इस दशा मे निकटवर्नी विनाशकारी तत्व-वर्षा का परिमाण ८० प्रतिशत से घट कर लगभग ५ प्रतिशत हो जाता है। निस्सन्देह, बड़े बमों के लिए इतने ऊँचे स्तम्भों का निर्माण करना सम्भव नहीं है, क्योंकि उनका अग्निगोला व्यास में एक मील या उसके आसपास होता है। इस दशा में बम को वायुयान से गिरा कर भी वही बात पैदा की जा सकती है। हिरोशिमा का विस्फोट एक छोटे बम के हवाई विस्फोट का दृष्टान्त था। उसकी निकटवर्ती विनाशकारी तत्व-वर्षा बहुत थोड़ी थी। विकिरण-सम्बन्धी जो बीमारी वहाँ फैली, वह स्वयं विस्फोट-द्वारा परिमुक्त गामा-किरणों और न्यूट्रनों के कारण थी।

निकटवर्ती भूमि-सतह के विस्फोट की दशा में भी, जहाँ अग्निगोला पृथ्वी को लगभग छू लेता है, निकटवर्ती विनाशकारी तत्व-वर्षा केवल पाँच प्रतिशत होती है। यह बात किंचित् विस्मयकारी भी है, क्योंकि फोटोग्राफ बतलाते हैं कि, इस दशा में भू-सतह से काफी बड़े परिमाण में पदार्थ मेघ की ओर उसी प्रकार खिंच जाता है, जैसा भू-सतह के विस्फोट में होता है।

इस पदार्थ में, निश्चय ही बड़े, और भारी धूल-कण होते हैं, जो शनैः-शनैः मेघ से नीचे गिरते हैं। फिर भी, उनमें से अधिकांश का किसी कारणवश रेडियो-सक्रिय विघटनोत्पादनों से सम्पर्क नहीं होता।

इस विचित्र परिस्थिति को, अग्निगोला के ऊपर उठने की क्रिया को, भली प्रकार देख कर ही समझा जा सकता है। पहले आग्निगोले का केन्द्रीय भाग बाहरी भाग की अपेक्षा अधिक गर्म होता है, इसलिए अग्निगोला अधिक तेजी से ऊपर उठता है। पर ज्यों-ज्यों वह ऊपर उठता है, ठंडा होता जाता है और अपने बाहरी भाग की ओर गिरता है। इस प्रकार एक 'रिंगबाल' की तरह का आकार वह प्राप्त कर लेता है। यह सम्पूर्ण प्रक्रिया एक साधारण धुएँ के चक्रनिर्माण की तरह की होती है। अधिकांश फोटोग्राफों में यही दिखाई पड़ता है कि 'रिंगबाल'-सदृश आकार जल-मेघ से ढँका है; पर कभी-कभी, जब मौसम खूब सूखा रहता है, वह अच्छी तरह दिखाई पड़ता है। इस छिद्र से हवा के नियमित प्रसारण के समय बम के अवशेष और मेघ-द्वारा खींची गयी धूल, दोनों अलग-अलग रहते हैं।

निकटवर्ती विनाशकारी तत्व-वर्षा में रेडियो-सक्रियता का केवल एक हिस्सा शामिल होता है—काफी ऊँचाई पर किये गये विस्फोटों में यह हिस्सा एक प्रतिशत से भी कम होता है और कुछ भूमि-विस्फोटों के मामले में शत-प्रति-

शत हो जाता है। विश्वव्यापी विनाशकारी तत्व-वर्षा की दृष्टि से हमारी दिलचस्पी केवल इस बात में है कि शेष रेडियो-सक्रियता का क्या होता है। यह इस बात पर निर्भर करता है कि ऊँची हवाएँ, किस तरह परमाणविक मेघ को दूर-दूर तक ले जाती हैं। इस सम्बन्ध में, एक बड़े बम और एक छोटे बम के अन्तर को जान लेना महत्वपूर्ण है। साथ ही, वातावरण के निम्नतर और उच्चतर भागों को भी, जिन्हें क्रमशः मौसमी क्षेत्र (Troposphere) और मौसमोत्तर-क्षेत्र (Stratosphere) कहते हैं, समझ लेना महत्वपूर्ण है।

वातावरण एक परोक्ष ढंग से सूर्य-द्वारा गर्म होता है। सूर्य की किरणें हवा से होकर, बिना उसे गर्म किये, गुजर जाती हैं। वे वातावरण के तले को, यानी ठोस धरती को, गर्म करती हैं। वातावरण उसी ढंग से गर्म होता है, जिस ढंग से चूल्हे पर पानी उबालने के लिए चढ़ाया हुआ बर्तन, अर्थात् गर्मी या ऊष्मा नीचे परिमुक्त होती है और ऊपर उठती तरंगों के साथ ऊँचाई पर पहुँचती है।

परन्तु वातावरण की कोई निश्चित ऊपरी सीमा नहीं है। तरंगें ३० से ५० हजार फुट तक ऊपर उठती हैं और फिर लौट कर नीचे उतरने लगती हैं। वातावरण का यह गर्म भाग मौसमी क्षेत्र या 'ऊष्मा-प्रदेश' कहलाता है। इसके ऊपर के क्षेत्र में शीर्षमुखीन गति बहुत कम होती है। यही क्षेत्र 'मौसमोत्तर' या 'स्तरीय' क्षेत्र कहलाता है।

एक छोटे बम का परमाणविक मेघ मौसमोत्तर-क्षेत्र में पहुँचने से पहले ही ऊपर उठना बंद कर देता है। लेकिन एक मेगाटन से कुछ अधिक (१० लाख टन टी-एन-टी के बराबर) शक्तिवाले बड़े बम का मेघ मौसमोत्तर-क्षेत्र को चीरते हुए सीधा ऊपर उठता जाता है–लगभग एक लाख फुट की ऊँचाई तक।

मौसमोत्तर-क्षेत्र के बारे में सर्वाधिक महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि इसमें बहुत कम मौसम होता है। मौसम की अधिकांश वस्तुएँ–जैसे मेघ, वर्षा, बर्फ, कुहरा, आदि–वातावरण के निम्नतर भाग, मौसमी क्षेत्र, तक ही सीमित रहती हैं। मौसमोत्तर-क्षेत्र में प्रायः बिल्कुल ही पानी नहीं होता।

अब कल्पना कीजिये कि एक छोटे बम का, जिसका मेघ मौसमी क्षेत्र में ही रहेगा, किसी अमरीकी परीक्षण-स्थल पर विस्फोट किया गया। नेवदा-परीक्षण-स्थल ३७ अंश उत्तर-अक्षांश पर है और प्रशान्त-परीक्षण-स्थल १२ अंश उत्तर-अक्षांश पर। इन मध्यवर्ती अक्षांशों के मौसमी क्षेत्र में हवाएँ औसत रूप से २० मील प्रति घंटा की रफ्तार से, मुख्यतः पश्चिम से पूरब की ओर, बहती हैं। इसके ऊपर किंचित् उत्तर-मुखीन या दक्षिण-मुखीन गति हो सकती है। परन्तु

बहुत सम्भव है कि रेडियो-सक्रिय मेघ उस अक्षांश की संकीर्ण पट्टी में ही, जहाँ विस्फोट होता है, रुका रहेगा।

प्रथम कुछ घंटों के बाद, जब निकटवर्ती विनाशकारी तत्व-वर्षा समाप्त हो जाती है, मेघ में जो रेडियो-सक्रिय कण शेष रह जाते हैं, वे बहुत ही हल्के और सूक्ष्म होते हैं तथा गुरुत्वाकर्षण से प्रेरित होकर नीचे नहीं गिर सकते। इस स्तर पर आकर मौसम महत्वपूर्ण बन जाता है। वर्षा और कुहासा रेडियो-सक्रिय कणों को ग्रहण करते हैं और बरसात के रूप में उन्हें पृथ्वी पर गिरा देते हैं। ऐसा तथाकथित मौसमी विनाशकारी तत्व-वर्षा में होता है।[1] इस विनाशकारी तत्व-वर्षा में औसत रूप से दो सप्ताह से एक महीने तक का समय लगता है। इस काल में विस्फोट के अक्षांश के आसपास रहते हुए भी रेडियो-सक्रिय कण पृथ्वी को घेर ले सकते हैं।

बड़े बमों के मेघ काफी ऊँचे उठ कर मौसमोत्तर-क्षेत्र में पहुँच जाते हैं। मौसमोत्तर-क्षेत्र में हवाएँ उतनी प्रमुखता से अक्षांशीय दिशाओं में नहीं बहतीं। अधिक महत्व की बात यह है कि वे मौसमोत्तर-क्षेत्र में वर्षों तक रह जाती हैं और इस बीच रेडियो-सक्रियता भूमंडल के सभी क्षेत्रों में वितरित हो जाती है। इसलिए बड़े बमों की विनाशकारी तत्व-वर्षा वस्तुतः विश्वव्यापी होती है।

मौसमी क्षेत्र की विनाशकारी तत्व-वर्षा में लगभग एक महीना लगता है। मौसमोत्तर-क्षेत्रीय विनाशकारी तत्व-वर्षा में ५ से १० वर्षों तक का समय लगता है। इसका कारण विशेषतः मौसम की अनुपस्थिति है। मौसमोत्तर-क्षेत्र में रेडियो-सक्रिय कणों को ग्रहण करनेवाली वर्षा या कुहासा नहीं होता और इसीलिए विनाशकारी तत्वा-वर्षा का कोई सशक्त साधन भी नहीं होता। वास्तव में, चूँकि रेडियो-सक्रिय कण इतने सूक्ष्म होते हैं कि वे गुरुत्वाकर्षण से प्रभावित नहीं होते, इसलिए उन्हें तब तक वहाँ रुकने को मजबूर होना पड़ता है, जब तक कोई शक्ति-सम्पन्न गति उन्हें नीचे ढकेल कर मौसमी क्षेत्र में नहीं भेज देती। इस प्रक्रिया में काफी लम्बे समय की आवश्यकता होती है।

दक्षिणी केलिफोर्निया और दक्षिणी अमरीका के कतिपय सूखे क्षेत्रों में हुई विनाशकारी तत्व-वर्षा के परीक्षण से यह बात प्रकट हुई है कि विश्वव्यापी विनाशकारी तत्व-वर्षा के उत्पादन के लिए बरसात सबसे महत्वपूर्ण साधन है। वहाँ हर बार विनाशकारी तत्व-वर्षा औसत से काफी कम पायी गयी। चीली के

---

१. थोड़ा परिमाण हवा के साथ पृथ्वी पर आ सकता है और पत्तों तथा घास पर जमा हो सकता है।

एक स्थान में, जहाँ कभी वर्षा नहीं होती, विनाशकारी तत्व-वर्षा उसी अक्षांश पर औसत विनाशकारी तत्व-वर्षा के आधार पर, प्रत्याशित परिमाण का केवल एक प्रतिशत पायी गयी।

ऐसे प्रदेशों में, जहाँ साल-भर में कुछ इंच भी वर्षा होती है, विनाशकारी तत्व-वर्षा औसत रूप से बरसात के अनुपात में पायी जाती है। परन्तु यह अनुपात भी मौसम के स्वरूप पर निर्भर करता है—ऐसा नहीं है कि २० इंच वर्षावाले सभी क्षेत्रों में विनाशकारी तत्व-वर्षा एक ही परिमाण में होगी। इस बारे में हमारी जानकारी दिन-दिन बढ़ रही है।

विनाशकारी तत्व-वर्षा के विभिन्न प्रकारों की आयु बता सकने के बाद हम यह कहने की स्थिति में हैं कि यदि रेडियो-सक्रियता धरती पर जमा हुई है, तो कौन-कौन-से रेडियो-सक्रिय तत्व अब भी उपस्थित हैं। निकटवर्ती विनाशकारी तत्व-वर्षा की आयु केवल कुछ ही घंटों की होती है, फिर भी उसमें बहुत-से ऐसे अल्पजीवी आइसोटोप होते हैं, जो शरीर में प्रवेश की सम्भावना से पहले ही विघटित हो जाते हैं। फलतः निकटवर्ती विनाशकारी तत्व-वर्षा का खतरा बाहरी प्रत्यक्षीकरण—मुख्यतः सम्पूर्ण शरीर पर गामा-विकिरण के प्रभाव और अल्पतः त्वचा पर बीटा-किरणों के संयोग—से प्रकट होता है। कपड़े और साधारण किस्म के मकान गामा-किरणों से बहुत कम बचाव करते हैं। इससे रक्षा के लिए विशेष तरह के सुरक्षात्मक आश्रय की आवश्यकता होती है। युद्ध-काल में यदि हमारे नगरों पर 'सुपर-मेगाटन' अस्त्र, जिनका सतह पर विस्फोट हो, शत्रु गिरायें, तो असुरक्षित आबादी के लिए विस्फोट या ऊष्मीय विकिरण से अधिक विनाशकारी चीज साबित होगी—निकटवर्ती विनाशकारी तत्व-वर्षा।

परन्तु मौसमोत्तरीय विश्वव्यापी विनाशकारी तत्व-वर्षा में सम्पूर्ण अल्पजीवी रेडियो-सक्रियता विलुप्त हो जाती है, क्योंकि विस्फोट के बाद कई वर्षों की अवधि बीत चुकी होती है। लगभग एक वर्ष बाद उसमें पर्याप्त परिमाण में एकमात्र गामा-परित्यागी पदार्थ बच जाता है—सेसियम^{१३७}, जिसका अर्द्धजीवन ३० वर्ष होता है। परन्तु इसकी गामा-किरण बहुत भेदक नहीं होती। फिर भी, सेसियम^{१३७} दीर्घावधिवाली विनाशकारी तत्व-वर्षा के लिए द्वितीय सर्वाधिक खतरनाक पदार्थ माना जाता है। प्रथम सर्वाधिक खतरनाक पदार्थ है स्ट्रानटियम^{९०}, जो कि बीटा-किरणों का परित्याग करता है और जिसका अर्द्धजीवन २८ वर्षों का होता है। मौसमोत्तर-क्षेत्र में काफी समय बिताने के बावजूद इनमें से अधिकांश न्यष्टियों के विद्यमान रहने के लिए यह अर्द्धकाल पर्याप्त है। चूँकि स्ट्रानटियम

रासायनिक रूप से कैल्शियम के समान ही होता है, इसलिए यह खाद्य-पदार्थों को विषण्ण बना देता है और आसानी से हमारे शरीर में प्रविष्ट हो जाता है। एक बार शरीर के अन्दर प्रवेश पा जाने के बाद यह काफी लम्बी अवधि तक हमारी हड्डियों में जमा रहता है। आगे एक अध्याय में हम देखेंगे कि यह खतरा कितना गम्भीर हो सकता है।

मौसम-क्षेत्रीय विनाशकारी तत्व-वर्षा में—और कुछ हद तक मौसमोत्तर-क्षेत्रीय विनाशकारी तत्व-वर्षा में भी—सेसियम^{137} और स्ट्रानटियम^{90} के अलावा भी कुछ दूसरे रेडियो-सक्रिय तत्व रहते हैं। इन पर हम अगले अध्याय में विचार करेंगे। पर अधिकांशतः उनके परिणाम बहुत हेय होते हैं (सम्भवतः आयोडिन^{131} को छोड़ कर)। ऐसा या तो इसलिए होता है कि वे आसानी से शरीर-द्वारा ग्रहण नहीं किये जाते, या फिर इसलिए कि उनका विकिरण बहुत शक्ति-सम्पन्न नहीं होता। इस प्रकार विश्वव्यापी खतरा केवल दो आइसोटोपों तक ही सीमित रह जाता है—एक आंतरिक बीटा-परित्यागी और एक दुर्बल गामा-परित्यागी।

अध्याय ११

मिट्टी से मनुष्य तक

विनाशकारी तत्व-वर्षा में जमा होनेवाले रेडियो-सक्रिय उत्पादनों की विविधता बड़ी आश्चर्यकारी है। यदि कतिपय अवस्थाएँ उपलब्ध हो जायें, तो उनमें से सब-के-सब मनुष्य के लिए खतरनाक हो सकते हैं। पर वस्तुतः उनमें से बहुत कम ही खतरनाक हैं।

एक रेडियो-सक्रिय आइसोटोप का उदाहरण है—आयोडिन^{131}, जो विघटना-प्रक्रिया में काफी बड़े परिमाण में पैदा होता है और जिसके बारे में चिन्तित होने के कुछ कारण भी हैं, पर जो वस्तुतः मनुष्य के लिए खतरनाक नहीं है। विनाशकारी तत्व-वर्षा का यह आइसोटोप खतरनाक इसलिए नहीं है कि इसका अर्द्धजीवन बहुत कम है—केवल आठ दिन।

एक न्यैष्टिक विस्फोट के बाद के प्रथम कुछ सप्ताहों में कुछ रेडियो-सक्रिय आयोडिन मेघ से गिर कर चरागाहों को विषण्ण बना सकता है। एक गाय कुछ ही दिनों में सैकड़ों पौण्ड घास खा जाती है। आयोडिन गाय के या किसी अन्य

स्तनधारी प्राणी के शरीर में केवल एक स्थान पर जमा होता है। यह स्थान है थायरायड-ग्रंथि (Thyroid gland), जो मनुष्य के शरीर में टेंटुए (Adam's apple) के पास होती है। थायरायड-ग्रंथि इसलिए महत्वपूर्ण है कि यह एक रासायनिक द्रव पैदा करती है, जो शरीर की कई क्रियाओं को नियमित रखता है। मनुष्य के शरीर में इसका काम भोजन को पचाना और चित्तवृत्तियों को नियंत्रण में रखना होता है। ग्रहण किये गये आयोडिन का २० प्रतिशत भाग, चाहे वह रेडियो-सक्रिय हो या प्राकृतिक, इस एक छोटी-सी ग्रंथि में जमा रहता है। यह जमाव ही वह खतरा है, जिसके बारे में हमें सावधान होना चाहिए।

न्यैष्टिक परीक्षणों के तुरन्त बाद खुले मैदानों में चरनेवाली गायों में बड़े परिमाण में रेडियो-सक्रिय आयोडिन जमा पाया जाता है, हालाँकि वह इतना नहीं होता कि क्षति पहुँचा सके। परन्तु मनुष्यों में रेडियो-सक्रिय आइसोटोपों के परिमापित स्तर गायों की तुलना में सौवें हिस्से से भी कम होते हैं, क्योंकि मनुष्य तक पहुँचने में रेडियो-सक्रिय आइसोटोप अधिकांशतः क्षयमान होकर एक स्थायी और क्षतिहीन किस्म के क्षेनन गैस (Xenon Gas) में रूपान्तरित हो जाते हैं।

एक न्यैष्टिक विस्फोट के रेडियो-सक्रिय अवशेषों में बहुत-से यथार्थतः खतरनाक आइसोटोप होते हैं। किन्तु उनमें से अधिकांश मनुष्य को क्षति पहुँचाने के पहले ही क्षयमान हो जाते हैं।

वे आइसोटोप भी, जो मनुष्य की जीवन-सीमा की तुलना में, बहुत अधिक समय तक जीवित रहते हैं, मनुष्य के लिए खतरनाक नहीं होते। एक शरीरस्थ रेडियो-सक्रिय कण तब तक हानिकारक नहीं होता, जब तक वह मनुष्य की जीवित अवस्था में विघटित होकर अपनी शक्ति परिमुक्त न करे।

उन दीर्घजीवी रेडियो-सक्रिय आइसोटोपों के, जिनका उपयोग बमों में ईंधन के रूप में होता है और जो विस्फोट के बाद भी काफी परिमाण में बच जाते हैं, दो उदाहरण हैं—यूरेनियम^{२३५} और प्लुटोनियम^{२३९}। यूरेनियम^{२३५} का अर्द्धजीवन ७१ करोड़ वर्ष होता है, जो कि उसके खतरनाक साबित होने के लिए एक बहुत लम्बा काल है। प्लुटोनियम का अर्द्धजीवन २४,००० वर्षों का होता है और यह कुछ अधिक खतरनाक है। प्लुटोनियम से खतरा इसलिए पैदा होता है कि यह एक शक्तिशाली अल्फा-किरण का परित्याग करता है।

रेडियो-सक्रियता का खतरा परित्यक्त कण की किस्म—अल्फा, बीटा और गामा किरणों—और इस बात पर निर्भर करता है कि यह शरीर पर अन्दर से

आक्रमण करता है या बाहर से। बाहरी आक्रमण के लिए गामा-किरणें सर्वाधिक खतरनाक हैं और अल्फा-किरणें अल्पतम। आन्तरिक आक्रमण की अवस्था में स्थिति ठीक विपरीत होती है।

बाहर से क्षति पहुँचाने के लिए विकिरण का अत्यधिक भेदक होना अनिवार्य है। गामा-किरणें सारे शरीर से गुजर सकती हैं। बीटा-किरणें त्वचा में ही रुक जाती हैं। अल्फा-किरणें तो जीवनहीन एवं रक्षात्मक त्वचा की बाह्य परत को भी नहीं भेद सकतीं।

परन्तु अन्दर, सूक्ष्मग्राही अंगों में, अल्फा-किरणों का लघु विस्तार भी उन्हें अत्यधिक खतरनाक बना देता है। उनकी शक्ति तंतु के एक छोटे परिणाम में जमा हो जाती है, जिससे गम्भीर क्षति पहुँचती है। बीटा-किरणें किसी एक स्थान पर जमा होकर कुछ कम क्षति पहुँचाती हैं और गामा-किरणें तो एक जगह एकत्र होकर बहुत कम क्षति पहुँचाती हैं।

रेडियो-सक्रियता हमारे द्वारा ग्रहण किये गये भोजन अथवा साँस के रूप में उपयुक्त वायु के साथ विष-रूप में शरीर में प्रवेश पा सकती है। परन्तु इसके खतरनाक साबित होने के लिए यह आवश्यक है कि यह शरीर में या तो अँतड़ियों में, या फेफड़ों में, या महत्वपूर्ण अंगों में, इतने समय तक रहे कि यह विघटित हो, जिससे जीवन्त कोष आयनीकृत होकर क्षतिग्रस्त हों।

सौभाग्यवश, भोजन के साथ ग्रहण किया गया प्लुटोनियम आसानी से शरीर के बाहर निकल जाता है। खाये गये प्लुटोनियम के एक प्रतिशत का एक हजारवाँ हिस्सा ही वस्तुतः शरीर में बच रहता है। साँस के साथ इसके प्रवेश के समय बड़े कण नासिका-मार्ग में ही रुक जाते हैं और जो छोटे कण फेफड़ों में पहुँच जाते हैं, उनका भी शीघ्र ही छोड़ी गयी साँस के साथ निष्कासन हो जाता है। केवल मध्यम आकार के कण शरीर-द्वारा ग्रहण किये जाते हैं। जो प्लुटोनियम शरीर में बच जाता है, वह सामान्यतः हड्डियों में अपना स्थान बना लेता है और वहीं काफी लम्बे अरसे तक बना रहता है। सब मिला कर, प्लुटोनियम के लघु परिमाण, जिनसे हमारा सामान्यतः साबका पड़ता है, मनुष्यों के लिए महान खतरों में से एक नहीं हैं। इसको लेकर शायद सबसे बड़ी मुश्किल यह है कि अल्फा-परित्यागी होने के कारण इसका पता लगाना आसान नहीं होता। चूँकि अल्फा-कण अधिकांश विकिरण-मापकों की सतह को भेद नहीं पाते, इसलिए उनका पता लगाने के लिए विशेष यंत्रों की आवश्यकता होती है।

प्रविष्ट होने के बाद आसानी से शरीर-द्वारा ग्रहण कर लिये जानेवाले दो विघटनोत्पादन हैं — स्ट्रानटियम^{९०} (एस-आर^{९०}) और सेसियम^{१३७} (सी-एस^{१३७})। उनके रासायनिक स्वरूप के अनुसार, एस-आर^{९०} का लगभग ३५ प्रतिशत भाग और सी-एस^{१३७} का शत-प्रतिशत भाग शरीर-द्वारा ग्रहण कर लिया जाता है। ये दोनों ही आइसोटोप विघटन-प्रक्रिया में बहुतायत से पैदा होते हैं। साथ ही इनका अर्द्धजीवन भी बड़ा खतरनाक होता है — ३० वर्ष। यह काल विस्फोट और मानव-संयोग के बीच क्षय को नगण्य बनाने के लिए तो पर्याप्त है, पर संयोग के उपरान्त क्षय की सम्भावना के लिए अत्यल्प।

इन दलीलों को ध्यान में रख कर इस निष्कर्ष पर पहुँचना पड़ता है कि विश्वव्यापी विनाशकारी तत्व-वर्षा के आन्तरिक खतरे के लिए एस-आर^{९०} और सी-एस^{१३७} सर्वाधिक महत्वपूर्ण आइसोटोप हैं। इस बारे में निश्चिन्त होने का पर्याप्त कारण है कि कोई दूसरा महत्वपूर्ण आइसोटोप नहीं है, क्योंकि सावधानी और विस्तार के साथ किये गये अनुसन्धान ने किसी भी अन्य आइसोटोप को पर्याप्त परिमाण में हमारे शरीरों में नहीं पाया है। यह शंका करने का भी कोई कारण नहीं है कि कोई दूसरा आइसोटोप हमारी निगाह से बच गया हो, क्योंकि विघटनोत्पादनों की बीटा-सक्रियता का पता लगाना सदैव ही बड़ा सरल है।

जिन दो महत्वपूर्ण प्रश्नों के उत्तर हमें देने हैं, वे हैं — किस ढंग से खतरनाक तत्व एस-आर^{९०} और सी-एस^{१३७} हमारे शरीर में फैलते हैं। और, फैल चुकने के बाद वे किस ढंग की क्षति पहुँचायेंगे?

जीवन्त शरीर के रसायन-तत्व के बारे में हम लोगों की जानकारी इतनी थोड़ी है कि दूसरे प्रश्न का सम्पूर्ण उत्तर प्राप्त कर सकना सम्भव नहीं है। इसलिए यह स्वीकार करना ही होगा कि वास्तविक खतरे को सही रूप में व्यक्त नहीं किया जा सकता।

सौभाग्यवश, प्रत्यक्ष अनुभव से इतनी जानकारी हमें प्राप्त है कि उत्पन्न होनेवाली महानतम क्षति का मूल्यांकन हम कर सकें। प्रस्तुत अध्याय में हम, शरीर में खतरनाक तत्वों के फैलने के बारे में जो-कुछ ज्ञात है, उसकी चर्चा करेंगे। आगामी अध्यायों में प्राणिविषयक परिणामों पर विचार किया जायेगा।

आरम्भ में हम सी-एस^{१३७} के खतरों की एस-आर^{९०} के खतरों के साथ तुलना करें। ये दोनों ही आइसोटोप विघटन-प्रक्रिया में लगभग समान संख्या में पैदा होते हैं। (मोटे तौर पर विघटनोत्पादनों का २-२॥ प्रतिशत भाग

एस-आर^{९०} होता है और ३ प्रतिशत भाग सी-एस^{१३७}।) उनका लगभग समान रेडियो-सक्रिय अर्द्धजीवन भी होता है, पर एक महत्वपूर्ण विषय में वे भिन्न होते हैं—सी-एस^{१३७} सारे शरीर में न्यूनाधिक समान रूप से बिखरा होता है और एस-आर^{९०} केवल हड्डियों में जमा रहता है।

सी-एस^{१३७} अपनी रेडियो-सक्रिय शक्ति का एक बड़ा भाग गामा-किरण के रूप में बिखेरता है, जो कि सारे शरीर में एक रूप से आयनीकरण पैदा करता है। दूसरी ओर, एस-आर^{९०} अपनी सम्पूर्ण शक्ति को दो बीटा-किरणों के रूप में बिखेरता है, जिनके कार्य-क्षेत्र हड्डियों में केवल एक इंच की दूरी में होते हैं। इस प्रकार, एक मामले में रेडियो-सक्रिय विघटन-शक्ति सम्पूर्ण शरीर में फैल जाती है और दूसरे मामले में शक्ति केवल हड्डियों तक सीमित रहती है।

चूँकि शरीर के वजन का दस प्रतिशत भाग केवल हड्डियाँ होती हैं, इसलिए विकिरण-मात्रा के दस-गुने परिमाण की वे भागी होती हैं। हड्डियाँ विकिरण के प्रति अति संवेदनशील होती हैं और इसलिए मात्रा में किंचित् वृद्धि हड्डी का कैन्सर पैदा कर सकती है तथा मज्जा में काम आनेवाले रक्त-कोषों के उत्पादन में भी बाधा बन सकती है। इसलिए हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि एस-आर^{९०}, सी-एस^{१३७} की तुलना में, कहीं अधिक खतरनाक है। एक और बात, जो हमारे इसी निष्कर्ष पर पहुँचने का कारण बनती है, यह है कि सी-एस^{१३७} ग्रहण किये जाने के बाद, शरीर में छः महीने से भी कम समय तक रहता है और उसके बाद निष्कासित हो जाता है, जब कि एस-आर^{९०} शरीर में कई वर्षों तक रहता है।

दूसरी ओर, सी-एस^{१३७} एक विशेष प्रकार की क्षति पहुँचा सकता है, जो एस-आर^{९०} नहीं पहुँचा सकता। यह है, प्रजनन-कोषों को क्षति। एस-आर^{९०} का प्रभाव वस्तुतः हड्डियों और उसके निकटवर्ती हड्डियों की मज्जा तक ही सीमित रहता है और यह जननेन्द्रियों तक नहीं पहुँचता। आगे के एक अध्याय में हम उत्पत्ति-विषयक खतरे पर विचार करेंगे और तब हमारी दिलचस्पी सी-एस^{१३७} में बहुत बढ़ जायेगी। किन्तु इस अध्याय के बाकी भाग में हम अपना ध्यान एस-आर^{९०} की ओर ले जायेंगे।

चूँकि शरीर में पहुँचनेवाले एस-आर^{९०} का एक बड़ा भाग वहीं ठहर जाता है, इसलिए सर्वाधिक महत्ववाले ये प्रश्न शेष रह जाते हैं—यह कैसे वहाँ पहुँचता है और कितनी मात्रा में पहुँचता है? इस सम्बन्ध में एक अनिवार्य तथ्य यह है कि विनाशकारी तत्व-वर्षा में एस-आर^{९०} सामान्यतः एक रासायनिक

स्वरूप में रहता है, जो कि आसानी से पानी में घुल जाता है। इस पानी को पौधे अपने पत्तों और जड़ों के माध्यम से ग्रहण कर लेते हैं। पशु उन पौधों को खाते हैं। मनुष्य भी उन पौधों को खाते हैं और पौधे चरनेवाले पशुओं का दूध पीते हैं। इस प्रकार उनसे एस-आर[९०] का संयोग होता है।

इस बात को लेकर चिन्ता भी हो सकती है कि एस-आर[९०] कोई प्राकृतिक आइसोटोप नहीं है, बल्कि इसका निर्माण मनुष्य ने प्रथम बार विघटन-प्रक्रिया में किया है। पृथ्वी पर बिखेरा जानेवाला यह एक अनजान विष है। क्या हम इस बात का कुछ अनुमान कर सकते हैं कि मनुष्य इसे कितने परिमाण में ग्रहण करेंगे ?

इसका उत्तर एक ऐसे तथ्य पर निर्भर करता है, जिस पर हमने सम्पूर्ण पुस्तक में जोर दिया है—समान तत्ववाले आइसोटोपों का रासायनिक और प्राणिविषयक स्वरूप अभिन्न होता है। स्ट्रानटियम की रेडियो-सक्रिय किस्म ठीक स्थायी प्राकृतिक किस्म की भाँति ही आचरण करेगी। विशेषकर, स्थायी स्ट्रानटियम के साथ एस-आर[९०] का अनुपात मानव-शरीर में भी वही होगा, जो हमारे भोजन में है। इसके आधार पर हम यह कल्पना कर सकते हैं कि मानव-शरीर में कितना एस-आर[९०] पहुँचेगा।

अब तक हुए सभी न्यैष्टिक परीक्षणों में उन्मुक्त कुल विघटन-शक्ति के आधार पर यह हिसाब लगाया जा सकता है कि अब तक वस्तुतः कितने एस-आर[९०] का उत्पादन हुआ है। यह परिमाण लगभग १०० पौंड ठहरता है।

इस परिमाण का लगभग अर्द्धांश निकटवर्ती विनाशकारी तत्व-वर्षा के द्वारा परीक्षण-स्थलों और उनके आसपास जमा है। (अधिकांश रेडियो-सक्रियता बड़े बमों-द्वारा होती है और अधिकांश बड़े बम पृथ्वी पर या छिछले पानी में विस्फोटित हुए हैं।) १०० पौंड का एक अल्प भाग मेघ में विघटित हुआ है। बाकी परिमाण, लगभग ५० पौंड, अंशतः मौसमोत्तर-क्षेत्र में है और अंशतः मौसमी और मौसमोत्तर विनाशकारी तत्व-वर्षा के द्वारा इस संसार में व्याप्त है। पैमाइशें बतलाती हैं कि अभी तक २५ या ३० पौंड एस-आर[९०] पृथ्वी की सतह पर वापस आया है। स्थानीय परिमाण औसत विश्वव्यापी परिमाण की एक-तिहाई से दुगुना तक ठहरता है।

अमरीका के उत्तरी भाग में, जहाँ वर्षा प्रायः होती है, यह परिमाण औसत विश्वव्यापी परिमाण का दुगुना मापा गया है। १० अंश दक्षिण से ५० अंश उत्तर के अक्षांशों में एस-आर[९०] का औसत विश्वव्यापी परिमाण का ड्योढ़ा

है। विश्व के शेष भागों में किंचित् विभिन्नता-सहित औसत परिमाण, विश्वव्यापी औसत परिमाण का लगभग एक-तिहाई ठहरता है।

विनाशकारी तत्व-वर्षा में आये हुए एस-आर^{९०} का अधिकांश भाग मिट्टी की ऊपरी दो-तीन इंच की तह में रह जाता है। यह वहाँ आसानी से पानी में घुल जाने-लायक रूप में रहता है और पौधे इसे आसानी से ग्रहण कर लेते हैं। मिट्टी में स्थायी प्राकृतिक स्ट्रानटियम भी होता है, जो रासायनिक रूप से एस-आर^{९०} से अलग नहीं किया जा सकता। पौधे, पशु और मनुष्य इन दोनों को अलग-अलग पहचानने की क्षमता नहीं रखते।

यह निश्चय कर सकना भी आसान नहीं है कि कितना प्राकृतिक स्ट्रानटियम उस रूप में रहता है, जो पौधों के लिए उपलब्ध होता है। प्राकृतिक स्ट्रानटियम का कुछ भाग अविलेय होता है और कुछ भाग जड़ की गहराई से भी नीचे। हमारा सर्वोत्तम अनुमान है कि प्रति एकड़ लगभग ६० पौंड स्ट्रानटियम पौधों-द्वारा ग्रहण किये जाने के लिए उपलब्ध रहता है। निस्संदेह, यह एक औसत अनुमान है।

मानव-शरीर में प्राकृतिक स्ट्रानटियम के परिमाण के बारे में हमारी जानकारी कुछ अच्छी है। इसकी सावधानीपूर्वक पैमाइश की गयी है और यह प्रति वयस्क व्यक्ति लगभग ०·७ ग्राम ठहरता है—बच्चों में यह मात्रा उनकी अवस्था के अनुपात में कम होती है। चूँकि हम यह जानते हैं कि मिट्टी में किस परिमाण में एस-आर^{९०} मिल गया है और हमारे शरीरों में किस परिणाम में प्राकृतिक स्ट्रानटियम है, इसलिए अपनी हड्डियों में एस-आर^{९०} के सम्भावित परिमाण का हिसाब हम लगा सकते हैं। पर हिसाब की अनेक अनिश्चितताओं को मद्देनजर रखते हुए पूरे सामंजस्य की आशा नहीं की जानी चाहिए। उल्लेखनीय तथ्य यह है कि बच्चों में एस-आर^{९०} की मापी गयी मात्रा हिसाब लगायी गयी मात्रा से मेल खा जाती है। लेकिन वयस्कों के मामले में परिमापित परिमाण हिसाब लगाये गये परिमाण से कुछ कम ठहरता है, क्योंकि वयस्कों की अधिकांश हड्डियों का निर्माण उस समय हुआ था, जब वातावरण में एस-आर^{९०} का पता नहीं था।

यह तथ्य सर्वाधिक महत्वपूर्ण है कि हम अपने शरीर में एस-आर^{९०} के परिमाण का हिसाब लगा सकते हैं, क्योंकि इससे हमें यह भरोसा होता है कि जो कुछ हो रहा है, उसे हम समझते हैं। यह समझना हमारे लिए विशेष रूप से महत्वपूर्ण है, क्योंकि इसके आधार पर ही हम यह अनुमान लगाने में समर्थ

हो सकेंगे कि आज जो न्यैष्ठिक परीक्षण हो रहे हैं, वे शरीर में एस-आर^{९०} के भावी परिमाण को किस तरह प्रभावित करेंगे।

जो दलीलें अभी हमने दी हैं, उनसे और पिछले कुछ वर्षों से हड्डियों में जमा एस-आर^{९०} के परिमाण से यह असम्भव दीखता है कि अब तक किये गये परीक्षणों के फलस्वरूप एस-आर^{९०} का परिमाण शरीर में दो के भाज्य से अधिक बढ़ेगा। दरअसल यह भाज्य और भी कम हो सकता है, क्योंकि स्ट्रानटियम मिट्टी की गहरी तहों से संयुक्त है और जो रेडियो-सक्रिय स्ट्रानटियम पृथ्वी में अधिक समय तक रुका रहता है, वह रासायनिक दृष्टि से कम विलेय होने तथा प्राकृतिक स्ट्रानटियम के रासायनिक दृष्टि से अनुपलब्ध भाग के साथ पूरी तरह मिल जाने की प्रवृत्ति दिखाता है। यह परवर्ती प्रक्रिया 'रासायनिक आयु-निर्धारण' कहलाती है।

मिट्टी से निकल कर भोजन और हड्डियों में रेडियो-सक्रिय स्ट्रानटियम और सामान्य स्ट्रानटियम के प्रवेश की बात समझ सकना कोई आसान बात नहीं है। हमें मिट्टी में स्ट्रानटियम की गहराई और स्ट्रानटियम के रासायनिक स्वरूप के प्रश्न पर चिन्ता करनी ही पड़ेगी। एस-आर^{९०} और सामान्य स्ट्रानटियम की पूरी पहचान तभी सम्भव है, जब वे दोनों एक ही जगह, निकट में, और एक ही रासायनिक स्वरूप में हों। एक और कठिनाई यह है कि अभी हाल तक सामान्य स्ट्रानटियम के आचरण के बारे में बहुत कम जानकारी उपलब्ध थी और एतद्सम्बन्धी जानकारी अब धीरे-धीरे प्राप्त हो रही है।

कैल्शियम के बारे में अधिक जानकारी उपलब्ध है। कैल्शियम और स्ट्रानटियम एकरूप आचरण तो नहीं करते, पर उनके आचरण समान ढंग के होते हैं। मिट्टी से मनुष्य तक पहुँचने में, स्ट्रानटियम के साथ कैल्शियम का अनुपात एक तरह का नहीं होता, परन्तु यह न्यूनाधिक निश्चित ढंग से परिवर्तित होता है। वस्तुतः एस-आर^{९०} के प्राणियों-द्वारा ग्रहण किये जाने-सम्बन्धी अधिकांश कार्य कैल्शियम के साथ एस-आर^{९०} की तुलना करके पूरे किये गये हैं।

कैल्शियम-सम्बन्धी तथ्यों का उपयोग किये जाने के लिए यह जानना आवश्यक है कि जब पदार्थ मानव-शरीर में ग्रहण किया जाता है, तब किस तरह स्ट्रानटियम और कैल्शियम का अनुपात परिवर्तित होता है। मिट्टी में औसत रूप में, १०० भाग कैल्शियम पर १ भाग स्ट्रानटियम होता है। मानव शरीर में यह अनुपात १—१४०० का है।

इस प्रकार मिट्टी से मनुष्य तक पहुँचने में स्ट्रानटियम और कैल्शियम के अनुपात में लगभग १४ के भाज्य का अन्तर आ जाता है। यह सुरक्षा का सूचक है। इस निष्कर्ष की पुनः जाँच कर लेना और यह पता लगा लेना अच्छा होगा कि मिट्टी से मनुष्य तक पहुँचने में कैल्शियम और स्ट्रानटियम का अनुपात किस तरह शनैः-शनैः परिवर्तित होता है। मिट्टी से पौधे तक पहुँचने में १-४ के भाज्य का अन्तर मिलता है, पौधे से दूध तक के बीच ७ के भाज्य का अन्तर प्रकट होता है और दूध से मनुष्य तक पहुँचने के बीच लगभग २ के भाज्य का अन्तर सामने आता है। वस्तुतः यदि इन सबको संयुक्त कर दें, तो हमारी इस गणना के अनुसार मिट्टी से मनुष्य तक पहुँचने में कैल्शियम और स्ट्रानटियम का अनुपात २० के भाज्य तक बढ़ जायेगा। साधारणतया यह ठीक है, पर ऊपर दिये गये १४ के अनुपात के साथ इसका पूरा मेल नहीं बैठता।

एक बार सुरक्षा के इस भाग के सिद्ध हो जाने पर, हम स्ट्रानटियम की सम्भावित ग्राह्यता का प्रमाण उस ढंग से आँक सकते हैं, जिस ढंग से रेडियो-सक्रिय पदार्थ सामान्य स्ट्रानटियम की अपेक्षा कैल्शियम से मिल कर कम प्रभावशाली होता है। यह बात कम स्पष्ट अवश्य है, पर फिलहाल एस-आर^{९०} और सामान्य स्टानटियम की सीधी तुलना से, निश्चय ही अधिक व्यावहारिक प्रणाली है। विभिन्न कैल्शियम परिमाणवाली मिट्टियों की तुलना की दृष्टि से तो यह विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण है।

पौधों और पशुओं को कैल्शियम की जरूरत पड़ती है। जब उन्हें यह नहीं मिलता, तब उनमें कैल्शियम की क्षुधा बढ़ जाती है। चूँकि स्ट्रानटियम रासायनिक दृष्टि से कैल्शियम के समान है, इसलिए मिट्टी में कैल्शियम के अभाव की पूर्ति आसानी से उपलब्ध स्ट्रानटियम से हो जाती है। उससे यह आशा की जायेगी कि कैल्शियम की कमीवाली मिट्टी पर के पौधों और पशुओं में असाधारण रूप से अधिक मात्रा में प्राकृतिक स्ट्रानटियम होगा और एस-आर^{९०} की मात्रा भी बहुत अधिक होगी। उनमें अधिक परिमाण में एस-आर^{९०} की उपस्थिति तो प्रमाणित भी हो गयी है। उदाहरणस्वरूप वेल्स की कुछ भेंड़ों के शरीरों में एस-आर^{९०} की मात्रा औसत मात्रा से दस-गुनी अधिक प्रतीत होती है।

सौभाग्यवश अधिकांश लोग अपनी भोजन-सामग्री अनेक ऐसे क्षेत्रों से प्राप्त करते हैं, जो एक-दूसरे से काफी दूरी पर हैं। जिस मिट्टी में कैल्शियम की कमी होती है, वह एक व्यक्ति के जीवन के लिए आवश्यक कैल्शियम के एक लघुभाग से अधिक मात्रा में उसकी पूर्ति नहीं कर सकती। परन्तु

एक बड़ी घट-बढ़ की सम्भावना भी रहती है। ऐसी स्थिति में सुधारात्मक कार्रवाइयों की आवश्यकता होगी। एक सरल कार्रवाई यह होगी कि अभाववाली मिट्टी को अतिरिक्त कैल्शियम के संयोग से उर्वरा बनाया जाये।

मिट्टी को इस प्रकार सफलतापूर्वक उर्वरा बनाया जा सकता है, यह बात वेल्स की वर्तमान परिस्थिति से स्पष्ट हो जाती है। असाधारण रूप से अधिक एस-आर^{९०} वाली भेड़ें उन पहाड़ी क्षेत्रों के चरागाहों की हैं, जो पर्याप्त रूप से उर्वर नहीं हैं और जहाँ की मिट्टी में चूने का अभाव है। निम्नस्तरीय चरागाहों की, जहाँ चूना है (विनाशकारी तत्त्व-वर्षा के कारण नहीं, बल्कि आर्थिक कारणों से), भेड़ों में उपर्युक्त परिमाण की केवल एक-तिहाई सक्रियता पायी जाती है।

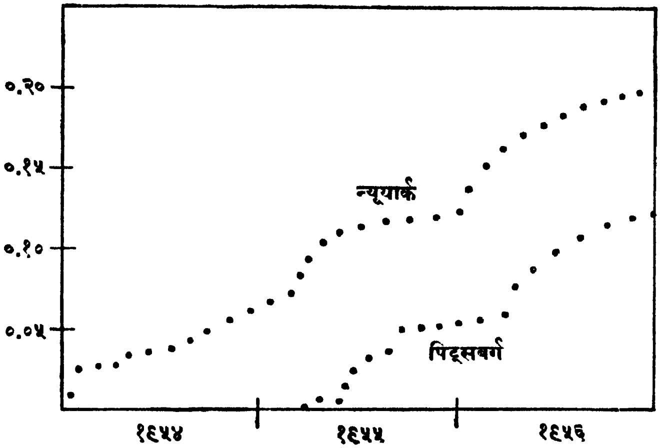
इस अध्याय में जिस तथ्य पर प्रकाश डालने की हमने चेष्टा की है, वह यह है कि मानव-शरीर में उपलब्ध होनेवाले एस-आर^{९०} के वर्तमान परिमाणों की संतोषप्रद व्याख्या तत्वों की रासायनिक समानता और आइसोटोपों की एकरूपता पर आधारित साधारण तर्कों से की जा सकती है। ये तर्क हमें यह विश्वास दिलाते हैं कि मिट्टी से मनुष्य के शरीर में एस-आर^{९०} किस तरह और कितने परिमाण में पहुँचता है, इसे हम ठीक से समझते हैं।

इसके साथ ही हमने यह भी देखा कि मानव-शरीर में इसकी वास्तविक ग्राह्यता कितनी बातों से प्रभावित होती है—भौगोलिक अक्षांश; वर्षा-सम्बन्धी स्थिति; वह रासायनिक स्वरूप, जिसमें स्ट्रानटियम पाया जाता है एवं मिट्टी में कैल्शियम की मात्रा और कृषि-प्रणाली। यद्यपि अमरीका ने यह जाँच-कार्य १९५२ से ही तेजी से आरम्भ कर रखा है, फिर भी इस सम्बन्ध में काफी काम अभी बाकी है।

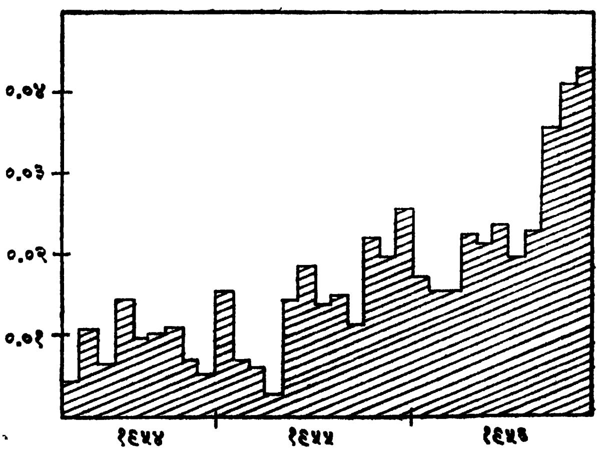
उदाहरण के लिए, अमरीका में हमारे भोजन में कैल्शियम और स्ट्रानटियम की अधिकांश मात्रा दूध या दूध की बनी वस्तुओं से आती है। पर जापान में स्थिति कुछ भिन्न है। वहाँ कैल्शियम और स्ट्रानटियम का मुख्य स्रोत चावल है। परिणामस्वरूप, मिट्टी से मनुष्य तक पहुँचने में, कैल्शियम की तुलना में स्ट्रानटियम का अनुपात विभिन्न हो सकता है। शायद विनाशकारी तत्त्व-वर्षा के फलस्वरूप गिरनेवाला स्ट्रानटियम भी जमीन में अधिक गहराई तक पहुँच सकता है और विलेय तथा अविलेय का अनुपात भिन्न हो सकता है।

मनुष्य में एस-आर^{९०} की ग्राह्यता की दुरूह प्रकृति की दृष्टि से यह बात महत्वपूर्ण है कि मिट्टी, हमारे भोजन और हमारे शरीर में एस-आर^{९०} के वास्तविक स्तरों का सावधानीपूर्वक अध्ययन किया जाये। निम्नांकित नक्शे

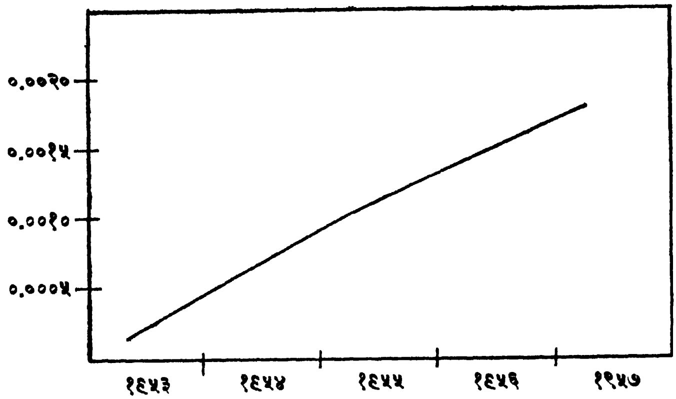
यह दिखाते हैं कि पिछले कुछ वर्षों में बम-परीक्षणों के कारण ये स्तर किस तरह ऊँचे उठे हैं—



मिट्टी में एस-आर^{९०}—प्रति वर्ग मील एक ग्राम के हजारवें हिस्से में मापित।



अमरीकी दूध में औसत एस-आर^{९०}—एक क्वार्ट में एक ग्राम के एक खरब (ट्रिलियन) हिस्से में मापित।



अमरीकी छोटे बच्चों की हड्डियों में एस-आर[९०] से प्राप्त विकिरण की औसत मात्राएँ—प्रति वर्ष रोएंटजनों में मापित।

मिट्टी, दूध और छोटे बच्चों की हड्डियों में एस-आर[९०] के वास्तविक परिमाण मोटे तौर पर ही ज्ञात हैं। परन्तु जिस मुख्य तथ्य को हम प्रकट करने की कोशिश कर रहे हैं, वह यह है कि सन् १९५४ से एस-आर[९०] की मात्रा बड़ी तेजी से बढ़ती जा रही है। यह अभिवृद्धि किस सीमा तक जारी रहेगी?

सन् १९५४ में सर्वाधिक रेडियो-सक्रियता परिमुक्त हुई थी—सब वर्षों के जोड़ से भी अधिक। सम्भवतः इस सक्रियता का अर्द्धांश से भी अधिक भाग जमा हो चुका है। उस समय से अमरीकी परीक्षणों में पैदा होनेवाली विघटनोद्भूत शक्ति बड़ी तीव्रता से घटी है। साथ ही, हमने यह भी जान लिया है कि किस तरह भूमि-विस्फोटों के द्वारा, जिनमें अधिकांश सक्रियता निकटवर्ती विनाशकारी तत्व-वर्षा के रूप में परीक्षण-स्थल और उसके आसपास के क्षेत्रों में जमा हो जाती है, विश्वव्यापी तत्व-वर्षा को कम किया जा सकता है। यह भी सम्भव हो गया है कि कुछ ऐसे रासायनिक तत्व बम के पास रख दिये जायें, जिनसे स्ट्रानटियम एक अधिक अविलेय रूप प्राप्त कर ले या ऐसा स्वरूप ग्रहण करे, जिससे वह आसानी से विस्फोट-स्थल के आसपास के क्षेत्र में गिर जाये। और, सर्वाधिक महत्व की बात यह है, कि हम

ऐसे परिष्कृत न्यैष्टिक (Clean Nuclear) अस्त्रों का विकास कर रहे हैं, जो लपट और ऊष्मा तो पैदा करते हैं, पर रेडियो-सक्रियता बहुत कम पैदा करते हैं। भविष्य में, ये परिष्कृत अस्त्र अतिरिक्त रेडियो-सक्रियता का पूर्णतः उन्मूलन कर दे सकते हैं।

सभी राष्ट्रों की योजनाओं के बारे में अनुमान लगा सकना तो बहुत कठिन है। पर यदि हमारे साथ-साथ दूसरे लोग भी परिष्कृत अस्त्रों को ही सबसे उचित समझें, तो स्ट्रानटियम का विष-प्रसार वर्तमान स्थिति के दुगुने से लेकर चार-गुने से अधिक न बढ़ पायेगा। हमारा विश्वास है कि मानव-जीवन का सम्मान, सैनिक दृष्टिकोण और सामान्य बुद्धिमानी—सभी कारणों से हम एक ही निष्कर्ष पर पहुँचते हैं। न्यैष्टिक विस्फोटकों के विकास के लिए यह आवश्यक है कि हम उन्हें परिष्कृत स्वरूप दें। लेकिन इसका वास्तविक कारण परीक्षणों के फलस्वरूप लघु विष-प्रसार नहीं है, बल्कि यह है कि युद्ध इस विष-प्रसार को असंख्य लोगों के लिए खतरे में परिणत कर सकता है।

अध्याय १२

व्यक्ति के लिए खतरा

परमाणविक परीक्षणों से कितनी क्षति पहुँच रही है? कुछ वैज्ञानिकों का कहना है कि अब तक जो परीक्षण हुए हैं, केवल उन्हीं के कारण विश्व-भर में लगभग ५० हजार व्यक्ति अकालमृत्यु के शिकार होंगे। पर इस सम्बन्ध में सब लोग एकमत नहीं हैं। कुछ लोग सोचते हैं कि यह संख्या कम होनी चाहिए। यह सम्भव है कि रेडियो-सक्रियता कुछ ऐसे प्रभाव भी पैदा करती हो, जो जीवन-अवधि को घटाने के बजाय बढ़ा देते हों। पर विकिरण के प्राणिविषयक सभी परिणाम यदि ज्ञात होते, तो भी कुछ प्रश्न शेष रह ही जाते। यदि परीक्षणों से वस्तुतः मानव की आयु कम होती हो, तो क्या वे उचित कहे जा सकते हैं? यदि केवल स्वास्थ्य पर खतरा पहुँचने की सम्भावना हो, तो भी इस सम्बन्ध में गम्भीरतापूर्वक विचार किया जाना चाहिए। दूसरी ओर, क्या कुछ ऐसे कारण भी हैं, जो परीक्षणों को जारी रखना आवश्यक सिद्ध करते हैं?

आगे के एक अध्याय में हम इन प्रश्नों पर विचार करेंगे। पहले हम अपने पाठकों के समक्ष विनाशकारी तत्व-वर्षा से मनुष्य को पहुँचनेवाले खतरे के

सम्बन्ध में जो ज्ञात तथ्य हैं, उन्हें रखने का प्रयत्न करेंगे। हम इस खतरे को, ऐसे ही दूसरे खतरों की तुलना में, पेश करने की चेष्टा करेंगे, जिनसे हम सबका सम्बन्ध है। परवर्ती अध्याय में हम इस बारे में विचार करेंगे कि किस तरह विनाशकारी तत्व-वर्षा भावी पीढ़ियों को प्रभावित कर सकती है।

विकिरण की बड़ी मात्राओं के खतरे भलीभाँति विदित हैं। यदि सम्पूर्ण शरीर का एक हजार रोएंटजनों से सम्पर्क हो, तो तीस से भी कम दिनों में मृत्यु निश्चित है। रोएंटजनों की संख्या यदि चार सौ से पाँच सौ तक हो, तो व्यक्ति के बच जाने की ५० प्रतिशत सम्भावना रहती है। एक सौ से कम रोएंटजनों से सम्पर्क होने पर तत्काल मृत्यु का कोई खतरा नहीं होता। तीन वर्ष पूर्व, मार्शल-द्वीपवासियों का १७५ रोएंटजनों से सम्पर्क हुआ, पर उनमें से कोई नहीं मरा। वे सब स्पष्टतः सुस्वस्थ हैं।

लम्बी अवधि में यदि इससे भी बड़ी मात्राएँ ग्रहण की जायें, तो उन्हें बर्दाश्त किया जा सकता है। यदि जीवन-भर में एक हजार रोएंटजन किसी व्यक्ति के शरीर-द्वारा ग्रहण कर लिया जाये, तो कोई प्रत्यक्ष प्राणिविषयक परिणाम परिलक्षित नहीं होगा। एक साधारण नियम (जो कि पूर्णतः सिद्ध नहीं है) यह है कि एक समय में प्राप्त विकिरण की जितनी मात्रा से एक व्यक्ति अप्रभावित रहता है, उसकी पाँच-गुनी मात्रा वह एक लम्बी अवधि में आसानी से सहन कर सकता है।

एक बार में एक सौ रोएंटजन या एक दीर्घ अवधि में प्राप्त इसकी कई गुनी मात्रा से रुग्ण होने या मृत्यु की सम्भावना, जिसका दोष विकिरण पर प्रत्यक्षतः लगाया जा सके, नहीं रहती। परन्तु विकिरण की इस मात्रा से शरीर के लिए हानिकारक कुछ ऐसे परिणाम सामने आ सकते हैं, जो कि अधिक सूक्ष्म हैं। इस मात्रा से किसी व्यक्ति की कुछ बीमारियों — खास कर हड्डियों के कैंसर और ल्युकेमिया – का प्रतिरोध कर सकने की क्षमता कम हो जा सकती है। ल्युकेमिया एक प्राणघातक रोग है, जिसमें श्वेत रक्त-कोष बड़ी तेजी से बढ़ते हैं।

एक सौ रोएंटजनों के सम्पर्क में आनेवाले एक व्यक्ति के लिए यह आवश्यक नहीं है कि उसे हड्डियों का कैंसर या ल्युकेमिया हो ही जाये। परन्तु अपने जीवन-काल में उसके कभी-कभी इन बीमारियों का शिकार होने की सम्भावना बढ़ जाती है। इस तरह की जानकारी केवल आँकड़ों की सहायता से ही उपलब्ध हो सकती है।

उदाहरण के लिए, यदि अनेक चूहे एक दीर्घ अवधि में विकिरण की एक भारी मात्रा के सम्पर्क में आते हैं, तो उन्हें 'ट्युमर' (Tumor) और ल्युकेमिया होने की सम्भावना सामान्य अवस्था से कहीं अधिक बढ़ जाती है।

सौभाग्यवश, मनुष्यों के साथ इन रोगों के सम्पर्क के प्रत्यक्ष प्रमाण दुर्लभ हैं। हिरोशिमा और नागासाकी के विस्फोटों के बाद जीवित बचे लोगों और रेडियोलाजिस्टों पर इसके प्रभाव के आंकड़ें हमें उपलब्ध हैं। रेडियोलाजिस्ट अपने व्यावसायिक जीवन-काल में सम्भवतः कई सौ रोएंटजनों के सम्पर्क में आते हैं। इनके अतिरिक्त उन बच्चों के सम्बंध में भी आँकड़े उपलब्ध हैं, जिनका गले की गिट्टी में वृद्धि के लिए विकिरण की बड़ी मात्राओं से इलाज किया गया हो। ऐंकिलोजिंग स्पांडिलिटिस (Ankylosing Spondylitis), जो कि रीढ़ के जोड़ों की एक बड़ी कष्टदायक बीमारी है, से पीड़ित लोगों का भी क्ष-किरणों की बड़ी मात्राओं से इलाज किया गया है। इन सब मामलों में आँकड़े एक ही निष्कर्ष पर पहुँचते हैं— विकिरण की बड़ी मात्राएँ इस बात की सम्भावना बढ़ा देती हैं कि एक व्यक्ति की आयु ल्युकेमिया से–और सम्भवतः अन्य कैंसरों से भी–घट जायेगी। साथ ही, ऐसा प्रतीत होता है (विशेष कर पशुओं पर किये गये प्रयोगों से) कि वर्द्धित सम्भावना, प्राप्त विकिरण के परिमाण – कम-से-कम कुछ सौ रोएंटजनों के आसपास की मात्राओं के लिए – के अनुपात में होती है।

यह निस्सन्देह भयानक प्रतीत होता है। परन्तु विश्वव्यापी विनाशकारी तत्व-वर्षा से प्राप्त विकिरण की मात्राएँ उन विकिरण-मात्राओं से, जिनकी हम अब तक चर्चा करते रहे हैं, पूर्णतः भिन्न प्रकार की होती हैं। वे अपेक्षाकृत बहुत छोटी होती हैं। औसत रूप से मानव-हड्डियाँ विनाशकारी तत्व-वर्षा के एस-आर^{९०} से प्रति वर्ष लगभग ०·००२ रोएंटजन प्राप्त करती हैं। इनके अतिरिक्त सम्पूर्ण शरीर गामा किरणों की – मुख्यतः सी-एस^{१३७} की गामा-किरणों की – भी लगभग उतनी ही मात्रा ग्रहण करता है। ये आँकड़े उन छोटे बच्चों की नयी हड्डी पर चरितार्थ होते हैं, जो अमरीका के उत्तरी भाग में एस-आर^{९०} के वातावरण में विकास पा रहे हैं। यह अधिकतम विनाशकारी तत्व-वर्षा का प्रदेश है। वे वयस्क लोग, जिनकी अधिकांश हड्डियाँ परमाणविक परीक्षण आरम्भ होने के पहले विकास पा चुकी थीं, प्रति वर्ष एस-आर^{९०} से लगभग ०·०००३ रोएंटजन ग्रहण कर रहे हैं। इन आँकड़ों में से कोई भी खतरनाक नहीं प्रतीत होता।

वर्तमान दर से उत्तरी अमरीका में जीवनव्यापी मात्रा (Lifetime doses) एक रोएंटजन का केवल एक अंश ठहरती है। कोई विशेष व्यक्ति, सम्भव है, इसकी कई गुनी अधिक मात्रा ग्रहण कर ले। यदि वर्तमान दर से परीक्षण जारी रहें, तो विकिरण के स्तर पाँच-गुना तक बढ़ सकते हैं। पर ऐसी स्थिति में भी यह कल्पना करना कठिन है कि विश्वव्यापी विनाशकारी तत्व-वर्षा से किसी व्यक्ति की जीवनव्यापी मात्रा ५ या १० रोएंटजनों से अधिक हो सकेगी। औसत जीवनव्यापी मात्रा का एक अधिक तर्कसंगत अनुमान केवल कुछ रोएंटजन या उससे भी कम होगा।

इन आँकड़ों से इस निष्कर्ष पर पहुँचा जा सकता है कि विनाशकारी तत्व-वर्षा से कोई खतरा नहीं है; पर यह निष्कर्ष सही नहीं भी हो सकता है।

विकिरण की इतनी कम मात्राओं के खतरे की व्याख्या कर सकना आसान नहीं है। यहाँ तक कि सर्वोत्तम आँकड़े-सम्बन्धी प्रणालियाँ भी अपर्याप्त हैं। छोटे प्रभावों का पता तभी लग सकता है, जब लाखों ऐसे मामलों का अध्ययन किया जाये। इन परिस्थितियों में पशु-सम्बन्धी प्रयोग अतीव दुष्कर हैं। मनुष्यों के साथ प्रत्यक्ष नियंत्रित अनुभूति, निस्सन्देह, असम्भव है। फलतः उच्चतर मात्रा-स्तरों के, जहाँ प्रयोग-सम्बन्धी आँकड़े उपलब्ध हैं, प्रभावों से ही निष्कर्ष निकालने को बाध्य होना पड़ता है।

यह कई ढंग से किया जा सकता है। एक ढंग यह मान लेना है कि अनुपात का नियम लघुतम मात्राओं पर भी लागू होता है। इसका अर्थ यह हुआ कि १०० रोएंटजनों से हड्डियों के कैंसर और ल्युकेमिया की जितनी घटनाएँ होती हैं, उसका सौवाँ हिस्सा एक रोएंटजन से होगा। यह नियम सत्याभासक है, पर सिद्ध नहीं है।

इस तर्क को मानने से यह प्रकट होता है कि एक मेगाटन विघटनोद्भूत शक्ति से, जो परीक्षण-स्थल से निकल कर विश्वव्यापी विनाशकारी तत्व-वर्षा में शामिल हो जाती है, लगभग ४८० व्यक्तियों की आयु ल्युकेमिया या हड्डियों के कैंसर के कारण कम हो जायेगी। परीक्षण की वर्तमान परिस्थितियों में विघटनोत्पादनों का लगभग आधा भाग निकटवर्ती विनाशकारी तत्व-वर्षा के रूप में परीक्षण-स्थल पर या उसके निकट जमा होता है। अतएव विस्फोटित प्रति मेगाटन विघटनोद्भूत शक्ति के पीछे २०० व्यक्तियों को ल्युकेमिया या हड्डियों का कैंसर होगा। यह संख्या वस्तुतः अधिक भी हो सकती है—सम्भवतः प्रति

मेगाटन एक हजार व्यक्ति या इससे भी अधिक; और यह भी सम्भव है कि वह कम हो या बिल्कुल ही न हो।

एक निर्धारित घनत्व से कम विकिरण से हड्डियों के कैन्सर या ल्युकेमिया की बीमारी बिल्कुल ही न होने की सम्भावना भी है। अतीत में विकिरण की लघु मात्राएँ प्रायः ही लाभदायक मानी गयी हैं। पर इसके पक्ष में कोई वैज्ञानिक प्रमाण नहीं था। आज अनेक जानकार लोगों का विश्वास है कि विकिरण निम्नतम परिमाणों में भी हानिकारक है। इस कथन को इस विषय के अधिकारियों ने दुहराया है। वस्तुतः इस बात में बहुत कम सन्देह की गुंजाइश है कि विकिरण कोष-विशेष को क्षति पहुँचाता है। पर एक जीवित प्राणी सर्वाधिक जटिल वस्तु है। कोषों के एक छोटे भाग को पहुँची क्षति सम्पूर्ण प्राणी के लिए लाभदायक भी हो सकती है। चूहों पर किये गये कुछ प्रयोगों से यह प्रकट हुआ है कि लघु विकिरण के संयोग से पशुओं की जीवन-सीमा बढ़ जाती है। वैज्ञानिक सत्य तभी दृढ़ होता है, जब वह पूर्णता को प्राप्त करता है। विकिरण की एक छोटी मात्रा मनुष्य-जैसे जटिल प्राणी पर क्या प्रभाव डालेगी, इस सम्बन्ध में जो तथ्य अभी उपलब्ध हैं, वे प्रारम्भिक और अनिश्चित अवस्था में हैं।

जो भी हो, विनाशकारी तत्व-वर्षा के विकिरण के कारण उपस्थित होनेवाले ल्युकेमिया और हड्डियों के कैंसर के अतिरिक्त मामले, निश्चय ही, इनके सामान्य मामलों की तुलना में इतने कम हैं, कि इनका पता लगाना कठिन है।

आगामी ३० वर्षों में सम्पूर्ण विश्व में लगभग ६० लाख व्यक्ति ल्युकेमिया और हड्डियों के कैंसर से मृत्यु को प्राप्त होंगे। विगत परीक्षणों के कारण, जिनमें ५० मेगाटन विघटनोद्भूत शक्ति का विस्फोट हुआ है, इस बात की सम्भावना है कि ५० × २०० = १०,००० अतिरिक्त घटनाएँ होंगी। आँकड़े-सम्बन्धी प्रणालियाँ ६० लाख और ६० लाख १० हजार के अन्तर को प्रकट कर सकने में समर्थ नहीं हैं। फिर विनाशकारी तत्व-वर्षा के कारण ल्युकेमिया और हड्डियों के कैंसर के मामलों और स्वाभाविक रूप से उपस्थित होनेवाले इनके मामलों को अलग-अलग पहचानने का कोई उपाय नहीं है।

दस हजार लोगों का सम्भावित आयु-ह्रास अशुभ प्रतीत हो सकता है। पर केवल आँकड़े भ्रामक भी हो सकते हैं। विनाशकारी तत्व-वर्षा के खतरे को आँकने का एक अच्छा उपाय अधिक परिचित खतरों से इसकी तुलना करना

है। ऐसी तुलना ब्रह्माण्डीय किरणों की प्राकृतिक पृष्ठभूमि तथा पृथ्वी एवं हमारे शरीरों में अवस्थित रेडियो-सक्रियता के साथ की जा सकती है।

हम लोग निरन्तर और अपरिहार्य ढंग से इस विकिरण के सम्पर्क में हैं। हमारे पूर्वज भी इसके सम्पर्क में थे। मानव-जाति का विकास ही ऐसे वातावरण में हुआ है। साथ ही, विभिन्न प्रकार के विकिरणों के प्राणिविषयक प्रभावों की रोएंटजनों के रूप में एक अर्थपूर्ण ढंग से तुलना की जा सकती है। अतएव एस-आर^{90} का खतरा हर दृष्टि से अज्ञात नहीं है। कुछ दृष्टियों से तो हम इससे भलीभाँति परिचित हैं, क्योंकि सभी जीवनधारियों की तरह हमने भी अपने दिन इसी के सदृश खतरनाक वातावरण में बिताये हैं। हम एक ऐसी पृथ्वी पर रहते हैं, जिसके पत्थरों में रेडियो-सक्रियता है, जिसके पानी में भी समान रूप से रेडियो-सक्रियता है और जिस पर सभी ओर से ऐसे कणों की वर्षा होती है, जो रेडियो-सक्रिय पदार्थों के प्रभावों के समरूप ही प्रभाव पैदा करते हैं।

ऐसा नहीं है कि समान घनत्व (रोएंटजनों की समान संख्या) वाले सभी विकिरणों का समान प्रभाव हो। उत्पन्न क्षति कुछ-कुछ आयनीकृत और विस्थापित अणुओं की दूरी पर भी निर्भर करती है। पर ब्रह्माण्डीय किरणें और एस-आर^{90} इस दृष्टि से भी पूर्णतः समान हैं।

पाठकों को स्मरण होगा कि आयनीकरण की दूरी आयनीकरण करनेवाले कण के विद्युत्-परिमाण और गति पर ही निर्भर करती है। एस-आर^{90} का आयनीकरण करनेवाला कण एक शक्ति-सम्पन्न बीटा-किरण है, जिसका विद्युत्-परिमाण एक होता है और गति प्रकाश की गति के आसपास होती है। हमारी हड्डियों में पहुँचनेवाले पृष्ठमूलक विकिरण का एक बड़ा भाग ब्रह्माण्डीय किरणों से आता है। ब्रह्माण्डीय किरणों का मुख्य भाग मेसनों के कारण होता है। मेसन में भी, बीटा-किरण की भाँति, एक इकाई विद्युत्-परिमाण होता है और गति प्रकाश की गति के लगभग होती है। इसलिए दोनों कणों से समान प्राणिविषयक प्रभाव पैदा होने की आशा की जायेगी। उन दोनों के प्रभावों के बीच अन्तर यही है कि बीटा-किरण में हड्डियों को त्यागने-योग्य पर्याप्त शक्ति नहीं होती, जब कि मेसन इतना शक्ति-सम्पन्न होता है कि अपनी शक्ति हमारी हड्डियों और सम्पूर्ण शरीर में जमा कर देता है। इस प्रकार, यदि हम एस-आर^{90} की एक मात्रा की ब्रह्माण्डीय किरणों की उतनी ही मात्रा के साथ तुलना करें, तो हड्डियों पर उनके समान प्रभाव की निश्चय ही अपेक्षा की जायेगी। किन्तु ब्रह्माण्डीय किरणें हमारे शरीरों में अतिरिक्त प्रभाव पैदा करती हैं।

अमरीका में समुद्री सतह पर निवास करनेवाले औसत व्यक्ति के लिए हड्डियों में कुल पृष्ठमूलक मात्रा लगभग ०·१५ रोएंटजन प्रति वर्ष होती है। इस परिमाण में से ०·०३५ रोएंटजन ब्रह्माण्डीय किरणों से आते हैं। अधिक ऊँचे स्थानों पर ब्रह्माण्डीय किरण की मात्रा और बढ़ती है। डेनवर में, जिसकी ऊँचाई ५००० फुट है, ब्रह्माण्डीय किरणें प्रति वर्ष ०·०५ रोएंटजन प्रदान करती हैं।

उपर्युक्त संख्याओं की, वर्तमान विश्वव्यापी विनाशकारी तत्व-वर्षा के विकिरण के हड्डियों में पहुँचने के परिमाण—लगभग ०·००३ रोएंटजन प्रति वर्ष (एस-आर^{९०} और अन्य स्रोतों से)—से तुलना की जानी चाहिए। इस प्रकार विनाशकारी तत्व-वर्षा का विकिरण प्राकृतिक ब्रह्माण्डीय विकिरण का कुछ प्रतिशत ही है। समुद्री सतह और ५ हजार फुट के बीच ब्रह्माण्डीय किरण के घनत्व की विभिन्नता के साथ तुलना होने पर भी यह कम ही ठहरता है।

ल्युकेमिया और हड्डियों के कैंसर की आवृत्ति और प्राकृतिक विकिरण के घनत्व के परस्पर-सम्बन्ध की भी जाँच की गयी है। सन १९४७ के, जब कि अस्त्रों के परीक्षण आरम्भ नहीं हुए थे, कुछ आँकड़े उपलब्ध हैं। उनसे यह व्यक्त होता है कि उस वर्ष प्रति एक लाख की आबादी पर इन बीमारियों के कितने मामले उपस्थित हुए थे।

	हड्डियों का कैंसर	ल्युकेमिया
डेनवर	२·४	६·४
न्यु आर्लियन्स	२·८	६·९
सान फ्रांसिस्को	२·९	१०·३

डेनवर में एक व्यक्ति ब्रह्माण्डीय किरणों से जो अतिरिक्त विकिरण प्राप्त करता है, वह विनाशकारी तत्व-वर्षा के विकिरण से कई गुना अधिक है। किन्तु तालिका हड्डियों के कैंसर या ल्युकेमिया की घटनाओं में वृद्धि व्यक्त नहीं करती। इसके विपरीत, डेनवर में इन बीमारियों की घटनाएँ वस्तुतः कम हैं।

सभी प्राकृतिक पृष्ठमूलक विकिरण ब्रह्माण्डीय किरणों के कारण अस्तित्व में नहीं आते। पृष्ठमूलक विकिरण का एक अंश मिट्टी और पेय जल में निहित प्राकृतिक रेडियो-सक्रिय तत्वों से आता है। इनमें यूरेनियम, पोटाशियम^{४०}, थोरियम और रेडियम शामिल हैं। रेडियम का आचरण कैल्शियम और स्ट्रानटियम की तरह होता है और यह हमारी हड्डियों में जमा होता है। हमारी जहाँ

तक जानकारी है, ये सभी प्रभाव डेनवर क्षेत्र में कम-से-कम उतने ही सघन हैं, जितने सान फ्रांसिस्को या न्यू आर्लियन्स में।

डेनवर में हड्डियों के कैंसर और ल्युकेमिया की कम घटनाओं की एक सम्भावित व्याख्या यह हो सकती है कि विकिरण-सदृश विनाशी प्रक्रियाएँ अल्प परिमाण में होने पर आवश्यक रूप से क्षतिकारक नहीं होतीं। जीवित प्राणियों में कोष-ह्रास और पुनर्वृद्धि की क्रियाएँ सतत् चलती रहती हैं। इन क्रियाओं में किंचित् प्रगति प्राणियों के लिए लाभदायक हो सकती है। यह बात नहीं भुलायी जानी चाहिए कि जब कि विकिरण कैंसर पैदा कर सकता है, इसका बड़ी मात्राओं में प्रयोग कैंसर को रोकने और कभी-कभी उसके उपचार के लिए भी हुआ है। कारण यह है कि कुछ कैंसर के कोष विकिरण-द्वारा, साधारण कोषों की अपेक्षा, अधिक दृढ़ता से क्षतिग्रस्त होते हैं।

पर इस तालिका के बावजूद, डेनवर में रहने से हड्डियों के कैंसर और ल्युकेमिया की ओर वस्तुतः वर्द्धित प्रवृत्ति भी हो सकती है। यदि ऐसा है—और यही मुख्य बात है—तो यह प्रभाव अन्य प्रभावों की तुलना में कहीं नगण्य है। हमें यह याद रखना चाहिए कि डेनवर कई मामलों में (ऊँचाई के अतिरिक्त) न्यू आर्लियन्स और सान फ्रांसिस्को से भिन्न है और ये भिन्नताएँ आँकड़ों को भी प्रभावित कर सकती हैं।

पृष्ठमूलक विकिरण का एक गम्भीर अध्ययन इस बात का और भी प्रमाण उपस्थित करता है कि यह विकिरण एस-आर^{९०} के वर्तमान और सम्भावित प्रभावों से भी अधिक महत्वपूर्ण है। पेय जल से हमारी हड्डियों में जमा होनेवाला रेडियम प्रति वर्ष ०·५५ रोएंटजन परिमाण तक पहुँच जाता है। साथ ही, रेडियम-द्वारा परित्यक्त अधिक भारी और सुस्त अल्फा-कण ऐसी आयनीकरण-प्रक्रियाओं को जन्म देते हैं, जो अत्यधिक सामीप्य में कार्यरत होती हैं और इस प्रकार एस-आर^{९०} के आयनीकरण से भी अधिक क्षतिकारक प्रमाणित होते हैं। एक और हानिकारक तथ्य यह भी है कि रेडियम हमारी हड्डियों में छोटे-छोटे गर्म कतरों (Nodules) के रूप में जमा होता है। इस प्रकार स्थानीय क्षति की सम्भावना बढ़ जाती है।

हमारा जिस पृष्ठमूलक विकिरण से सम्पर्क होता है, वह कुछ अप्रत्याशित कारणों से घटता-बढ़ता भी है। अभी हाल में इस ओर इंगित किया गया है कि ईंट में लकड़ी की अपेक्षा अधिक प्राकृतिक रेडियो-सक्रियता हो सकती है। एक ईंटों के और लकड़ी के मकान में निवास का अन्तर विकिरण को,

विनाशकारी तत्व-वर्षा से इस समय प्राप्त हो रही मात्रा का दस-गुना तक बढ़ा सकता है। (ईंट से प्राप्त होनेवाला अतिरिक्त विकिरण प्रति वर्ष ०·०३ रोएंटजनों तक हो सकता है।)

मनुष्य केवल प्राकृतिक साधनों से प्राप्त विकिरण का ही शिकार नहीं होता—मानव-निर्मित साधनों से प्राप्त विकिरण का भी शिकार होता है। इनमें से एक है, ऐसी कलाई-घड़ी बाँधना, जिसका 'डायल' चमकीला हो। दूसरा है, चिकित्सा-सम्बन्धी कार्यों के लिए क्ष-किरणों का प्रयोग। इन दोनों ही साधनों से विनाशकारी तत्व-वर्षा की अपेक्षा अधिक विकिरण प्राप्त होता है।

जिन आयनीकरण करनेवाले विकिरणों से हमारा सम्पर्क होता है, उनमें क्ष-किरणें सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं। कुछ मामलों में चिकित्सा-मूलक क्ष-किरणों की मात्रा स्पष्टतः क्षतिकारक होती है। पर यह क्षति प्रायः ही क्ष-किरणों के प्रयोग से रोग की सही पहचान होने पर प्राप्त होनेवाले लाभ की दृष्टि से बहुत कम साबित होती है।

इन सब का सारतत्व यह हुआ। विनाशकारी तत्व-वर्षा के प्रभावों के बारे में हमारी जानकारी बहुत त्रुटिपूर्ण है। हम यह सही-सही नहीं कह सकते कि इससे कितने लोगों की जान जायेगी या कितने लोगों की आयु कम हो जायेगी। दूसरी ओर, इतना तो हम जरूर जानते हैं कि विनाशकारी तत्व-वर्षा का प्रभाव इतना कम है कि उसके आँकड़े नहीं तैयार किये जा सकते। समुद्री सतह से डेनवर-जैसे ऊँचे स्थान में, जहाँ ब्रह्माण्डीय विकिरण का परिमाण अथवा घनत्व अधिक होता है, पहुँचने से उत्पन्न प्रभाव की तुलना में भी यह कम है। प्रति वर्ष छाती का एक्स-रे कराने से भी यह परिमाण कम है। दूसरे शब्दों में, हम यह निश्चयपूर्वक कह सकने की स्थिति में हैं कि विश्वव्यापी विनाशकारी तत्व-वर्षा का खतरा उन कई विकिरण के प्रभावों से कम है, जिनसे मनुष्य अब तक चिन्तित नहीं हुआ है और न है।

हमने विनाशकारी तत्व-वर्षा के विकिरण की, दूसरे स्रोतों के विकिरण के साथ, तुलना की है। विनाशकारी तत्व-वर्षा के खतरे की, विभिन्न प्रकार के खतरों के साथ तुलना करना भी सम्भव और लाभदायक है। इसके लिए सभी खतरों को आयु-सीमा-ह्रास के रूप में व्यक्त करना सुविधाजनक होगा। उदाहरण के लिए, यदि एक व्यक्ति प्रति दिन एक डिब्बा सिगरेट पीता है, तो उसकी आयु लगभग ९ साल घट जाती है। इसका मतलब यह हुआ कि एक सिगरेट १५ मिनट आयु घटाती है। निस्सन्देह, यह निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा

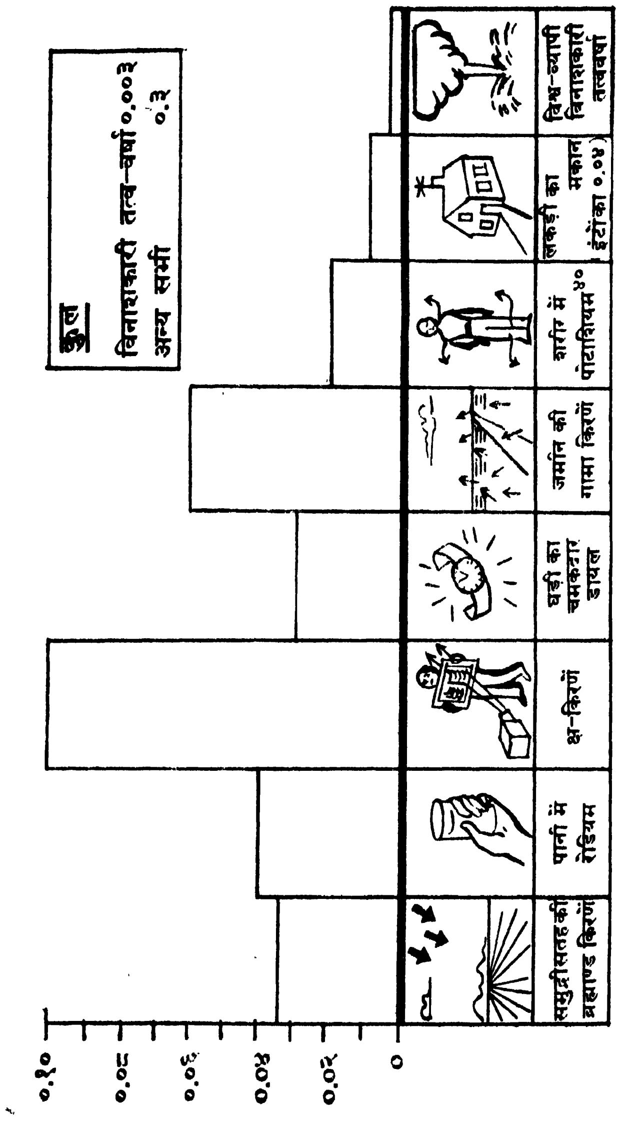
सकता कि सिगरेट इतने हानिकारक हैं। डा० हार्डिन जोन्स के अनुसार, आँकड़ों के विश्लेषण पर आधारित यह एक 'सर्वोत्तम अनुमान' है। डा० जोन्स के कुछ आँकड़े-सम्बन्धी निष्कर्ष निम्नलिखित तालिका में दिये जाते हैं।[1]

	आयु-सीमा-ह्रास
औसत वजन से १० प्रतिशत अधिक होने पर	१.५ वर्ष
एक पैकेट सिगरेट रोज पीने पर	९ वर्ष
देहात के बजाय शहर में रहने पर	५ वर्ष
अविवाहित रहने पर	५ वर्ष
एक ही जगह बैठे रहने के, अर्थात् व्यायामहीन काम में लगे रहने पर	५ वर्ष
पुरुष-जाति का होने पर	३ वर्ष
मोटर, आदि की दुर्घटनाओं पर	१ वर्ष
विकिरण के एक रोएंटजन से	५ से १० दिन
विश्वव्यापी विनाशकारी तत्व-वर्षा से (जीवनव्यापी मात्रा वर्तमान स्तर पर)	१ से २ दिन

पाठक देखेंगे कि विश्वव्यापी विनाशकारी तत्व-वर्षा उतनी ही खतरनाक है, जितना औसत वजन से एक औंस अधिक होना या हर दो महीने पर एक सिगरेट पीना।

यहाँ यह आपत्ति उठायी जा सकती है कि विनाशकारी तत्व-वर्षा अभी भले ही खतरनाक न हो, पर अधिक राष्ट्रों-द्वारा परमाणविक अस्त्रों के विकास और परीक्षण से वैसा होना सम्भव है। इस सम्बन्ध में हम इतना ही कह सकते हैं कि भविष्य के बारे में कोई अनुमान लगाना आसान नहीं है। पर कुछ तथ्य आशावादिता को उचित प्रमाणित करते हैं। हम यह सीख रहे हैं कि किस तरह उचित वातावरण में बमों का विस्फोट करके विनाशकारी तत्व-वर्षा को नियंत्रित किया जा सकता है। परिष्कृत बमों का विकास रेडियो-सक्रियता के उत्पादन को बहुत-कुछ कम कर देगा। गहरे भूगर्भीय परीक्षण विनाशकारी तत्व-वर्षा को पूर्णतः समाप्त कर देंगे। सन् १९५४ में वातावरण में प्रसारित सक्रियता किसी भी दूसरे वर्ष में परिमुक्त सक्रियता से कहीं अधिक थी। यह बहुत

१. इस तालिका की आखिरी पंक्ति हमारे अपने अनुमानों पर आधारित है।



मनुष्य-द्वारा विकिरण की ग्राह्यता (औसत मात्रा प्रति वर्ष रोंएट्जनों में)

सम्भव है कि अमरीकी परीक्षणों-द्वारा उत्पादित सक्रियता क्रमशः कम होती जाये।

अंत में, हम यह कह सकते हैं कि विकिरण अपने प्रभावों के बारे में अनिश्चित है — रसायन निश्चित हैं। विकिरण के प्रभावों के बारे में हम जितना जानते हैं, उससे भी कम जानकारी हमें हमारे भोजन, दवा और उस हवा में, जिसमें हम साँस लेते हैं, एक नये उपादान के योग के प्रभावों के बारे में है। हम जिस तरह विकिरण के सम्भावित प्रभावों के बारे में चिन्ता करते हैं, यदि उसी तरह अपने रासायनिक वातावरण-सम्बन्धी अज्ञानता की चिन्ता करें, तो एक ऐसी रूढ़िवादी स्थिति में पहुँच जायेंगे कि सारे परिवर्तन रुक जायेंगे – सारी प्रगति रुक जायेगी। यह रूढ़िवादिता फराओ के साम्राज्य से भी अधिक अचल होगी।

ऐसा दावा किया गया है कि किसी की जिंदगी को खतरे में डालना अनुचित है। तब, क्या यह अधिक यथार्थवादी और वस्तुतः मानवतावाद के सिद्धान्त के अनुकूल नहीं है कि सभी मनुष्यों के लिए श्रेष्ठतर जीवन की ओर प्रगति की जाये?

अध्याय १३

मानव-जाति के लिए खतरा

विकिरण व्यक्ति को क्षति पहुँचा सकता है। यह हमारे बच्चों के लिए भी हानिप्रद हो सकता है और मानव-जाति को भी क्षति पहुँचा सकता है। हम देख चुके हैं कि परीक्षण के कारण उत्पन्न होनेवाले विकिरण का खतरा उन अनेक खतरों की तुलना में कम है, जिनके सम्पर्क में हम रोज ही आते हैं और जिनकी हम सदा ही उपेक्षा करते हैं। वास्तव में, आज के सभ्य संसार में रहने के लिए हमें इनकी उपेक्षा करनी पड़ती है। साथ ही, हम इस बारे में निश्चित नहीं हैं कि वस्तुतः व्यक्ति को इससे खतरा पहुँचता ही है।

हाँ, विकिरण हमारे बच्चों में निस्सन्देह कुछ हानिकारक परिवर्तन लाता है इससे भी अधिक भयप्रद बात तो यह है कि, सम्भव है, ये परिवर्तन हमारे बच्चों

में न दिखाई देकर उनके बच्चों में दिखाई दें या उससे भी आगे की पीढ़ी में दिखाई दें। एक ऐसा खतरा, जो कई पीढ़ियों तक छिपा रह सकता है, अधिक भयकारी लग सकता है; खास कर इस कारणवश कि बार-बार इस बात को दुहराया गया है कि विकिरण के सभी ऐसे प्रभाव हानिकारक होते हैं।

हम अपने तत्वों को आगामी पीढ़ियों तक अत्यधिक चमत्कारपूर्ण और एकत्रित रूप में पहुँचाते हैं। एक बच्चा अपने माँ-बाप से कुछ 'क्रोमोसोम' (Chromosomes) प्राप्त करता है – प्रत्येक से २४ क्रोमोसोम।[1] ये वे ढाँचे होते हैं, जिनके इर्द-गिर्द वास्तविक तत्व-वाहक 'जीन' (Genes) जुड़े होते हैं।

जीनों की प्रकृति के बारे में कुछ समझना अब हम आरम्भ कर रहे हैं। वे बहुत बड़े चक्राकार अणुओं के सदृश प्रतीत होते हैं। वे हमारे शरीर की बृहत् योजना – और हमारे चरित्र को भी – एक विचित्र रासायनिक संकेतात्मक ढंग से अपने में निहित रखते हैं।

वांशिकता के नियम इस कारण जटिल हैं कि एक समान तत्व पर माता-पिता, दोनों के जीनों का प्रभाव पड़ता है। प्रायः ही ये दोनों जीन अपने आचरण-विशेष से एक-दूसरे को दबाना चाहते हैं और अंत में बात समझौते पर जाकर समाप्त होती है। कभी-कभी तो यह समझौता संतुलित होता है और कभी-कभी असंतुलित। परन्तु इन दोनों जीनों में से किसी एक का ही प्रवेश अगामी पीढ़ी के बच्चे में होगा। यह समझौता अस्थायी होता है और मौलिक तत्व पुनः उभर सकते हैं। क्रोमोसोमों (या जीन-समूहों) की जोड़ी में से कौन-सा क्रोमोसोम आगे बढ़ेगा, यह एक संयोग की ही बात है। परमाणुओं के संसार की तरह ही, कोषों के संसार में भी भविष्य का निर्धारण संयोग करता है, भाग्य नहीं।

इन सब तथ्यों में से एक में ही हमें विशेष दिलचस्पी लेने की जरूरत है। वांशिकता की इकाइयाँ स्थिर तो होती हैं, पर पूर्णतः अपरिवर्तनीय नहीं। इस बात की थोड़ी सम्भावना है कि कोई भी जीन परिवर्तित हो सकता है। मतलब यह कि यह एक नये रसायन का रूप ग्रहण कर सकता है, जिसका एक नया संकेतात्मक स्वरूप हो और जिसमें नये तत्व हों।

---

१. हाल का एक अनुसन्धान बतलाता है कि यह संख्या कभी-कभी २३ होती है।

एक जीन एक अत्यधिक सुचारु और सार रूप में गठित पदार्थ है। इतने कम पदार्थ में अतीत के सभी जातिगत गुणों का वहन करने के लिए इसका ऐसा होना जरूरी है। संयोगवश होनेवाला कोई परिवर्तन इस व्यवस्था को लगभग हर बार विनष्ट कर देगा। ऐसे अधिकांश परिवर्तन क्षतिकारक हैं और कुछ तो प्राणघातक भी।

यह एक अविश्वसनीय तथ्य है कि ये आकस्मिक परिवर्तन, जो लगभग सदा ही हानिकारक हैं और कभी भी किसी योजना के अनुसार नहीं बढ़ते, आगे चल कर प्रकृति-द्वारा उत्पन्न बहुत-से सुन्दर और दोष-रहित जीवनधारियों (जिनमें मनुष्य भी शामिल है) के लिए जिम्मेदार हुए होंगे। अकेले कोषों से लेकर कोष-समूहों, कीड़ों, मछलियों, स्तनधारियों और मनुष्यों तक प्रसारित सूत्र निश्चय ही संयोग की कृति नहीं मालूम पड़ती और ऐसा तो और भी कम सम्भव दिखायी पड़ता है कि विकलांग या मृत्यु होने की हजारों सम्भावनाओं के मुकाबले एक छोटे-से सुधार की सम्भावना के लिए प्रकृति ने यह एक दाँव खेला है। फिर भी यह संयोग का ही एक अति भयानक खेल है, जिसने मानव-शरीर — और किसी हद तक मानवीय जीवन-तत्व — को उत्पन्न किया।

बड़ी संख्याएँ बड़ी विचित्र वस्तुएँ हैं और जब इनके किसी बड़े समुदाय के प्रत्येक सदस्य पर व्यक्तिगत रूप से ध्यान देना आवश्यक होता है, तब तो संख्याएँ और भी दुरूहता ग्रहण कर लेती हैं। अरबों भिन्न-भिन्न पीढ़ियों के अरबों समकालीन जीवों ने एक अविश्वसनीय तथ्य यह प्रस्तुत किया कि जीवन की एकात्मकता महत् जुए की उपज है।

विकिरण निश्चय ही क्षतिकारी है। यह परिवर्तनों को जन्म देता है। चूँकि जीन पृथक्-पृथक् अणु के रूप में परिलक्षित होते हैं, इसलिए आयनीकरण या उत्तेजना की एक ही प्रक्रिया एक परिवर्तन के रूप में प्रकट हो सकती है। जैसा कि पहले कहा गया है, इस बात में सन्देह है कि विकिरण की बहुत ही छोटी मात्रा से कैंसर या ल्युकेमिया हो सकता है या नहीं। परन्तु इस बात में बहुत कम सन्देह की गुंजायश है कि विकिरण की अत्यल्प मात्रा से भी परिवर्तन घटित हो सकते हैं। जितना कम विकिरण होगा, उतनी ही कम इसकी सम्भावना होगी। परन्तु सम्भावना रहेगी अवश्य।

परिवर्तनों की प्राकृतिक दर में बहुत अधिक वृद्धि के वस्तुतः बड़े भयानक परिणाम हो सकते हैं। परन्तु इस बारे में हम पूर्णतः निश्चित हो सकते हैं कि

परमाणविक परीक्षणों से विकिरण के परिवर्तनों की सम्भावना बहुत कम परिमाण में बढ़ेगी।

यहाँ भी तर्क लगभग वही है, जो व्यक्तिगत खतरे के सम्बन्ध में था। परीक्षणों से मानवीय प्रजनन-कोषों में केवल ०.००१ या ०.००२ रोएंटजन का वर्ष-भर में प्रवेश होता है। यह परिमाण एक पीढ़ी में लगभग ०.०५ रोएंटजन के बराबर है। इस विकिरण का अधिकांश सी-एस[१३७] की, जो पृथ्वी में जमा है या शरीर में मिल गया है, गामा-किरणों से पैदा होता है। इस विकिरण के कारण होनेवाले परिवर्तनों की संख्या की प्राकृतिक परिवर्तनों की संख्या से जरा तुलना की जाये।

कुछ प्राकृतिक परिवर्तन ताप और रसायनों के कारण होते हैं। फिर, कुछ परिवर्तन पृष्ठमूलक विकिरण, ब्रह्माण्डीय किरणों और हमारे शरीर के अन्दर के या निकटवर्ती प्राकृतिक रेडियो-सक्रिय तत्वों-द्वारा परित्यक्त गामा और बीटा-किरणों के कारण भी होते हैं। हमारा अनुमान है कि प्राकृतिक परिवर्तनों का दस प्रतिशत भाग पृष्ठमूलक विकिरण से सम्बन्धित होता है।

एक पीढ़ी की अवधि में मानवीय प्रजनन-कोषों में पहुँचनेवाले पृष्ठमूलक विकिरण की मात्रा लगभग ५ रोएंटजन होती है। मात्रा और परिवर्तनों की संख्या के बीच एक साधारण अनुपात मान लिया जाये, तो यह प्रकट होगा कि प्राकृतिक परिवर्तनों (पृष्ठमूलक विकिरण और अन्य सभी कारणों से उद्भूत परिवर्तनों) की कुल संख्या के बराबर परिवर्तन लाने के लिए ५० रोएंटजनों की आवश्यकता होगी। मतलब यह कि ५० रोएंटजनों की मात्रा एक 'दुहरात्मक मात्रा' (Doubling dose) है।

अतः परमाणविक परीक्षण परिवर्तनों की संख्या लगभग ०·०५ ÷ ५० के परिमाण में, जो कि ०·००१ प्रतिशत ठहरता है, बढ़ा रहे हैं। परिवर्तनों की दर में इस तरह की वृद्धि, निश्चय ही, चिन्ता के लिए कोई गम्भीर कारण नहीं प्रतीत होती।

वस्तुतः परीक्षणों के कारण उद्भूत परिवर्तनों की संख्या, प्राकृतिक रेडियो-सक्रियता की भौगोलिक और ऊँचाई-सम्बन्धी विभिन्नताओं की तुलना में भी बहुत छोटी है। ऊँचाई पर बसे पेरू में 'इन्का' साम्राज्य कई पीढ़ियों तक कायम रहा। तिब्बत के लोग अनेक पीढ़ियों से ब्रह्माण्डीय किरण की अधिक तीव्रता के सम्पर्क में हैं, जो वातावरण की सूक्ष्म परत से होकर उन पर प्रहार करती आ रही है। वे लोग परमाणविक परीक्षणों के कारण पैदा होनेवाले

अतिरिक्त विकिरण से भी अधिक विकिरण-परिमाण के सम्पर्क में रहते आये हैं। फिर भी पेरू अथवा तिब्बत में रहनेवाली मानव-जाति अथवा अन्य प्राणधारियों में जन्म-सम्बन्धी अन्तर नहीं पाये गये हैं। निस्सन्देह यहाँ हम कुछ ऐसे प्रश्नों के बारे में विचार कर रहे हैं, जो कुछ लोगों के लिए बहुत ही गम्भीर सिद्ध हो सकते हैं, पर समाज अथवा मानव-जाति की दृष्टि से जो गम्भीर नहीं हैं।

प्रायः ही यह बात दुहरायी गयी है कि विकिरण के कारण होनेवाले सभी परिवर्तन हानिकारक हैं। यह विश्वास करने का सम्पूर्ण कारण है कि विकिरण के कारण होनेवाले परिवर्तन प्रकार की दृष्टि से अन्य परिवर्तनों से भिन्न नहीं हैं। तब क्या हमें गम्भीरतापूर्वक यह मान लेना चाहिए कि सभी परिवर्तन हानिकारक होते हैं? उनमें से अनेक ऐसे हैं, यह बात मानी जा चुकी है। पर यदि वे सब-के-सब वास्तव में सर्वदा हानिकारक ही रहे हैं, तो हमें विकास-सम्बन्धी साधारणतम तथ्यों को भी अस्वीकार करना होगा।

कुछ ऐसे लोग भी होंगे, जो यह विचार रखते होंगे कि मानव-जाति में सुधार सम्भव नहीं है। ऐसा तर्क प्रतिवाद-योग्य तो नहीं है, पर उचित भी नहीं है। जिस चीज में आगे सुधार नहीं हो सकता, वह परिपूर्ण होती है और ऐसा कम ही लोग मानते होंगे कि हमारी जाति सम्पूर्णता का दावा कर सकती है।

एक दूसरा और कहीं अधिक समर्थनीय तर्क यह पेश किया गया है कि वन्य अवस्था में रहनेवाले प्राणी प्राकृतिक चुनाव के द्वारा स्वयं ही परिपूर्णता के लिए प्रयत्नशील होते हैं। मानव-समाज ने अपूर्ण और विकारशील व्यक्ति की चिन्ता करके प्राकृतिक चुनाव को समाप्त कर दिया है। इसलिए भावी परिवर्तन मानवता का सुधार नहीं करेंगे।

इस प्रश्न पर विचार करना इस सीधी-सी बात के कारण बहुत कठिन है कि इस तर्क से दो ऐसी प्रक्रियाओं की परस्पर-क्रिया का सम्बन्ध है, जो आकार में भिन्न होने के साथ-साथ प्रकार में भी भिन्न हैं। एक ओर, इसका सम्बन्ध विकास-प्रक्रिया से है, जो ग्लेशियर (धीरे-धीरे सरकनेवाली बर्फ की चट्टान) की भाँति मंथर गति से आगे बढ़ती है। दूसरी ओर, यह औद्योगिक और सामाजिक परिवर्तनों के साथ मानव-सभ्यता की प्रक्रिया की ओर ध्यान आकृष्ट करता है, जिसने पहाड़ से गिरते हुए हिम-खंडों की तरह तेज गति प्राप्त कर ली है। यह गति अब भी बनी हुई है और निरन्तर बढ़ रही है और हम लोग कहाँ पहुँचेंगे, यह हम नहीं जानते। पहाड़ से गिरते खंडों की गति धारण कर ग्लेशियर

की गति पर विचार करने से चीजें पूर्णतः अस्वाभाविक प्रकट होती हैं। इससे बहुत पहले, कि परिवर्तन की वर्तमान दरों का मनुष्य पर प्रभाव पड़े, हम एक सर्वथा दूसरे विश्व में रहेंगे और स्वयं अपने आचरण को, जिसमें प्राकृतिक या दूसरे प्रकार के चुनाव भी शामिल हैं, ऐसे ढंगों से प्रभावित करने लगेंगे, जिनकी आज हम कल्पना तक नहीं कर सकते।

यदि हम इस प्रश्न पर विचार करेंगे कि सभ्यता किस तरह प्राकृतिक चुनाव को प्रभावित करेगी, तो इस आशा से नहीं कि हमें कोई निश्चित उत्तर प्राप्त होगा; बल्कि हम ऐसा यह जानने के लिए करेंगे कि वे सब तर्क कितने संदेहपूर्ण हैं, जिनका सम्बन्ध दो ऐसी प्रक्रियाओं की परस्पर-क्रिया से है, जो समान स्तर पर नहीं मापी जा सकतीं।

यह सत्य है कि हम उन बच्चों की, जिनकी वांशिक कमजोरियों के कारण प्राकृतिक परिस्थितियों में विनष्ट हो जाने की आशंका है, रक्षा कर सकते हैं और करते हैं। यह भी सच है कि ऐसा हम व्यक्ति से सम्बन्धित कारणों और भावनाओं को लेकर करते हैं और इसमें जातिगत परिणामों का कोई खयाल नहीं रखते। सभ्यता की हमारी वर्तमान स्थिति के अन्तर्गत एक ऐसी बीमारी, जो रसायनों के प्रयोग या सर्जन के चाकू से ठीक की जा सकती है, वस्तुतः भयप्रद बीमारी नहीं मानी जाती। हमारी वर्तमान परिस्थिति में एक ऐसा जीवन समाज और जाति के लिए उतना ही मूल्यवान होगा, जितना एक ऐसा जीवन, जिसमें ये ऊपरी खामियाँ न हों। हम जो इस प्रकार अधिक जीवन की रक्षा कर सकते हैं और करते हैं, वह इसी बात पर बल देता है कि वर्तमान परिस्थितियों में वे प्राणिविषयक (Biological) भिन्नताएँ, जो पहले महत्वपूर्ण मानी जाती थीं, अब कोई महत्व नहीं रखतीं।

दूसरी ओर, आज के सामाजिक जीवन में बहुत-से ऐसे तत्व, जो एक जंगली प्राणी के लिए महत्वहीन थे, महत्वपूर्ण बन गये हैं। विचारों का आदान-प्रदान करने और संगठित होने की हमारी क्षमता न केवल ऐसे तत्वों में से एक है, बल्कि सम्भवतः सबसे अधिक स्पष्ट है। अस्तित्व के लिए संघर्ष अधिक शान्तिपूर्ण बन गया है और किसी व्यक्ति के अपने बच्चों के रूप में अस्तित्व बनाये रखने की सम्भावना आचरण के नये तरीकों से शासित होती है। साथ ही, सभ्य जीवन व्यतीत करनेवाले व्यक्ति और सभ्य जीवन से दूर व्यक्ति का अन्तर अत्यधिक महत्वपूर्ण है तथा यह और भी महत्वपूर्ण बनेगा। सम्भवतः सभ्यता

जाति के विकास को समाप्त नहीं करेगी; बल्कि उसे नये मार्गों पर निर्देशित करेगी।

परन्तु महानतम परिवर्तन की आशा एक बिल्कुल ही अलग दिशा से की जा सकती है। हम मानवीय वांशिकता की जटिलताओं को बड़ी बारीकी से, अच्छी तरह, समझने जा रहे हैं। तब हमारे सामने समस्याएँ उपस्थित होंगी और हम एक पूर्णतः भिन्न और नवीन प्रकार की सम्भावनाएँ पायेंगे। एक व्यक्ति की अपने बच्चों में दिलचस्पी छिछली नहीं होती। यह प्राणिविज्ञान, समाजविज्ञान और इतिहास की सर्वाधिक सुदृढ़ तथा स्थायी शक्तियों में से एक है। वांशिकता के विवरणों की स्पष्ट जानकारी हमारे सामने कुछ गम्भीर कठिनाइयाँ उपस्थित कर सकती हैं, क्योंकि एक नयी परिस्थिति कभी भी आसानी से जीवन के प्रचलित तरीकों में ठीक नहीं बैठती। अन्त में अधिक जानकारी ऐसे सुधार ला सकती है, जिनके सामने अब तक सिद्ध किये गये सभी महान् कार्य महत्वहीन दीखने लगें।

वांशिकता के लिए रेडियो-सक्रियता का वास्तविक महत्व इस बात में नहीं है कि हम ग्लेशियर की गति में प्रति हजार वर्ष एक इंच की वृद्धि कर सकते हैं। न्यैष्टिक विकिरण का वास्तविक महत्व यह है कि यह हमें जीवन की विचित्र प्रक्रियाओं और एक पीढ़ी को दूसरी पीढ़ी से संयुक्त करनेवाले विचित्र तत्वों को समझने में सहायता दे रहा है।

अध्याय १४

कोबाल्ट-बम

न्यैष्टिक विस्फोट कई कारणों से भयानक प्रतीत होते हैं। उन्हें एक अप्रस्तुत संसार के समक्ष एक नाटकीय वैचित्र्य के साथ–द्वितीय विश्व-युद्ध के नर-संहार की चरम सीमा के रूप में–उपस्थित किया गया था। उनकी विनाश-शक्ति आश्चर्यजनक है। परमाणविक बमों के बारे में हम अपने चिंतन को अभी संतुलित भी नहीं कर पाये थे कि युद्ध-कौशल के एक और भी शक्तिशाली अस्त्र–उदूजन बम–का आविष्कार हो गया। और, सबसे बुरी बात तो यह हुई कि विनाश के भय के साथ अज्ञात का भय भी संयुक्त हो गया।

अतः यह आश्चर्यकारी बात नहीं है कि न्यैष्टिक अस्त्रों की चर्चा एक पूर्णतः तर्कसंगत स्तर पर आगे नहीं बढ़ सकी।

परमाणविक और उद्‌जन-बमों के दुःस्वप्न के साथ एक और वस्तु, एक सचाई के रूप में नहीं, बल्कि एक अतिरिक्त खतरे के रूप में जुड़ गयी है और वह है, कोबाल्ट-बम। ऐसे बम का उद्देश्य न्यैष्टिक विस्फोटों के सर्वाधिक भयकारी पहलू—रेडियो-सक्रियता—को और भी सघन बनाना है। रेडियो-सक्रियता शत्रु-पक्ष में विष-प्रसार करने के लिए काम में लायी जा सकती है। पर यह नियंत्रण से बाहर निकल कर हर किसी को विषाक्त बना सकती है।

कोबाल्ट^{६०} सामान्य धातु कोबाल्ट (गिल्ट के समान एक सफेद धातु) का एक रेडियो-सक्रिय आइसोटोप है। प्राकृतिक और स्थायी कोबाल्ट^{५९} में मंद न्यूट्रनों को स्थान देकर इसे आसानी से पैदा किया जा सकता है। इसका अर्द्धजीवन ५ वर्षों का होता है और यह भेदक गामा-किरणें बिखेरता है। ये तत्व कैंसर के उपचार में इसे उपयोगी बनाते हैं।

कैंसर-सम्बन्धी अनेक रोग-विकास स्वस्थ तंतु की अपेक्षा विकिरण से अधिक प्रभावित होते हैं। इसलिए खतरनाक 'ट्युमरों' (Tumors) को कम करने के लिए—कभी-कभी नष्ट करने के लिए भी—विकिरण का प्रयोग किया जा सकता है। कोबाल्ट^{६०} की भेदक किरणें मानव-शरीर में काफी अन्दर स्थित कैंसर तक पहुँच सकती हैं। कोबाल्ट^{६०} का जीवन-काल काफी लम्बा होता है और इसलिए अस्पतालों में इस तत्व का आसानी से संग्रह किया जा सकता है।

परन्तु जो तत्व कोबाल्ट^{६०} को उपयोगी बनाते हैं, वही उसे गम्भीर रूप से खतरनाक भी बनाते हैं। एक न्यैष्टिक विस्फोट में अनेक न्यूट्रन पैदा होते हैं और उन्हें साधारण कोबाल्ट आत्मसात् कर सकता है। इस प्रकार उद्‌भूत रेडियो-सक्रियता इतने लम्बे समय तक बनी रहती है कि उसका व्यापक रूप से वितरण हो जाता है। इसकी किरण आसानी से एक फुट तक ठोस दीवाल को भेद सकती है और कई सौ फुट तक हवा में पहुँच सकती है। एक कोबाल्ट-बम वस्तुतः एक सर्वाधिक अप्रिय वस्तु साबित होगा।

इस सम्भावना पर विस्तृत रूप से चर्चा की गयी है कि भावी न्यैष्टिक परीक्षणों का उपयोग, रेडियोधर्मी युद्ध के लिए, एक कोबाल्ट-बम या अन्य बमों के विकास में होगा। वस्तुतः इन परीक्षणों का कोबाल्ट-बम से अत्यल्प सम्बन्ध है। एक बार उद्‌जन-बम-जैसे शक्तिशाली न्यैष्टिक अस्त्र तैयार कर लेने के बाद एक रेडियो-धर्मी बम तैयार करना अपेक्षाकृत सरल होता है।

इसके लिए आगे परीक्षण करना अनिवार्यतः आवश्यक नहीं है। यदि किसी परीक्षण की आवश्यकता अनुभव भी की जाये, तो सिर्फ इतना करना ही पर्याप्त होगा कि किसी तत्व के एक मध्यम परिमाण को क्रियाशील किया जाये। इससे यह पता चल जायेगा कि कोई बम रेडियो-धर्मी युद्ध के अस्त्र के रूप में किस तरह कार्यशील होगा। इस तरह के परीक्षणों से वातावरण में अत्यन्त नगण्य मात्रा में रेडियो-सक्रियता संयुक्त होगी। इसलिए परीक्षण-कार्यक्रम के सम्बन्ध में हमें कोबाल्ट-बम या तत्सम्बन्धी किसी अन्य परीक्षण को लेकर चिन्तित नहीं होना चाहिए। कोबाल्ट-बम या सामान्य रेडियो-धर्मी युद्ध के सम्बन्ध में प्रश्न यह नहीं है कि यह सम्भव होगा या नहीं—यह सम्भव है—बल्कि यह है कि सैनिक दृष्टि से यह लाभप्रद उद्देश्य सिद्ध करता है या नहीं।

यह असम्भव नहीं है कि ऐसी परिस्थितियाँ पैदा हो जायें, जिनमें रेडियो-धर्मी युद्ध सैनिक दृष्टि से लाभकारी साबित हों। कोबाल्ट के बजाय, अन्य पदार्थ न्यैष्टिक बमों के समीप रखे जा सकते हैं, जिससे अन्य रेडियो-सक्रिय तत्व पैदा किये जा सकें। ऐसे तत्व यदि ठीक से चुने जायें, तो एक ऐसा रेडियो-सक्रिय पदार्थ उपलब्ध किया जा सकता है, जो विस्फोट-स्थल पर रखे जाने से उस क्षेत्र को इतने काल तक विषाक्त बना देगा, जितने की सैनिक आवश्यकताएँ माँग करती हैं। इस रेडियो-सक्रिय पदार्थ का जीवन-काल इतना दीर्घ हो सकता है कि लोगों को विषाक्त क्षेत्र से हट जाने का अवसर मिल जाये। साथ ही, ऐसी व्यवस्था भी की जा सकती है कि लगभग सभी सक्रियता विस्फोट-क्षेत्र के आसपास ही रहे और दूरवर्ती क्षेत्र गम्भीर रूप से प्रभावित न हों। अतः ऐसा सोचना सम्भव है कि रेडियो-धर्मी युद्ध का मानवीय ढंग से व्यवहार किया जा सकता है। इस तरह के अस्त्र का एक द्वीप के समीप विस्फोट करके, वहाँ के सभी लोगों को बिना किसी जीवन-क्षति के हटा सकना सम्भव हो सकता है। कोई भी यंत्र या अस्त्र अपने-आप में बुरा नहीं होता। सब-कुछ निर्भर करता है उसके प्रयोग के ढंग पर।

साधारण जनता की यही धारणा है कि न्यैष्टिक अस्त्रों का प्रयोग सैनिक उद्देश्य से नहीं, बल्कि अधिकाधिक लोगों को मारने और उनमें आतंक फैलाने के लिए होगा। तांत्रिक दृष्टि से यह सम्भव है। वस्तुतः इसके लिए परमाणविक बम की भी आवश्यकता नहीं है। पिछले सौ वर्षों से यह सम्भावना हमारे साथ रही है। कृमि-युद्ध सुदूरव्यापी विनाश उत्पन्न कर सकता है। फिर भी

किसी ने युद्ध के लिए इस जघन्य तरीके को अख्तियार नहीं किया। हमें विश्वास है कि कोई भी व्यक्ति अपने शत्रु को कृमि-सम्बन्धी या रेडियो-सम्बन्धी विनाश का लक्ष्य बना कर अन्ततः स्वयं को भी उसी का शिकार बना देना पसन्द नहीं करेगा। इस खतरे के विरुद्ध हमारी सुरक्षा इसलिए नहीं है कि यह असम्भव है, बल्कि हमारी सुरक्षा मानव-स्वभाव के एक उत्कृष्ट और बुद्धिगत भाग से, अर्थात् जीवित रहने की आकांक्षा और सहज शिष्टता की भावना से है।

अध्याय १५

भावी परीक्षणों के बारे में

अनेक लोग परीक्षणों को रोक देने के पक्ष में हैं और उनकी यह भावना सुदूर-व्यापी और सशक्त है। परीक्षणों का प्रश्न स्पष्टतः महत्वपूर्ण है। व्यक्ति के रूप में हमारी सुरक्षा को यह प्रभावित कर सकता है। फिर एक राष्ट्र के रूप में हमारी सुरक्षा को तो यह निश्चय ही प्रभावित करेगा। एक स्वतंत्र तथा गणतांत्रिक देश में बहुमत को मान्यता देनी ही होगी, क्योंकि 'जनता' ही वहाँ सर्वोच्च शक्ति का स्वरूप है। अतः यह सर्वाधिक महत्वपूर्ण बात है कि लोगों को इन परीक्षणों-सम्बंधी सभी तथ्यों की जानकारी ईमानदारी से और सम्पूर्णतः दी जाये। अन्य किसी भी तरीके से एक ठोस निष्कर्ष पर नहीं पहुँचा जा सकता। मूलभूत और प्रमुख तथ्य साधारण हैं। सारी बात बिना किसी अनावश्यक मरोड़ या भावना के उपस्थित की जा सकती है। ऐसा होने पर किसी असाधारण चातुर्य के बजाय सामान्य बुद्धि से उचित निर्णय पर पहुँचा जायेगा।

दुर्भाग्यवश न्यैष्टिक विस्फोटकों के निरंतर परीक्षण के बारे में अधिकांश चर्चा सर्वाधिक भावनात्मक और अस्पष्ट ढंग से हुई है। परीक्षणों के बारे में एक तर्क तो इतना कपोलकल्पी है कि मात्र इसी कारण से उसका यहाँ उल्लेख करना आवश्यक है। वह तर्क है कि "न्यैष्टिक विस्फोट पृथ्वी की धुरी को परिवर्तित कर दे सकते हैं।"

निस्सन्देह न्यैष्टिक विस्फोट ऐसे परिवर्तन उत्पन्न करते हैं। पर ये परिवर्तन इतने न्यून होते हैं कि इन्हें लक्ष्य करना तो असम्भव है ही, इनका अनुमान

लगाना भी कठिन है। विगत परीक्षणों से सम्बन्धित ऐसे प्रभावों की, जो पृथ्वी की धुरी को विस्थापित कर सकते हैं या उत्तरी ध्रुव की अवस्थिति बदल सकते हैं, खोज करने पर हमें इतना प्रभाव भी परिलक्षित नहीं होगा, जो अवस्थिति में एक परमाणु के आकार का परिवर्तन करने में भी समर्थ हो। ऐसा परिवर्तन उत्पन्न करने के लिए विशेष रूप से परीक्षण किये जा सकते हैं; पर इन मानव-निर्मित प्रभावों की प्राकृतिक शक्तियों से तनिक भी तुलना नहीं की जा सकती। 'गल्फ-स्ट्रीम' (Gulf stream) की गति से उत्तरी ध्रुव पर बहुत थोड़ा प्रभाव पड़ता है, परन्तु यह प्रभाव किसी भी न्यैष्टिक विस्फोट से उत्पन्न प्रभाव की तुलना में अकथनीय रूप से बड़ा है। यह जानकारी हमारे लिए सुखद है कि जिस गोले पर हम रहते हैं, वह कुछ स्थायित्व जरूर रखता है।

विश्वव्यापी विनाशकारी तत्व-वर्षा-सम्बन्धी तर्क अधिक गम्भीर हैं। ऐसा कहा जाता है कि विनाशकारी तत्व-वर्षा खतरनाक है और हम इस खतरे की सीमा के बारे में अनभिज्ञ हैं।

संकीर्ण शाब्दिक अर्थ में ये दोनों ही बातें सही हैं। परन्तु पिछले अध्यायों में हम देख चुके हैं कि यह खतरा सीमित है। वस्तुतः यह कितना बड़ा है, यह तो हम ठीक-ठीक नहीं जानते, परन्तु इतना अवश्य जानते हैं कि दूसरे विकिरणों के खतरे से, जिसके सम्पर्क में हम निरन्तर बिना किसी चिन्ता के रहते हैं, यह खतरा बहुत कम है। चिकित्सा में काम आनेवाली क्ष-किरणों के प्रभावों की तुलना में भी परीक्षणों का खतरा कम है। समुद्री सतह से कोलोरैडो-जैसी ऊँची जगह पर पहुँचने में मनुष्य पर ब्रह्माण्डीय किरण के प्रभाव में जितनी वृद्धि होती है, उसका एक अंश ही विनाशकारी तत्व-वर्षा में पैदा होता है। लोग विनाशकारी तत्व-वर्षा से क्षतिग्रस्त हो भी सकते हैं और नहीं भी। किन्तु इतना पूर्णतः तय है कि यह क्षति उस परिमाण के मुकाबिले में बहुत कम होती है, जिसको हम साधारणतया परिलक्षित करते हैं।

परीक्षण-स्थलों के आसपास विनाशकारी तत्व-वर्षा ने अवश्य ही क्षति पहुँचायी। अतीत में यह क्षति अधिक नहीं थी, यद्यपि एक प्रशान्त-क्षेत्रीय परीक्षण में यह काफी गम्भीर थी। अब सतर्कताओं में वृद्धि की गयी है और हम आशा कर सकते हैं कि भावी दुर्घटनाओं का पूर्णतः लोप हो जायेगा। परमाणविक शक्ति-आयोग का सुरक्षा-आलेख समान ढंग के दूसरे कार्यों की तुलना में अधिक शानदार है।

यह सम्भव दीखता है कि भावी परीक्षणों के विरोध का मूल विनाशकारी तत्व-वर्षा से सम्बन्धित न होकर अधिक गहराई में हो। दरअसल, इस विरोध का कारण निःशस्त्रीकरण और शान्ति-सम्बन्धी हमारी अभिलाषा से सम्बन्धित है।

इस बारे में कोई सन्देह नहीं हो सकता कि शान्ति की अभिलाषा अधिक गहरी है और संसार के सभी विचारवान और ईमानदार लोग इस अभिलाषा को अनुभव करते हैं। हम सब लोग, निश्चय ही, यह आशा करते हैं कि युद्ध की विभीषिका को टाला जा सकता है। निःशस्त्रीकरण की अभिलाषा की प्रेरक शक्ति यही शान्ति के लिए महती और विश्वव्यापी कामना है। यदि सभी राष्ट्र न्यैष्टिक शस्त्रास्त्रों का परीक्षण बन्द कर दें, तो यह निःशस्त्रीकरण की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम होगा, ऐसा अधिकांश लोग सोचते हैं। इस विश्वास का प्रसार बहुत विस्तृत क्षेत्र में है, पर इसका आधार अनिवार्यतः सुदृढ़ ही हो, ऐसा नहीं है। वास्तव में, दूसरे पक्ष के भी कुछ तर्क हैं, जिन पर सावधानीपूर्वक विचार किया जाना चाहिए।

आम तौर पर ऐसा विश्वास किया जाता है कि प्रथम विश्व-युद्ध का कारण शस्त्रास्त्रों की होड़ था। पर कतिपय अद्भुत कारणों से अधिकांश लोग यह भूल जाते हैं कि द्वितीय विश्व-युद्ध का कारण एक ऐसी परिस्थिति थी, जिसे निःशस्त्रीकरण की होड़ कहा जा सकता है। शान्तिप्रिय और शक्तिशाली राष्ट्रों ने अपनी सैनिक शक्ति में कमी की। अतः जब जर्मनी के नाजी-शासन ने युद्ध की तीव्र तैयारियाँ करनी शुरू कीं, तब शेष संसार उसके लिए अप्रस्तुत था। आरम्भ में तो उन्होंने इस आतंक की सचाई को ही स्वीकार नहीं करना चाहा, पर जब खतरा अनुपेक्षणीय हो गया, तब एक अत्यंत निर्मम युद्ध को रोकने और हिटलर की विश्व-विजय की कामना पर काबू पाने के लिए अवकाश न था। दुर्भाग्यवश, निःशस्त्रीकरण तभी सुरक्षित हो सकता है, जब कोई भी अपने इरादे शस्त्रास्त्रों के बल पर अपने पड़ोसियों पर लादने की न सोचे।

अभी जिस अशांत विश्व में हम निवास करते हैं, उसमें कोई भी समझदार व्यक्ति एकतरफा निःशस्त्रीकरण की हिमायत नहीं करेगा। लोग आशा यह करते हैं कि सभी पक्ष अपनी सैनिक शक्ति घटाने को राजी होंगे और इस प्रकार एक अधिक शान्तिपूर्ण वातावरण तैयार करने में योगदान देंगे। परीक्षणों की समाप्ति दो कारणों से सम्भव और उचित प्रतीत हुई है। एक तो यह कि परीक्षण स्पष्ट दिखाई पड़नेवाली चीज है और इसलिए ऐसा विश्वास किया

जाता है कि वस्तुतः हर किसी ने परीक्षण बन्द किया या नहीं, यह पता लगाने में हम समर्थ होंगे। दूसरा कारण यह है कि न्यैष्टिक विस्फोटक पदार्थ अभी भी इतनी भयानक शक्ति का प्रतिनिधित्व करते हैं कि आगे और परीक्षण करना व्यर्थ और असंगत प्रतीत होता है। ये तर्क सीधे-सादे हैं और लगभग सारा संसार इन्हें स्वीकार करता है। पर ये मिथ्या धारणाओं पर आधारित हैं।

एक न्यैष्टिक विस्फोट बड़ी अशान्तिपूर्ण घटनाएँ तो होती हैं, परन्तु इस विस्तृत भूमंडल में, यदि उन्हें छिपाने के लिए पूरी सतर्कता बरती जाये, तो उन्हें पूर्णतः गुप्त रखा जा सकता है। इस सम्बन्ध में कोई सन्देह नहीं हो सकता कि यह सम्भव है। प्रश्न केवल इतना शेष रहता है कि एक परीक्षण को छिपाना कितना खर्चीला है और एक निर्धारित खर्चे से कितना बड़ा विस्फोट गुप्त रूप से किया जा सकता है।

यदि परीक्षण बन्द करने के लिए कोई समझौता हो, तो अमरीका निश्चय ही उसका पालन करेगा। हमारे देश का सामाजिक और राजनीतिक स्वरूप ही ऐसा है कि किसी अन्तर्राष्ट्रीय जिम्मेदारी को भंग करने के लिए अनेक व्यक्ति संगठित नहीं होंगे। पर रूस ऐसे समझौते का पालन करेगा या नहीं, यह रूसियों की कल्पना-शक्ति आर्थिक बलिदान करने की उनकी सहमति और उनकी ईमानदारी पर ही निर्भर करता है। इन तीन बातों में से पहली बात के बारे में तो हमारी राय निश्चित है। रूसी निश्चय ही इस स्थिति में हैं कि वे परीक्षण के गुप्त तरीके निकाल सकते हैं। दूसरे प्रश्नों के बारे में, कि रूसी इस प्रयत्न में सहायक बनेंगे या नहीं, और अपना वादा वे पूरा करेंगे या नहीं, हम ऐसा अनुभव करते हैं कि हर व्यक्ति की अपनी अलग राय हो सकती है। विगत अनुभवों को देखते हुए, परीक्षण बन्द करने-सम्बन्धी किसी समझौते का पालन वे लौह-आवरण के पीछे गुप्त और सफल परीक्षण करके करेंगे।

मोटे तौर पर हम यह प्रश्न कर सकते हैं कि क्या ऐसे समझौते करना, जिनका ईमानदारी तो आदर करेगी, पर बेईमानी बेजा लाभ उठायेगी, बुद्धिमत्ता की बात होगी? क्या हम एक स्वतंत्र गणतांत्रिक राष्ट्र को अधिनायकवाद की सर्वशक्ति के मुकाबले में एक हानिजनक स्थिति में रखेंगे? क्या हम प्रतिबन्ध को एक ऐसे नये रूप में रखेंगे, जिससे उसका उल्लंघन करनेवाले और भी बड़े पैमाने पर कार्यशील हो जायें। इतना तो प्रायः निश्चित है कि

प्रतिबन्ध और उसके उल्लंघन की प्रतियोगिता में विजय उल्लंघन करनेवाले की ही होगी।

परन्तु यदि यह सच है कि आगे और परीक्षण करने से कोई अपेक्षित फल प्राप्त नहीं होनेवाला है, तो सब तर्क महत्वहीन हो जाते हैं। ऐसा कहा गया है और कई बार दुहराया भी गया है कि अब हमारे पास इतने न्यैष्टिक विस्फोटक हैं, जिनसे हम किसी भी शत्रु के नगरों को विनष्ट कर सकते हैं। फिर और किस चीज की हमें जरूरत है?

आगे परीक्षण करने में हमारा उद्देश्य, निश्चय ही, नगर-विध्वंसकों को और भी भयानक बनाना नहीं है। हम तो यही पसन्द करेंगे कि हमें अपने न्यैष्टिक अस्त्रों का बिल्कुल ही प्रयोग नहीं करना पड़े। हम उन्हें इसलिए अपने पास रखते हैं कि यदि वैसे ही विनाशकारी अस्त्रों का हम पर प्रहार होने की स्थिति आये, तो शत्रु वैसा करने की हिम्मत नहीं कर सके। यह जानने के लिए कि हम लोग वस्तुतः परीक्षणों के द्वारा क्या करना चाहते हैं, कतिपय सैनिक समस्याओं पर निकट से दृष्टि डालनी पड़ेगी।

द्वितीय विश्व-युद्ध में व्यूहीय बमबाजी (Strategic bombing) का पहली बार वस्तुतः एक बड़े पैमाने पर प्रयोग हुआ। अब सम्भव है कि ऐसी व्यूहीय बमबाजी भविष्य में न दुहरायी जाये।

नगरों पर बम-वर्षा के दो सैनिक कारण हैं। पहला तो यह कि कारखाने नगरों में ही होते हैं और उनसे युद्ध की तैयारियों में सहायता पहुँचती है। दूसरा कारण यह है कि नगर ही यातायात के केन्द्र होते हैं, जिनसे होकर युद्ध-सामग्रियाँ गुजरती हैं। इन केंद्रों को विनष्ट करके युद्ध-आपूर्ति के अभियान में बाधा पहुँचायी जा सकती है।

न्यैष्टिक युद्ध सम्भवतः विगत युद्धों की तुलना में सम्पूर्णतः भिन्न होगा। एक न्यैष्टिक अस्त्र में आग्नेय शक्ति इतनी केन्द्रित होती है कि अत्यल्प काल में ही शत्रु पर कहीं भी आक्रमण करना सम्भव है। यह बात हर क्षेत्र में लागू होती है, चाहे लक्ष्य कुछ भी हो—विमानों, जहाजों, टैंकों या शत्रु के सैनिकों के अड्डों, जहाँ कहीं भी आक्रमण करना हो, यह बात चरितार्थ होती है। न्यैष्टिक आग्नेय शक्ति की विराट् गति इस तथ्य को बहुत अधिक सम्भव बना देती है कि न्यैष्टिक युद्ध बहुत अल्पकालिक होगा। युद्ध-काल में कारखाने जो-कुछ बनायेंगे, उनसे युद्ध के परिणाम पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा। केवल

उन्हीं अस्त्रों पर युद्ध-काल में भरोसा किया जा सकता है, जो पहले से जमा हों। इसलिए, सैनिक दृष्टि से, कारखानों पर बम गिराना व्यर्थ होगा।

गति-सम्बन्धी इस तथ्य का ही यह भी निष्कर्ष निकलता है कि युद्ध-सामग्रियों के भारी परिवहन की आवश्यकता नहीं होगी। व्यवहारतः सभी परिवहन हल्की और तेज प्रणालियों–विमानों, पनडुब्बियों और छोटे संघर्ष-दलों—से पूरे किये जा सकेंगे। ऐसी परिस्थिति में नगर परिवहन-केन्द्र के रूप में अपना महत्व खो देंगे।

नगरों पर बम-वर्षा करने का एकमात्र उद्देश्य होगा, शत्रुओं में आतंक फैलाना। विगत युद्धों में शायद ही कभी ऐसा किया जाता था। वास्तव में, आतंक स्वतः पराजयकारी है, क्योंकि यह दूसरे पक्ष को प्रत्याक्रमण के लिए उभाड़ता है।

हमारा विश्वास है कि एक भावी युद्ध में न्यैष्टिक अस्त्रों का काम लाखों नागरिकों की हत्या करना कदापि नहीं होगा। इसके विपरीत एक आक्रमणकारी की सशस्त्र सेनाओं को रोकना ही इनका मुख्य काम होगा। पर यह आसान नहीं है, क्योंकि इसके लिए साधारण न्यैष्टिक अस्त्रों की नहीं, बल्कि विशेष कोटि के न्यैष्टिक अस्त्रों की आवश्यकता है। ऐसे अस्त्रों का विकास करना कठिन है और समुचित स्वरूप प्रदान करना तो और भी कठिन। परन्तु उचित परीक्षण और आयोजन से न्यैष्टिक अस्त्रों का प्रतिरक्षात्मक उपयोग सम्भव है।

युक्तिपूर्ण न्यैष्टिक अस्त्रों का विचार नया नहीं है। छोटे युद्धों में न्यैष्टिक विस्फोटकों के प्रयोग की सम्भावना पर प्रायः ही विचार-विमर्श हुआ है। छोटे युद्धों का सामना करने और उन लोगों की स्वतंत्रता की रक्षा करने के लिए, जहाँ प्रतिरक्षा की आवश्यकता आ पड़े, हमें किस तरह के अस्त्र चाहिए? यह प्रायः ही सुझाया गया है कि छोटे युद्धों में छोटे अस्त्रों का प्रयोग होगा, जब कि बड़े अस्त्र बड़े युद्धों के उपयुक्त होंगे। ऐसी उक्ति बहुत ही सरल है और यथार्थ से कोई सम्बन्ध नहीं रखती। हर स्थिति में उचित अस्त्र वही होता है, जो निर्दोष लोगों को अनावश्यक क्षति पहुँचाये बिना शत्रु की सशस्त्र सेनाओं को रोकने का कार्य सम्पन्न करे। इसके लिए हमें काफी संख्या में ऐसे अस्त्र चाहिए, जो विशिष्ट उद्देश्यों के अनुरूप हों, जिनका परिवहन और परिमुक्ति आसान हो और जो ऐसा प्रभाव पैदा कर सकें, जिसकी परिस्थिति के अनुसार आवश्यकता प्रतीत हो।

उदाहरणार्थ, एक न्यैष्टिक अस्त्र एक लड़ाकू विमान-द्वारा ले जाया जा सकता है और किसी आक्रमणकारी बम-वर्षक को मार गिराने में उसका

उपयोग हो सकता है। चूँकि एक लड़ाकू विमान की सामान ढोने की क्षमता बहुत सीमित होती है, इसलिए इस कार्य के हेतु अस्त्र का छोटा और हल्का होना आवश्यक है। परीक्षण-कार्यक्रम का एक बड़ा उद्देश्य ऐसे–मुख्यतः प्रतिरक्षात्मक–अस्त्रों का विकास करना है।

लड़ाकू विमान और बम-वर्षक का मुकाबला स्वयं हमारे देश में ही किसी घनी आबादीवाले क्षेत्र में हो सकता है। यह सम्भावना अधिकांश व्यक्तियों को इसलिए भयभीत कर देगी कि शायद विस्फोट के नीचे की आबादी को इससे खतरा पहुँचने की सम्भावना है। सौभाग्यवश, नेवदा में हाल में हुए एक न्यैष्टिक परीक्षण में हवाई सेना के पाँच अच्छे जानकार और साहसी अफसरों ने यह प्रदर्शित किया कि जमीन पर के लोग ऐसे मुकाबलों से पूर्णतः सुरक्षित रहते हैं। उन्होंने विस्फोट के ठीक नीचे की भूमि पर खड़े रह कर यह बात प्रमाणित की।

यह महत्वपूर्ण परीक्षण अभी कुछ ही समय पहले–१९ जुलाई, १९५७ को–हुआ था। समुद्री सतह से १९ हजार फुट की ऊँचाई पर उड़ते हुए एक एफ–८९ जेट लड़ाकू विमान ने वातावरण में निर्धारित एक स्थान पर एक परमाणविक प्रक्षेपास्त्र परिमुक्त किया। उस स्थान से ठीक नीचे की भूमि की, जहाँ वे हवाई सेना के अफसर थे, दूरी १५ हजार फुट थी। उन्होंने न तो सिर पर कोई सुरक्षात्मक टोपी पहनी थी, न धूप के चश्मे लगाये थे और न सुरक्षाजन्य वस्त्र ही पहने थे।

विस्फोट होने के साथ उन व्यक्तियों ने ऊपर की ओर दृष्टि उठायी। उन्होंने अग्निगोले को देखा और उसकी गर्मी को अनुभव किया। पर इससे उन्हें कोई असुविधा नहीं हुई–गर्मी बहुत मामूली थी। उसके बाद आघात-तरंग के आगमन के लिए वे रुके रहे–लगभग दस सेकंड तक। जब आघात आया, तो वह वस्तुतः केवल एक तीव्र ध्वनि के रूप में था। उन व्यक्तियों में से सिर्फ एक ने अनायास ही अपना सिर झुका लिया।

लपट और ऊष्मीय धारा समाप्त हो गयी। फिर भी हवाई सेना के वे जवान अपनी जगह पर स्थिर रहे, क्योंकि एक प्रश्न अब भी शेष था–क्या विनाशकारी तत्वों की वर्षा भी होगी? उन्होंने अपने विकिरण-यंत्रों की जाँच की और तब तक प्रतीक्षा की, जब तक मेघ धीरे-धीरे ऊपर से गुजर न गया। पर विकिरण की मात्रा में कोई महत्वपूर्ण वृद्धि नहीं हुई। परीक्षण पूर्णतः सफल हुआ था। विस्फोट के प्रभाव पृथ्वी पर पूर्णतः महत्वहीन साबित हुए। परन्तु यदि

वायुमंडल में कोई शत्रु-विमान उस समय गुजरता, तो वह न्यैष्टिक विस्फोट-केन्द्र से काफी दूर हट कर रहने पर भी पूर्णतः विनष्ट हो जाता।

सशस्त्र आक्रमणकारियों के मुकाबले में न्यैष्टिक अस्त्र प्रभावकारी सिद्ध हों, इसके लिए स्पष्टतः ही इन अस्त्रों की बड़ी संख्या में आवश्यकता है। इन अस्त्रों की, जिनमें से कुछ अवश्य ही पार्थिव विस्फोटवाले होंगे, बड़ी संख्या एक बड़े परिमाण में रेडियो-सक्रिय विषाक्तता पैदा करेगी, जो मित्र और शत्रु, दोनों के लिए समान रूप से खतरनाक होगी। विशेष कर इस रेडियो-सक्रियता से उसी देश के निवासियों की हत्या होने की सम्भावना है, जिसकी रक्षा के लिए हम प्रयत्नशील होंगे। इस कारण यह बात सर्वाधिक महत्वपूर्ण है कि हम ऐसे न्यैष्टिक अस्त्रों का प्रयोग करने में समर्थ हों, जो यथासम्भव निम्नतम परिमाण में विषाक्तता पैदा करें। हाल के न्यैष्टिक परीक्षणों में ऐसे परिष्कृत बमों के विकास पर अधिकाधिक ध्यान दिया गया है और सौभाग्यवश ये प्रयत्न सफलता के पथ पर अग्रसर हैं।

न्यैष्टिक परीक्षण के कारण उद्भूत विनाशकारी तत्व-वर्षा एक सम्भावित खतरे को जन्म देती है, जो अपने आकार में पूर्णतः सीमित है। पर एक न्यैष्टिक युद्ध से उत्पन्न विनाशकारी तत्व-वर्षा जो खतरा पैदा करेगी, वह यथार्थ और काफी बड़ा होगा। यदि हम अभी परीक्षण बन्द कर दें और परिष्कृत अस्त्रों का अधिकतम सम्भव स्तर तक विकास करने में असफल हो जायें, तो हम व्यर्थ ही काफी संख्या में ऐसे लोगों की हत्या के लिए जिम्मेदार होंगे, जिनका युद्ध से कोई सम्बन्ध नहीं होगा। वास्तव में, निम्नतम रेडियो-सक्रिय विनाशकारी तत्व-वर्षावाले विस्फोटकों का विकास नहीं करना पूर्णतः अक्षम्य अपराध होगा।

तब, एकमात्र विकल्प यह शेष रहता है कि न्यैष्टिक अस्त्रों का एकदम उपयोग ही न किया जाये। चूँकि इन अस्त्रों को पूर्णतः विनाशकारी अस्त्रों के रूप में उपस्थित किया गया है, इसलिए अधिकांश लोग यह आशा करते हैं कि उनका कभी प्रयोग नहीं किया जायेगा और वास्तव में यही आशा की जानी चाहिए कि युद्धों—और इसलिए इन अस्त्रों—का बहिष्कार किया जा सकता है।

परन्तु शक्तिशाली कम्यूनिस्ट देशों से, जो विश्व पर प्रभुत्व स्थापित करने के लिए प्रयत्नशील हैं, हमारा जो गतिरोध है, उसे देखते हुए पूर्ण शांति की आशा करना व्यर्थ होगा। यदि हम अपने हल्के और गतिशील अस्त्रों को त्याग देंगे, तो लाल गुट (कम्यूनिस्ट-गुट) सुविधानुसार अपनी सीमा से सटे देशों को एक-के-बाद-एक हथियाता चला जायेगा। स्वतंत्र राष्ट्र सम्पूर्ण

विश्व में ऐसी विशाल सेनाओं का संगठन नहीं कर सकते, जो धीमे-धीमे होनेवाले हमलों का सामना करें। दूसरी ओर, परिष्कृत न्यैष्टिक विस्फोटकों की सुनियन्त्रित शक्ति हमें ऐसी स्थिति में ला देगी, जिसमें हम विश्व के किसी भी भाग में होनेवाले आक्रमण का वस्तुतः एक क्षण-भर की सूचना पर प्रतिरक्षात्मक ढंग से सामना कर सकेंगे।

हमारे देश की घोषित नीति विश्व में शान्ति और स्थायित्व कायम रखने की है। धैर्य और सतर्कता का आश्रय लेकर हम एक ऐसी विश्व-व्यवस्था में पहुँचने का प्रयत्न कर रहे हैं, जिसका आधार सभी लोगों के लिए कानून और न्याय हो। इसमें कोई सन्देह नहीं कि इस नीति को अधिकांश अमरीकियों का समर्थन प्राप्त है। पर इस नीति को शक्ति प्रदान करने के लिए हमारी सशस्त्र सेनाओं को अधिकतम सम्भव छूट की जरूरत है। ऐसी छूट हमें तभी प्राप्त हो सकती है, जब हमारे पास सर्वाधिक शक्तिशाली, विकसित और परिष्कृत अस्त्र हों, ताकि मनमाने विनाश के बजाय प्रतिरक्षा के लिए उनका उपयोग किया जा सके।

यदि हम न्यैष्टिक अस्त्रों को त्याग देंगे, तो आक्रमण का द्वार खुल जायेगा। यदि हम परिष्कृत विस्फोटकों का विकास करने में असमर्थ होंगे, तो किसी भी गम्भीर सैनिक कार्रवाई के समय लोगों को रेडियो-सक्रिय विनाशकारी तत्व-वर्षा से बर्बाद होने को मजबूर कर देंगे। हमारे विचार में, न्यैष्टिक अस्त्रों के परीक्षण और विकास को जारी रखने के पक्ष में ये अत्यन्त सबल तर्क हैं। परन्तु फिर भी एक अधिक सामान्य दृष्टिकोण पर विचार करने की आवश्यकता शेष रह जाती है।

पिछली शताब्दियों में, विज्ञान, तंत्रविद्या और हमारे नित्य-प्रति के जीवन में जो प्रत्यक्ष विकास-कार्य हुए हैं, उनका आधार एक महत्वपूर्ण मान्यता रही है—हमारा अभिवृद्ध ज्ञान और विकसित साधन जिन परिणामों तक हमें ले जा सकते हैं, वहाँ तक हमें निर्भयतापूर्वक बढ़ना चाहिए। जब हम न्यैष्टिक परीक्षणों के बारे में बातें करते हैं, तब हमारे दिमाग में केवल सैनिक तैयारी नहीं होती, बल्कि उन प्रयोगों की कार्यान्विति भी होती है, जो हमें प्राकृतिक शक्तियों के नियंत्रण के लिए अधिक ज्ञान और योग्यता प्रदान करेंगे। ऐसे कई स्पष्ट राजनीतिक और सैनिक कारण हैं, जो इन परीक्षणों का स्थगन उचित नहीं सिद्ध करते। साथ ही, अज्ञात की खोज की जो आरम्भ से हमारी परम्परा रही है, वह भी हमें इसी ओर प्रेरित करती है। हम इस परम्परा का

पालन कर सकते हैं और साथ ही, इस बारे में अधिक सावधान हो सकते हैं कि असावधानीपूर्वक बिखेरी गयी रेडियो-सक्रियता मानव-जीवन को खतरे में न डाले।

अध्याय १६

क्या मौसम भी प्रभावित हुआ है?

मौसम का अनुमान लगाना अब उतना असम्भव नहीं रह गया है, जितना पहले था। फिर भी, कुछ घंटे पहले तक उसके बारे में सही-सही अनुमान लगाने में हम शायद ही समर्थ होते हैं। मौसम-सम्बंधी किसी भविष्यवाणी के लिए लगभग एक सप्ताह की सीमा निर्धारित है। जहाँ योग्यतम व्यक्ति भी ठीक-ठीक कुछ नहीं कह सकते, वहाँ अबाध कल्पना का बोलबाला हो जाता है। मौसम अब तक विवाद और अनुमान के लिए एक सुरक्षित विषय रहा है।

निस्संदेह, न्यैष्टिक विस्फोट को मौसम के लिए—किसी भी प्रकार के अस्वाभाविक मौसम के लिए—जिम्मेदार ठहराया गया है। चाहे वर्षा हो, या सूखा अथवा तूफानों की अधिकता, न्यैष्टिक परीक्षणों को उसमें जबर्दस्ती घसीट लाया जाता है—मौसम-अनुसंधानालय भले इसे स्वीकार न करे। मौसम-अनुसंधानालय सदा सही थोड़े ही होता है। वस्तुतः यह आश्चर्य की ही बात होती, यदि जन-चर्चा और अखबार मौसम के असाधारण आचरण का सम्बन्ध परमाणविक विस्फोटों से नहीं जोड़ते।

एक मामले में—हमारी जानकारी में केवल एक ही मामले में—न्यैष्टिक परीक्षण से घटनाओं की एक ऐसी शृंखला आरम्भ हुई, जिसकी समाप्ति एक भीषण बरसात के साथ हुई। सन् १९५५ के वसन्त में एक मध्यम आकार के न्यैष्टिक अस्त्र का नेवदा में विस्फोट किया गया। उस समय कैलिफोर्निया में तूफानी मौसम का आखिरी काल था। अन्तरिक्ष-विज्ञान के सामान्य नियमों के अनुसार रेडियो-सक्रिय मेघ को समशीतोष्ण कटिबन्ध पर बहनेवाली तेज पछुवा हवा के साथ पूरब की ओर जाना चाहिए था। पर यह मेघ कैलिफोर्निया की शेषप्राय आँधी के साथ मिल गया और थोड़ी रेडियो-सक्रियता पश्चिमी तट की ओर चली गयी।

विस्फोट के कई घंटे बाद कैलिफोर्निया में रेडियो-सक्रिय वर्षा आरम्भ हुई। सक्रियता बहुत ही क्षीण थी और इसके कारण किसी तरह की चिन्ता नहीं पैदा हुई। परन्तु एक उल्लेखनीय घटना घटी। रेडियो-सक्रिय मेघ कैलिफोर्निया के ऊपर पहुँचा, तब वहाँ मौसम फिर उभरा। इसके बाद वहाँ भारी वर्षा हुई, जो उस स्थान पर उस समय स्वाभाविक नहीं थी। क्या हमने – पूर्णतः अनजाने ही – मौसम को प्रभावित किया था ?

मौसम-अनुसंधानालय ने कहा – नहीं। यह बात अवश्य ही स्वीकार की जानी चाहिए कि केवल एक घटना से कुछ सिद्ध नहीं होता। मौसम के पर्यवेक्षण और भविष्यवाणी-सम्बन्धी अत्यंत सुधरी हुई प्रणालियाँ ही केवल इस बात का निर्णय करना सम्भव बनायेंगी कि घटनाओं की ऐसी शृंखला में कारण और परिणाम के गहरे सम्बन्ध हैं या यह केवल आकस्मिक घटनाओं का एक साधारण-सा मामला है।

यद्यपि हमारा ज्ञान अधूरा है, तथापि कम-से-कम एक सामान्य तत्व को तो हमें ध्यान में रखना ही चाहिए। नेवदा के विस्फोट की सम्पूर्ण शक्ति भी इतनी काफी नहीं थी कि एक मील चौड़े, एक मील लम्बे और एक मील गहरे किसी मेघ का निर्माण करने-योग्य जल-बिंदुओं का वाष्पीकरण कर सके। फिर भी, यह कोई बहुत बड़ा बरसाती मेघ नहीं होता। इतना बड़ा मेघ एक वर्गमील क्षेत्र में लगभग एक-तिहाई इंच – जोकि कोई उल्लेखनीय परिमाण नहीं है – ही पानी बरसा सकता है। बड़ा-से-बड़ा उद्जन-बम भी इतनी ही शक्ति मुक्त करता है, जिससे १० मील लम्बे और १० मील चौड़े मेघ के निर्माण के योग्य भाप बने। फिर, यह मेघ भी हमारी हवा के 'उबाल' वाले भाग के, जिसे हम मौसमी क्षेत्र कहते हैं, शीर्ष पर पहुँच जाता है। इस मेघ से एक सौ वर्गमील क्षेत्र में लगभग तीन इंच वर्षा होगी – यह इससे अधिक उल्लेखनीय परिमाण तो है, पर प्रशांत-महासागर की विशालता में बड़ी आसानी से विलीन हो सकता है।

न्यैष्टिक विस्फोट काफी उग्र हैं, पर प्राकृतिक शक्तियों की तुलना में – साधारण मौसम से नित्य परिमुक्त होनेवाली शक्ति की तुलना में भी – हमारे सभी बम तुच्छ हैं। अनायास ही यह भी अनुमान किया जा सकता है कि हमारे न्यैष्टिक विस्फोट उन विशाल शक्ति-परिवर्तनों की तुलना में, जो हवा और वर्षा की सामान्य स्थिति से हमारे समक्ष उपस्थित होते हैं, नहीं ठहर सकते।

परन्तु मेघ और धूप, जल का भाप बनना और जम जाना, बूँदों का बनना

और पिघलना—संक्षेप में मौसम की सभी प्रक्रियाओं की परस्पर-क्रिया जटिल भी है और वैचित्र्यपूर्ण भी। छोटे कारण बड़े परिणाम उपस्थित कर सकते हैं। महासागरों और महादेशों पर बहनेवाली हवाओं की कुछ प्रक्रियाएँ अनवरोधिनी और अनुमान-योग्य हैं। दूसरी प्रक्रियाएँ, अत्यधिक गर्म भूमि से उठनेवाली प्रथम गर्म हवा की तरह ही, गम्भीर प्रतियोगिता और प्रेरक-क्रिया के प्रश्न हो सकती हैं। इसी कारण मौसम के सम्बन्ध में भविष्यवाणी करना कठिन है।

एक सर्वाधिक नाजुक प्रक्रिया, जिसके बारे में हमें अवश्य ही विचार करना चाहिए, पानी की बूँदों का निर्माण है। जब पानी के कुछ अणु हवा के अणुओं के साथ मिल जाते हैं, तब हवा में नमी आ जाती है। जब ऐसी हवा ऊपर उठती है, फैलती है और ठंडी होती है, तब पानी के अणु अपनी कुछ उत्तेजित गति खो देते हैं और बूँदों के निर्माण के लिए एकताबद्ध होने की अधिक प्रवृत्ति दिखाते हैं। पर इस संयुक्त प्रयास के लिए उन्हें प्रवृत्त करना आसान नहीं होता।

यदि दो या तीन अणु संयुक्त होते हैं, तो वे तुरत ही छिन्न-भिन्न हो जाते हैं। परन्तु यदि दो या तीन दर्जन अणु एकत्र हो जायें, तो उनका विकास-कार्य आरम्भ होता है, जिसकी परिणति पानी की एक बूँद में होती है। यदि नम हवा ठंडी हो जाये, तब भी बूँदों का निर्माण होगा, बशर्ते एक ऐसा सन्धि-स्थल हो, जहाँ विकास-कार्य आरम्भ हो सके। यदि ऐसा सन्धि-स्थल न हो, तो न तो बूँदों का निर्माण होगा और न मेघ का। यदि थोड़े सन्धि-स्थल होंगे, तो प्रत्येक में किंचित् बड़े परिमाण में पानी जमा होगा, बड़ी बूँदें बनेंगी और वर्षा भी सम्भव हो सकती है। यदि ऐसे सन्धि-स्थलों का आधिक्य होगा, तो कई छोटी बूँदें बनेंगी, जो एक मेघ के रूप में स्थगित रहेंगी। वर्षा-निर्माण के वर्तमान प्रयास बूँदों के जन्म-नियंत्रण से ही सम्बन्धित हैं।

हमने पहले देखा है कि प्रत्येक रेडियो-सक्रिय क्षय में विद्युत्धारी कण परिमुक्त होते हैं। ज्यों-ज्यों ये अपने मार्गों पर बढ़ते हैं, अधिकाधिक परमाणुओं को विदीर्ण करते हैं और उनके स्थान पर विद्युत्धारी कण छोड़ते हैं। ये विद्युत्धारी कण बड़ी दृढ़ता से पानी के अणुओं को आकर्षित करते हैं। हवा के अणुओं को ये कम आकर्षित करते हैं। इसका कारण यह है कि पानी के अणु में धनात्मक और ऋणात्मक विद्युत्-परिमाण एक विचारणीय सीमा तक पृथक् रहते हैं, जब कि हवा के आक्सीजन और नाइट्रोजन-अणुओं में विद्युत्-परिमाण अधिक समतापूर्वक वितरित रहते हैं। परिणामतः एक रेडियो-सक्रिय क्षय प्रक्रिया में

परित्यक्त प्रत्येक कण का मार्ग पानी की बूँदों के निर्माण के लिए कई सन्धि-स्थल तैयार करता है।

वास्तव में, तीव्र विद्युत्धारी कणों के मार्गों को दृश्य करने के लिए कई दशाब्दियों से ठंडी नम हवा का प्रयोग किया जा रहा है। एक न्यैष्टिक विस्फोट के अवशेषों में होनेवाले रेडियो-सक्रिय विघटन की भारी संख्या ऐसे वाष्पीय मार्ग तैयार करती है, जो एक वास्तविक मेघ में जाकर मिल जाते हैं। इस प्रकार मौसम प्रभावित हो सकता है।

इन सबके बावजूद इस बात की बहुत सम्भावना रह जाती है कि न्यैष्टिक विस्फोटों का परीक्षण, अपने वर्तमान स्वरूप में, मौसम को प्रभावित नहीं करता। रेडियो-सक्रियता बूँदों के निर्माण का अवसर देती है, पर बूँद-निर्माण के लिए अन्य अनेक स्रोत उपलब्ध हैं। धूल, धुआँ और हवा को दूषित करनेवाली अनेक चीजें यह कार्य करती हैं। सागरीय तरंगों से बिखरनेवाले आग का वाष्प बनता है और वह अपने पीछे नमक का अंश छोड़ देता है। यह नमक का कण हवाओं-द्वारा उड़ा कर कई मील तक ले जाया जा सकता है और अन्ततः एक ऐसे अणु का रूप ले सकता है, जिसके इर्द-गिर्द एक नयी बूँद जमे। ब्रह्माण्डीय किरणें, जिनकी हम पर वर्षा होती रहती है, रेडियो-सक्रिय क्षय-उत्पादनों-द्वारा उत्पन्न वाष्पीय मार्गों की तरह ही, वाष्पीय मार्ग तैयार करती है। प्रकृति की अनेक प्रक्रियाओं और सभ्यता के सामान्य उप-उत्पादनों में परमाणविक परीक्षण कोई महत्वपूर्ण भूमिका नहीं अदा करते। यह कथन सही हो सकता है; पर एक अच्छे अनुमान के रूप में, निश्चयात्मकता के रूप में नहीं।

भविष्य के गर्भ में छिपे अनेक आश्चर्यों में से एक का मौसम से बहुत निकट का सम्बन्ध होगा। वायुयान के इस युग में हम हवा की अपने आसपास की राशियों के बारे में अधिकाधिक सूचना प्राप्त कर रहे हैं। हवाई यात्रा इस सूचना की अपेक्षा करती है—साथ ही इसे उपस्थित भी करती है। नये तंत्र—जैसे 'रडार' (Radar)—एक मेघ के निर्माण का पता लगा सकते हैं और काफी दूरी से बूँदों के आकार को माप सकते हैं। वास्तव में, प्राप्त सूचना इतनी विशद है कि उसे अच्छी तरह समझ कर हम उसका उपयोग भी कर सकते हैं अथवा नहीं, इसमें भी सन्देह किया जा सकता है।

सौभाग्यवश, हमें अब एकमात्र अपनी बुद्धि पर ही भरोसा करने की आवश्यकता नहीं है। मानव-चिन्तन एक उल्लेखनीय चीज है सही, पर यह बड़ा धीमा है। आधुनिक हिसाब लगानेवाले यंत्र 'विद्युतीय मस्तिष्क' (Electronic

Brains) मानव-मस्तिष्क की तुलना में कहीं सरल हैं। इन विद्युतीय हिसाब लगानेवाले यंत्रों की एक खूबी यह है कि ये तेज हैं। शीघ्र ही ये हमारी मानसिक प्रक्रियाओं के मुकाबले में दस लाख-गुनी तक तेजी प्राप्त कर सकेंगे। 'विचार-सदृश तेजी' की कहावत अब पुरानी हो चुकी है-यह घोड़े और बग्घी की समकालीन बन गयी है।

विद्युतीय यंत्र मौसम-सम्बन्धी सूचना को प्राप्त होते ही ग्रहण कर सकते हैं। इस दिशा में कुछ प्रगति तो हो भी चुकी है। कुछ वर्षों के अन्दर ही मौसम-सम्बन्धी सभी भविष्यवाणियाँ यंत्रों के द्वारा की जा सकेंगी।

पर इसका यह अर्थ नहीं है कि मौसम-सम्बन्धी भविष्यवाणी बिल्कुल ठीक-ठीक और काफी पहले हो सकेगी। प्रेरक-प्रक्रियाएँ, जो साधारण क्षुब्धता के एक महत्वहीन और अज्ञात स्थल से आरम्भ होकर एक बवंडर का आकार ग्रहण कर सकती हैं, भविष्यवाणी की कला की एक सीमा निर्धारित कर देंगी।

किन्तु जिस सीमा तक मौसम के बारे में भविष्यवाणी नहीं की जा सकती, उसी सीमा तक उसे प्रभावित किया जा सकता है। यदि छोटे कारणों के बड़े प्रभाव हो सकते हैं, तो मनुष्य को उपलब्ध क्षुद्र साधन भी मौसम को बदल सकते हैं, बशर्ते हम यह जानें कि उनका कैसे और कहाँ उपयोग होना चाहिए।

पहले हमें अन्तरिक्ष-विज्ञान के मौसम-विज्ञान का अच्छा ज्ञान प्राप्त करना पड़ेगा। तदुपरान्त हमें प्रेरक-यांत्रिकता की पूरी जानकारी प्राप्त करनी होगी। यह एक सही प्रकार का धूल का मेघ हो सकता है—या एक रसायन—या रेडियो-सक्रिय कणों की एक बड़ी संख्या। परमाणविक विस्फोटों को एक या दूसरे ढंग से प्रेरक-तत्व के रूप में प्रयुक्त किया जा सकता है, परन्तु प्रेरक-तत्व तब तक प्रभावकारी नहीं होगा, जब तक शेष यांत्रिकता को समझा नहीं जायेगा।

निस्सन्देह, परमाणविक विस्फोटों को वस्तुतः महत्वपूर्ण संख्याओं में तब तक प्रयुक्त नहीं किया जा सकता, जब तक हम यह नहीं जानें कि उन रेडियो-सक्रिय उप-उत्पादनों से, जो वस्तुतः खतरनाक हैं, किस तरह बचा जाये। सौभाग्यवश न्यैष्टिक सन्धि, जो उद्‌जन-बम से सर्वाधिक अच्छे ढंग से जानी गयी है, प्राप्त होनेवाली रेडियो-सक्रियता की किस्म को नियंत्रित करना सम्भव कर देती है। हम केवल उन्हीं प्रकार की सक्रियताओं का निर्माण कर सकते हैं, जो मानव-शरीर में प्रवेश का अवसर पाने के पहले ही क्षयमान हो जायें।

अनुभव ने यह साबित कर दिया है कि मौसम के बारे में चर्चा करना खतरनाक नहीं है। न ही मौसम के सम्बन्ध में कुछ करना जोखिम की बात है।

क्या मौसम सरकार का एक हिस्सा बन जायेगा ? क्या हम 'रिपब्लिकन'* वर्षा और 'डेमोक्रेटिक'* सूखा प्राप्त करेंगे ? इस प्रकार तो हम निश्चय ही विचारविमर्श का अन्तिम सुरक्षित विषय भी खो देंगे।

तब तो यूरोप के संकीर्ण क्षेत्र में, जहाँ एक सर्वप्रभुता-सम्पन्न राष्ट्र दूसरे सर्वप्रभुता-सम्पन्न राष्ट्र से कुछ ही घंटों (हवा के बहाव के अनुसार) की दूरी पर है, परिस्थिति कहीं अधिक गम्भीर होगी। किन्तु यह सम्पूर्ण पृथ्वी भी उस समय भयानक विरोधी हितों के लिए छोटी साबित होगी, जब अधिक जानकार लोग अधिक सूक्ष्म प्रेरक-यंत्रों का संचालन करेंगे।

मौसम पर नियंत्रण सर्वाधिक उपयोगी हो सकता है। यह इस पृथ्वी पर निवास करनेवाले मनुष्यों और अरबों दूसरे प्राणियों को प्रचुर मात्रा में भोजन प्रदान कर सकता है। ऐसा प्रयत्न निश्चय ही अच्छा है और शांतिपूर्ण भी दिखायी पड़ता है। पर दूसरे मामलों की तरह ही इसमें भी ज्ञान शक्ति प्रदान करेगा और शक्ति विनाश को जन्म देगी, यदि इसके साथ बुद्धि का साथ नहीं रहा।

फिर भी यह ज्ञान और इसी तरह के कुछ दूसरे खतरनाक ज्ञान हमें अपने जीवन-काल में ही प्राप्त होंगे। केवल न्यैष्टिक विस्फोट ही विध्वंस के एकमात्र सक्षम स्रोत नहीं रह जायेंगे।

अध्याय १७

न्यैष्टिक प्रतिकारी कितने निरापद हैं ?

वैज्ञानिक और औद्योगिक क्रान्ति आरम्भ होने के समय दो पुरानी महत्वाकांक्षाएं सर्वथा असम्भव प्रतीत हुई थीं। इनमें से एक थी, तत्वों का रूपान्तर और दूसरी, शाश्वत शक्ति का यंत्र (Machine of perpetual motion)।

आधुनिक न्यैष्टिक भौतिक विज्ञानवेत्ताओं ने इनमें से एक आकांक्षा को परिपूर्ण कर लिया है। वे अब तत्वों का रूपान्तर कर सकते हैं। परन्तु इसका उत्पादन अत्यंत खर्चीला है—इस समय तो सोने से भी अधिक।

---

* अमरीका के दो प्रमुख राजनीतिक दल

शाश्वत गति का यंत्र अब तक सिद्धान्ततः असम्भव है, परन्तु व्यवहार में यह समस्या हल की हुई मानी जा सकती है। निश्चय ही, यह साबित किया जा सकता है कि कोई यंत्र तभी उपयोगी काम कर सकता है, जब उसमें कुछ ईंधन लगे। परन्तु प्रायः ही ईंधन का खर्च यंत्र के संचालन और देखरेख के खर्च से कम होता है।

आज भी न्यैष्टिक ईंधन अमरीका के अनेक भागों में प्रचलित ईंधन से अधिक खर्चीला नहीं है। न्यैष्टिक ईंधन न तो वजनी है और न बड़े आकार-वाला। इसका परिवहन बड़ी आसानी से किया जा सकता है। विश्व के उन भागों में, जहाँ साधारण ईंधन खर्चीला पड़ता है, न्यैष्टिक शक्ति शीघ्र ही काफी महत्वपूर्ण बन जायेगी। साथ ही, हम यूरेनियम की अधिकांश शक्ति का–केवल उसके दुर्लभ और बहुमूल्य आइसोटोप यू^{२३५} का ही नहीं–उपयोग करना सीख जायेंगे।

रेडियो-सक्रिय यू^{२३९} प्राप्त करने के लिए सामान्य यू^{२३८} में केवल एक न्यूट्रन का संयोग करना पड़ता है। समय पाकर यह प्लुटोनियम में क्षय-मान होता है। इस तत्व को यू^{२३५} के रूप में प्रयुक्त किया जा सकता है। यह विघटन, शक्ति का एक बड़ा परिमाण और प्रक्रिया जारी रखने के लिए पर्याप्त न्यूट्रन पैदा करता है। हम अन्य न्यैष्टिक ईंधनों से भी शक्ति प्राप्त करना सीखेंगे। थोरियम यूरेनियम के जैसा कार्य करता है, जब कि ड्युटिरियम न्यष्टियों को छोटे टुकड़ों में तोड़ने के बजाय बड़ी न्यष्टियों का निर्माण कर शक्ति प्रदान करता है। इसलिए शक्ति का स्रोत अखिल विश्व में उपलब्ध होगा और वह भी काफी कम खर्च में। इसका वास्तविक अर्थ यह हुआ कि हमारी स्थिति वैसी ही है, मानो हमारे पास शाश्वत गति का यंत्र हो।

परन्तु इन सब का अर्थ निस्सन्देह यह नहीं है कि यंत्र मुफ्त में अपना काम करेगा। एक शाश्वत गति-यंत्र को भी मरम्मत और देखरेख की जरूरत होगी। दुर्भाग्यवश, हमारे न्यैष्टिक यंत्रों को काफी देखभाल की जरूरत पड़ती है और इसलिए अभी न्यैष्टिक शक्ति सब से सस्ती नहीं है।

एक न्यैष्टिक शक्ति-स्रोत या एक न्यैष्टिक प्रतिकारी का निर्वाह क्यों कठिन और खर्चीला है, इसका मुख्य कारण यह है कि प्रतिकारी कुछ दिनों तक काम करने के बाद बहुत अधिक रेडियो-सक्रिय हो जाता है। इसलिए इसके पास तक नहीं जाया जा सकता और इसे दूर से नियंत्रित करना पड़ता है। हमारे

लिए ऐसी आशा करना बहुत कठिन है कि शक्ति हवा या पानी की तरह उन्मुक्त होगी। लेकिन जब हम अपने न्यैष्टिक यंत्रों को कम खर्चीले ढंग से कार्यरत करना सीख जायेंगे, तब पृथ्वी के किसी भी भाग में उचित मूल्य पर शक्ति प्राप्त करने में समर्थ हो जायेंगे। जल्दी या देर से परम्परागत ईंधन दुर्लभ हो जायेगा; परन्तु न्यैष्टिक शक्ति औद्योगिक क्रांति को जारी रखने और उसे पृथ्वी के किसी भी कोने में विस्तृत करने में समर्थ होगी।

इस बात में बहुत कम सन्देह है कि आगामी दो दशाब्दियों में न्यैष्टिक प्रतिकारियों की संख्या कई गुनी हो जायेगी और आगामी शताब्दी के आरम्भ तक सर्वत्र वे उपलब्ध होंगे। इसलिए यह बात सर्वाधिक महत्वपूर्ण है कि इन प्रतिकारियों का संचालन बड़ी सुरक्षापूर्वक हो। ऊपर से तो एक न्यैष्टिक प्रतिकारी-यंत्र मंथर-गति वाला एवं स्वयं-संचालित दिखायी पड़ता है; परन्तु संचालन की यह सुगमता भ्रामक है।

किसी को इस बात का भय नहीं होना चाहिए कि एक न्यैष्टिक प्रतिकारी का परमाणविक बम की तरह विस्फोट हो सकता है। न्यैष्टिक विस्फोटकों का इस तरह सावधानीपूर्वक निर्माण किया जाता है कि वे थोड़े समय में ही काफी शक्ति का परित्याग कर सकें। दूसरी ओर, न्यैष्टिक प्रतिकारियों का इस तरह निर्माण किया जाता है कि शक्ति की एक सामान्य दर से ही मुक्ति सम्भव हो सके। कुछ प्रतिकारी, यदि उनका संचालन सही ढंग से नहीं किया जाये, तो विस्फोट उत्पन्न कर सकते हैं, परन्तु इस विस्फोट की भयानकता उतने ही वजन के एक भारी विस्फोटक की भयानकता से अधिक नहीं होगी।

फिर भी, एक प्रतिकारी-दुर्घटना बहुत अधिक खतरनाक भी हो सकती है। प्रतिकारी का विद्युतीकरण रेडियो-सक्रिय विघटनोत्पादनों और न्यूट्रन के ग्रहण किये जाने से उत्पन्न कुछ अन्य रेडियो-सक्रिय तत्वों से होता है। ऐसी कोई भी दुर्घटना, जिसमें इन उत्पादनों का अंश भी हवा के साथ मिल जायेगा, हवा के रुख की तरफ़ काफी दूरी तक लोगों को खतरे में डाल देगी। प्रतिकारी खतरनाक क्यों हो सकते हैं, इसका एक कारण यह है कि प्रतिकारी के विलम्बित संचालन में ऐसे विघटनोत्पादन संग्रहित होते हैं, जिनका जीवन-काल दीर्घ होता है। विशेषतः ये दीर्घजीवी उत्पादन ही अधिक खतरनाक होते हैं, क्योंकि मानव-शरीर में प्रवेश पाने की सम्भावना इनके लिए अधिक रहती है।

अब ऐसे प्रतिकारियों का आयोजन हो रहा है, जो ३ लाख किलोवाट बिजली पैदा करेंगे। यदि ऐसा प्रतिकारी छः महीने तक कार्यरत रहने के बाद विस्फो-

टित होकर वातावरण में रेडियो-सक्रिय तत्व परिमुक्त करे, तो यह रेडियो-सक्रियता एक उद्‌जन-बम की रेडियो-सक्रियता के बराबर होगी। एक महत्व-पूर्ण दृष्टि से तो ऐसी दुर्घटना उद्‌जन-विस्फोट से भी बुरी होगी। न्यैष्टिक विस्फोटक अपने अधिकांश रेडियो-सक्रिय उत्पादनों को काफी ऊँचाई तक पहुँचा देता है और विषाक्त सक्रियता पुनः नीचे उतरने से पहले बिखर कर क्षीण हो जाती है। दूसरी ओर, एक प्रतिकारी की सक्रियता भूमि के निकट रहेगी और विस्फोट-स्थल से सैकड़ों मील दूर तक के लोगों का जीवन खतरे में डाल देगी और इससे भी बड़े क्षेत्र को विषाक्त बना देगी।

अमरीका में अनेक प्रतिकारियों के विस्तृत संचालन में अब तक कोई भी व्यक्ति रेडियो-सक्रियता से नहीं मरा है। ऐसा अत्यन्त सतर्कतापूर्ण संचालन और खुशकिस्मती के कारण ही हुआ है। पर हमें इस बात के लिए तैयार रहना चाहिए कि देर-सबेर दुर्घटनाएँ घटने ही वाली हैं। दूसरी ओर, हमें उपर्युक्त किस्म की अनायास ही घटनेवाली दुर्घटना से बचने के लिए पर्याप्त तैयारी करने का प्रयत्न करना चाहिए। अधिक सावधानी वरतने से ऐसी दुर्घटनाएँ वस्तुतः रोकी जा सकती हैं।

मनुष्य-निर्मित सभी प्रकार के यंत्रों पर विचार करने पर हम पाते हैं कि कुछ तो बहुत तेज गतिवाले हैं और खतरनाक दीखते हैं–उदाहरणस्वरूप वायुयान। दूसरे स्थिर और स्पष्टतः हानिरहित हैं–जैसे नहाने का टब। फिर भी नहाने के टब में हवाई यात्रा की अपेक्षा अधिक दुर्घटनाएँ घटती हैं। सभी संचालनों में सर्वाधिक खतरा मानवीय तत्व से ही है। हम स्वयं ही सर्वाधिक सुरक्षा के भय की सृष्टि करते हैं। न्यैष्टिक यांत्रिकता में यह स्थिति अन्य प्रकार की यांत्रिकताओं से भिन्न नहीं है। न्यैष्टिक यांत्रिकता में नयी बात यह है कि एक प्रतिकारी साधारणतः बड़ा निरापद होता है, परन्तु इसके साथ जब कुछ अप्रत्याशित घट जाता है, तब यह अत्यधिक खतरनाक बन जाता है। साथ ही, हम यहाँ भूल करके सुधारने की पद्धति भी काम में नहीं ला सकते। एक प्रतिकारी के सम्बन्ध में की गयी भूल उद्‌जन-बमों के परीक्षण में होनेवाली किसी भूल की अपेक्षा कहीं अधिक लोगों के प्राण ले लेगी। हम अनुभव से सीखने के लिए प्रतीक्षा नहीं कर सकते–हमें अवश्य ही दुर्घटनाओं से बचने की व्यवस्था करनी पड़ेगी।

सुरक्षा-सम्बन्धी एक विशेष कठिन समस्या छोटे देशों में प्रतिकारियों के उपयोग से सम्बन्धित है। वहाँ एक गम्भीर दुर्घटना पास-पड़ोस के देशों के

निवासियों की भी जान खतरे में डाल देगी। इसलिए आधुनिक तंत्र-शिल्प राष्ट्रीय सीमा से ऊपर उठ कर सहयोग के लिए जोर दे सकता है।

यातायात की दुर्घटनाओं को रोकने का केवल एक उपाय है; वह यह कि सब लोग सावधानी बरतें—खास कर गाड़ियों को चलानेवाले। इसी तरह, प्रतिकारी-सम्बन्धी सुरक्षा प्रतिकारियों के संचालकों पर निर्भर करेगी। साथ ही, प्रत्येक प्रतिकारी के सावधानीपूर्ण निर्माण और जाँच से भी मदद मिल सकती है।

परमाणविक शक्ति-आयोग (Atomic Energy Commission) के सर्वप्रथम कार्यों में एक था, प्रतिकारी-सुरक्षा के लिए समिति की स्थापना। ज्यों-ज्यों वर्ष गुजरे, इस समिति को और भी बड़ी जिम्मेदारियाँ सम्भालनी पड़ीं। पहले इसे गोपन ढंग से काम करना पड़ा था। अब तो, प्रतिकारियों के विस्तृत और सर्वसाधारण के लिए उपयोग में वृद्धि के साथ-साथ सुरक्षा-सम्बन्धी बातें जनता को अधिक मात्रा में ज्ञात होने लगी हैं। एक यंत्र के सुरक्षापूर्ण संचालन का प्रश्न यंत्र की कार्य-प्रणाली की विस्तृत जानकारी से पृथक् नहीं किया जा सकता। हम एक प्रतिकारी या सुरक्षा-सम्बन्धी नियमों का पर्याप्त विवरण देने का प्रयास नहीं कर सकते! कुछ सामान्य वक्तव्य ही पर्याप्त हैं।

एक साधारण कार्यरत प्रतिकारी न्यूट्रनों से भरा होता है। एक सेकंड के कुछ अंश में ही ये न्यूट्रन विघटन पैदा करते हैं और न्यूट्रनों की एक नयी पीढ़ी अस्तित्व में आ जाती है। मंथर प्रतिकारियों में, जिनमें उद्जन और कार्बन की तरह के हल्के तत्व होते हैं, न्यूट्रन ध्वनि की गति से कुछ अधिक गति रखते हैं और एक पीढ़ी अधिक-से-अधिक एक सेकंड के एक हजारवें हिस्से तक जीवित रह सकती है। तेज प्रतिकारियों में, जिनमें रेनियम या लोहे-जैसे विशेष रूप से भारी तत्व रहते हैं, न्यूट्रन अधिक तेजी से, जो प्रकाश की गति का लगभग ३ प्रतिशत भाग होती है, चलते हैं। ऐसी अवस्था में एक पीढ़ी दूसरी पीढ़ी का स्थान एक सेकंड के दस लाखवें हिस्से में ग्रहण कर लेती है।

सौभाग्यवश, सभी न्यूट्रनों का पुनरुत्पादन इतना तीव्र नहीं होता। कुछ विघटन विलम्बित न्यूट्रनों को जन्म देते हैं, जो सामान्यतः कुछ सेकंडों के विलम्ब से परित्यक्त होते हैं। एक सतत् रूप से कार्यरत प्रतिकारी में, प्रत्येक पीढ़ी में विगत पीढ़ी के बराबर ही न्यूट्रनों की संख्या होनी चाहिए। यदि प्रत्येक परवर्ती पीढ़ी में थोड़ी भी अधिक संख्या में न्यूट्रन होंगे, तो प्रतिकारी गर्म हो

उठेगा और एक सेकंड के एक छोटे भाग में ही उसका विस्फोट हो जा सकता है। सुरक्षित संचालन क्यों सम्भव है, इसका मुख्य कारण यह है कि तीव्र गुणन तभी सम्भव हो सकता है, जब विलम्बित न्यूट्रनों के न गिने जाने पर भी प्रत्येक पीढ़ी में न्यूट्रनों की संख्या बढ़ती जाये। एक किंचित् अतिसक्रिय प्रतिकारी को आसानी से सम्भाला जा सकता है, पर तब एक ऐसा स्थल उपस्थित होता है, जब प्रसुप्त खतरा सक्रिय हो उठता है। पर ऐसा तभी होता है, जब इतने अधिक न्यूट्रनों का उत्पादन हो जाये कि विलम्बित न्यूट्रनों की अपेक्षा न करने पर भी गुणन-कार्य चलता रहे। इस स्थल पर यदि खतरा नियंत्रित रहे, तो एक निर्दोष घटना ही घटेगी। उदाहरण के लिए, यह एक 'फ्युज' (Fuse) ही उड़ा देगा। परन्तु खतरा यदि भयंकर हुआ, तो वह रेडियो-सक्रिय आग उगलने लगेगा।

यह भविष्यवाणी करना सरल नहीं है कि यह संकट सदा नियन्त्रित ही रहेगा। पर सावधानीपूर्ण विश्लेषण के बाद ऐसी भविष्यवाणी की भी जा सकती है। उदाहरणस्वरूप, इस बात का अवश्य ही ध्यान रखा जाना चाहिए कि प्रतिकारी स्थायी है या नहीं। यदि गर्मी बढ़ती है, तो क्या प्रतिकारी की गति इतनी तीव्र हो जाती है कि उसकी गर्मी की दर बढ़ जाती है और वह विस्फोट की स्थिति में आ जाता है? एक स्थायी प्रतिकारी में अतिरिक्त गर्मी को शक्ति-उत्पादन रोकने की प्रवृत्ति दिखानी चाहिए; इस प्रकार प्रतिकारी ठंडा होकर सामान्य संचालन-जन्य ऊष्मा की अवस्था में आ जाता है।

परन्तु बहुत अधिक स्थायित्व भी खतरनाक हो सकता है। ऐसे प्रतिकारी में शीतलता लानेवाला यंत्र गर्मी को बिल्कुल ही खत्म कर दे सकता है; प्रतिकारी के बहुत ठंडा हो जाने के बाद गर्मी लाने की प्रक्रिया बहुत तीव्र हो जा सकती है और पुनः विस्फोट-स्थिति उत्पन्न हो सकती है। अतः हमें न केवल साधारण गति-वृद्धि के, बल्कि तरंग-वृद्धि के प्रति भी सजग रहना चाहिए।

अनेक प्रतिकारियों में असामान्य रासायनिक मिश्रण व्यवहार में लाये जाते हैं। एक प्रतिकारी-दुर्घटना का आरम्भ, असामान्य परिस्थितियों के अन्तर्गत असामान्य मिश्रणों के बीच की एक साधारण रासायनिक प्रतिक्रिया-मात्र से हो सकता है। परन्तु यदि यह रासायनिक प्रतिक्रिया प्रतिकारी को इस तरह विनष्ट कर दे कि कुछ विघटनोत्पादन बाहर निकल भागें, तो ऐसी रासायनिक दुर्घटना एक न्यैष्ठिक दुर्घटना की तरह बुरी हो सकती है

प्रतिकारी के अन्तःभाग में पदार्थों का असाधारण रूप से दृढ़ विकिरण से सम्पर्क होता है। इस प्रभाव के फलस्वरूप कुछ पदार्थ अपने रासायनिक तत्व इस तरह परिवर्तित कर सकते हैं कि जो पदार्थ पहले निर्माण-कार्य के योग्य पदार्थ के सदृश निश्चल था, वह प्रतिकारी के संचालन-काल में खतरनाक बन जाये।

शायद सर्वाधिक महत्वपूर्ण अकेला विषय है, यांत्रिक नियंत्रणों की व्यवस्था। प्रतिकारी का संतुलन न्यूट्रनों को ग्रहण करनेवाले एक पदार्थ की बनी चादरों या छड़ों की प्रणाली से ठीक किया जाता है। इस व्यवस्था की रचना इस तरह होनी चाहिए कि नियंत्रक छड़ें केवल बहुत धीमी गति से वापस ली जा सकें। परन्तु ऐसी व्यवस्था अवश्य होनी चाहिए कि उन्हें पुनः पूरी तीव्रता के साथ उनके पूर्वस्थान पर रखा जा सके। खतरे का कोई भी संकेत संग्राहकों (Absorbers) को अधिकतम गति से भीतर ढकेले, ऐसी व्यवस्था अनिवार्य है। इसे तांत्रिक भाषा में 'स्क्रैम' (Scram) कह कर पुकारा जाता है।

मुख्य बात यह है कि सभी खतरों और सुरक्षामूलक उपकरणों का अध्ययन किया जा सकता है और सावधानीपूर्ण अध्ययन के उपरान्त न्यैष्टिक दुर्घटना से बचा जा सकता है। कुछ प्रतिकारी तो अब इतनी अच्छी तरह समझे जाने लगे हैं कि उनका उपयोग भावी न्यैष्टिक इंजीनियरों के प्रशिक्षण के लिए सुरक्षापूर्वक किया जा सकता है। अन्य प्रतिकारियों का, जो अधिक शक्तिशाली हैं या जिनका अध्ययन कम किया गया है, उपयोग सावधानीपूर्वक करना पड़ता है। कुछ प्रतिकारी गैस-बन्द डब्बों में रखे जाने चाहिए और वे रखे भी जा रहे हैं। ऐसी अवस्था में यदि विस्फोट होगा, तो भी विघटनोत्पादन क्षतिहीन रूप से डब्बे के अन्दर तक ही सीमित रहेंगे। हाँ, इस बात का अवश्य ही निश्चय कर लिया जाना चाहिए कि प्रतिकारी उस किस्म का नहीं है कि विस्फोट की अवस्था में डब्बा ही फट जाये। इससे भी महत्वपूर्ण बात यह है कि जब तक प्रतिकारी बन्द और पूर्णतः निरापद न रहे, डब्बा बराबर बन्द रखा जाना चाहिए। वैसे तो सबसे अच्छी बात बहुधा यही हो सकती है कि प्रतिकारी का भूगर्भ में निर्माण किया जाये।

निस्सन्देह, एक प्रतिकारी की सुरक्षात्मक अवस्था काफी हद तक इस बात पर निर्भर करती है कि उसका उपयोग किस प्रकार हो रहा है। सामान्यतः एक शक्ति-केन्द्र (Power station) द्वारा, एक गतिशील शक्ति-स्रोत की अपेक्षा, कम गड़बड़ी पैदा किये जाने की सम्भावना है। यह सम्भव नहीं है कि न्यैष्टिक

रेलगाड़ी के एन्जिन कभी निरापद होंगे। न्यैष्टिक जहाजों में अधिक स्थान प्राप्त होता है और अधिक स्थान में अधिक सुरक्षात्मक कार्रवाइयाँ की जा सकती हैं। पर इतने पर भी जहाजों के न्यैष्टिक मोटरों की सुरक्षा पर विशेष सावधानी के साथ ध्यान देना पड़ेगा, क्योंकि जहाजों की दुर्घटनाएँ बन्दरगाहों में ही होंगी।

प्रगति की नितान्त आवश्यकता और सुरक्षा की सम्पूर्ण आवश्यकता के बीच संतुलन का ध्यान रखना कठिन है और अत्यधिक सतर्कता बरतने की भूल सहज ही सम्भव है। जब प्रतिकारी-सुरक्षा-समिति लाँग आइलैंड द्वीप पर ब्रुक हेवन प्रतिकारी के भूकम्प-विषयक खतरे पर विचार कर रही थी, तब सम्भवतः ऐसी ही अनावश्यक सतर्कता का प्रयोग किया गया था। एक भूकम्प-विशेषज्ञ से, जो ईसाई पादरी हैं, कहा गया कि वे समिति[1] को लांग आइलैंड द्वीप पर भूकम्प की सम्भावनाओं के बारे में बतायें। समिति के अध्यक्ष[2] ने उस विशेषज्ञ से काफी लम्बे और विस्तृत प्रश्न किये। आधे घंटे के बाद प्रतिकारी-सुरक्षा-समिति के पास पूछने के लिए कोई प्रश्न नहीं रह गया, परन्तु पादरी महाशय उत्तर देते अब भी नहीं थके थे। प्रश्नोत्तर समाप्त होने पर उन्होंने अध्यक्ष की ओर निर्निमेष दृष्टि से ताकते हुए पहले की अपेक्षा अधिक अधिकारपूर्ण वाणी में कहा – "अध्यक्ष महाशय, मैं अत्यन्त अधिकारी रूप से आपको यह विश्वास दिला सकता हूँ कि आगामी ५० वर्षों तक लांग आइलैंड में कोई बड़ा भूकम्प नहीं होगा।"

अध्याय १८

न्यैष्टिक प्रतिकारियों के उप-उत्पादन

न्यैष्टिक प्रतिकारी न्यैष्टिक विघटन की सहायता से शक्ति का उत्पादन करते हैं। जितनी बार विघटन होता है, उतनी बार रेडियो-सक्रिय उप-उत्पादनों का जन्म होता है। प्रतिकारी से विघटनोत्पादनों के अनियंत्रित पलायन को रोकना सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। यह सौभाग्य की ही बात है कि यदि यंत्र का निर्माण और संचालन पर्याप्त सावधानी से हो, तो खतरनाक उत्पादनों को प्रतिकारी में ही अवरुद्ध किया जा सकता है।

---

१. इसके मित्र इसे 'प्रतिकारी-निषेध-समिति' के नाम से पुकारते हैं

२. लेखकों में से एक

परन्तु अंत में, ज्वलित या अर्द्धज्वलित यूरेनियम-विद्युत्-परिमाण को प्रतिकारी से हटाना ही पड़ेगा और नया विद्युत्-परिमाण तथा ईंधन उसमें भरना पड़ेगा। इस समय विघटनोत्पादनों का क्या होगा ?

एक प्रतिकारी के विलम्बित संचालन के दर्म्यान अधिकांश अल्पजीवी विघटनोत्पादन क्षयमान होते हैं। जिनका जीवन दीर्घ होता है, वे एकत्र होते हैं। प्रतिकारी का अतिरिक्त उत्पादन अत्यधिक रेडियो-सक्रिय होता है और वह कई वर्षों तक रेडियो-सक्रिय रहता है। अतः इस रेडियो-सक्रिय अप्रयोजनीय वस्तु को असावधानीपूर्वक फेंक कदापि नहीं देना चाहिए। इसे उचित सुरक्षा के साथ जमा करने के अनेक तरीके हैं।

रेडियो-सक्रिय पदार्थ को सुदृढ़ रूप से निर्मित भूगर्भीय टंकियों में जमा किया जा सकता है। सक्रियता को केन्द्रित भी किया जा सकता है और उसे कंक्रीट के घेरों में बंद कर समुद्र के गर्भ में पहुँचाया जा सकता है। यदि इस बारे में बहुत ही अधिक चिन्ता हो, तो रेडियो-सक्रियता को राकेटों में भर कर बाह्य दिक् में भेज दिया जा सकता है, ताकि वहाँ वह बिना को नुकसान पहुँचाये क्षयमान होता रहे। किन्तु ये प्रणालियाँ खर्चीली हैं और इनसे न्यैष्टिक शक्ति का खर्च बढ़ जायेगा।

कहीं अच्छा हो, यदि हम रेडियो-सक्रिय उप-उत्पादनों को लाभप्रद और सुरक्षित कार्यों में प्रयुक्त करने का कोई उपाय पा लें। कुछ उप-उत्पादनों का प्रयोग किया जा सकता है और किया भी गया है। इन प्रयोगों से सम्बन्धित कुछ खतरे हैं। साथ ही, विघटनोत्पादनों का केवल एक छोटा भाग ही अब तक उपयोगी सिद्ध हुआ है। परन्तु विघटनोत्पादनों का महत्व बढ़ता जा रहा है।

हम उनका उपयोग अनुसंधानों में कर रहे हैं। एक रेडियो-सक्रिय आइसोटोप सभी रासायनिक प्रतिक्रियाओं और सभी वैसी दुरूह प्रक्रियाओं में, जिनमें पदार्थ एक जीवन्त शरीर के अन्दर अपना स्वरूप परिवर्तित करता है, अपने अक्रिय भाई के आचरण का अनुकरण करता है। साथ ही, एक रेडियो-सक्रिय तत्व का बड़ी आसानी से पता लगाया जा सकता है। इसे एक ऐसे जमाव में भी पाया जा सकता है, जो एक सुरक्षित विकिरण-मात्रा के दस लाखवें भाग से भी छोटा हो। प्राणियों की शरीर-रचना-सम्बन्धी खोज में जो कार्य सूक्ष्मवीक्षण-यंत्र ने किया है, वही कार्य जीवन्त पदार्थ की रासायनिक कार्य-प्रणाली को समझने में रेडियो-सक्रिय तत्व करेंगे।

अधिक अच्छी तरह समझ लिये जाने पर रेडियो-सक्रिय उप-उत्पादन व्याधि-विश्लेषण के काम आ सकते हैं। क्ष-किरणों के चिकित्सा-विषयक उपयोग से जिस तरह विकिरण के कारण किंचित् क्षति पहुँचती है, उसी तरह रोगों की शीघ्र और सही पहचान के लिए इन उप-उत्पादनों के उपयोग से भी बहुत हल्की क्षति पहुँच सकती है, लेकिन वह बर्दाश्त के काबिल है।

रोगियों के, विशेष कर कैंसर से पीड़ित रोगियों के, इलाज में रोगग्रस्त तंतु का रेडियो-सक्रिय विनाश चीर-फाड़ के प्रयोग से कहीं अच्छा है। ऐसा रेडियो-सक्रिय उपचार नवीन है। इसमें सुधार की काफी गुंजायश है। इस कार्य के लिए रेडियो-सक्रिय तत्वों का उचित प्रयोग कहीं अधिक शक्तिशाली साधन बन सकता है और इसका प्रसार आज की अपेक्षा कहीं अधिक हो सकता है।

किन्तु इन सभी उपयोगों में विघटनोत्पादनों का केवल एक नगण्य भाग ही प्रयुक्त हो सकेगा। साथ ही, प्राणिविषयक दृष्टि से महत्वपूर्ण अधिकांश तत्व यूरेनियम के विघटन से पैदा नहीं होते। कई उपयोगी क्रियाएँ प्रतिकारियों में न्यूट्रन-ग्रहण से पैदा की जा सकती हैं। किन्तु यूरेनियम के खंडों में से केवल रेडियो-आयोडिन का ही अब तक शरीर में सीधा उपयोग होता है।

उद्योग का सम्बन्ध जीवन्त तंतु की अपेक्षा कम सूक्ष्मग्राही पदार्थों से है। इसलिए रेडियो-सक्रिय पदार्थों के बड़े परिमाणों का यहाँ उपयोग हो सकता है। और, वास्तव में, रेडियो-सक्रियता ने अनेक प्रकार के कार्य सम्पन्न किये हैं। क्ष-किरणों की भेदन-शक्ति का उपयोग एक आसान और स्वचालित ढंग से चादरों के मोटापे को नियंत्रित करने में हुआ है। सतह के सम्पर्क में आनेवाले लुआबदार या अन्य तरल पदार्थों की क्रिया के कारण होनेवाली सतह की जीर्णता को कम करने के लिए यांत्रिक रूप से जीर्ण या क्षय होने वाली सतहों को रेडियो-सक्रियता से सम्पन्न किया गया है।

इन तरीकों से उद्योग ने काफी बचत की है और यह बचत अरब डालर के आसपास पहुँच रही है। ज्यों-ज्यों लोग नये पदार्थों का उपयोग समझेंगे त्यों-त्यों इन बचतों में वृद्धि होगी। पर इन सब मामलों में यह निश्चय कर लेना महत्वपूर्ण है कि उपयोग के समय या उसके बाद सक्रियता किसी को क्षति नहीं पहुँचायेगी।

सम्भवतः सर्वाधिक परिमाण में रेडियो-सक्रियता की आवश्यकता खाद्यपदार्थों को कीटाणु-रहित और देर तक ताजा बनाये रखने के लिए होगी। सक्रियताओं को ऐसे छड़ों से सम्बद्ध किया जा सकता है, जो पदार्थों को सुरक्षापूर्वक

कायम रखेंगे, परन्तु साथ-साथ भेदक गामा-किरणों के एक बड़े हिस्से को भी पलायन करने देंगे।

खाद्यपदार्थों का जीवाणु-शोधन करने का तात्पर्य है, सभी सूक्ष्म जीवाणुओं का विनाश। इनमें से कई विकिरण-प्रतिरोधी होते हैं और विनाश के लिए इनका सम्पर्क ५०,००० या इससे भी अधिक रोएंटजनों से कराना होगा जो एक स्तनधारी पशु को मारने के लिए आवश्यक परिमाण का सौ-गुना है।[1] इतना भारी विकिरण स्वयं खाद्यपदार्थों को ही प्रभावित करने लगता है। कुछ मामलों में तो विकिरण-द्वारा जीवाणु-शोधन खाद्यपदार्थ को इतना परिवर्तित कर देता है, जितना उबालने या जमाने से भी नहीं होता। दूसरे मामलों में विकिरण अन्य किसी भी प्रणाली से कम अनुचित प्रभाव पैदा करता है।

विकिरण के उपयोग का दूसरा तरीका है, कृषि-उत्पादनों की सुरक्षा। यह कार्य जीवाणु-शोधन की कठिन प्रणाली से करने की आवश्यता नहीं है। फसल के कीड़ों का नियंत्रण करना और सुरक्षित रखे जानेवाले बीजों को अँखुआने से बचाना ही पर्याप्त है। इस तरह, हमें यहाँ जीवाणु-शोधन की तुलना में लगभग एक प्रतिशत विकिरण की ही आवश्यकता होगी। इतने कम विकिरण से खाद्यान्न में परिलक्षित हो सकने-योग्य परिवर्तन नहीं होता। मुख्यतः ऐसी ही प्रणालियों में, जहाँ काफी बड़े परिमाण में पदार्थों की विकिरण-क्रिया करनी पड़ेगी, विघटनोत्पादनों के एक अच्छे भाग का उपयोग हो सकेगा।

सभी प्रयोगों में इस बात का ध्यान रखना पड़ेगा कि रेडियो-सक्रिय पदार्थ हानिप्रद रूप में छितरायें नहीं। जहाँ बड़े परिमाणों में इसका उपयोग होता है—जैसे खाद्यपदार्थों के जीवाणु-शोधन और सुरक्षण में—वहाँ दुगुनी सतर्कता बरती जानी चाहिए। हाउसटन, टेक्साज, की एक घटना से साबित हो चुका है कि इस मामले में जरा-सी असावधानी से विपत्ति उपस्थित हो सकती है। एक औद्योगिक संस्था वहाँ रेडियो-सक्रिय इरिडियम^{१९२} का, जो एक बीटा और

१. यह अन्तर आश्चर्यकारी नहीं है। जब हम जीवाणु-शोधन करते हैं, तब सभी जीवाणुओं को—विकिरण के सर्वाधिक प्रतिरोधी जीवाणुओं को भी—नष्ट कर देना पड़ता है। साथ ही, छोटे जीवाणु केवल संयोगवश ही, विकिरण के प्रभावों से बच जा सकते हैं। दूसरी ओर, एक बड़ी और जटिल जीव-रचना उस समय अपना काम करना बन्द कर देगी, जब उसके अनिवार्य तंतुओं में से सर्वाधिक सूक्ष्मग्राही तंतु विनष्ट हो जायेंगे।

एक गामा-किरण का परित्याग करता है, धातवीय टुकड़ों के एक्स-रे चित्र लेने के लिए उपयोग कर रही थी। एक बार छोटी-छोटी गोलियों के रूप में यह रेडियो-सक्रिय पदार्थ जहाज से मँगाया गया और जब इसे सुदूरस्थ नियंत्रण-यंत्र के द्वारा खोला जा रहा था, तब रक्षा-मूलक डब्बे में दबा हुआ गैस विस्फोटित हुआ और आसपास कुछ रेडियो-सक्रियता बिखर गयी। हालाँकि वह क्षेत्र आवरित था, फ़िर भी कुछ रेडियो-सक्रिय धूल इमारत के अन्य भागों में फैल गयी। जो दो व्यक्ति उस सुदूरस्थ नियंत्रण-यंत्र का संचालन कर रहे थे, वे सक्रियता से प्रभावित हो गये। उन्होंने अच्छी तरह स्नान किया और उस क्षेत्र की सफ़ाई की, लेकिन इस घटना के बारे में किसी को खबर नहीं दी।

कुछ सप्ताह बाद एक साधारण विकिरण-परीक्षण से यह प्रकट हुआ कि यंत्र तब भी रेडियो-सक्रिय था। कम्पनी के अधिकारियों ने चिन्तित होकर विशेषज्ञों को बुलवा भेजा। इस अन्तिम अवस्था में आकर यंत्र को पूर्णतः सक्रियताविहीन किया गया। उन दोनों व्यक्तियों के मकानों की भी जाँच की गयी और वे किंचित् रेडियो-सक्रिय पाये गये। उन व्यक्तियों और उनके परिवारों को वहाँ से अस्थायी रूप से हटाया गया, जब कि उनके मकानों की पूरी सफाई की गयी। जब वे लौटे, तब उनके मित्रों और पड़ोसियों ने उनसे किनारा कसना शुरू कर दिया। उनमें से एक के चार-वर्षीय पुत्र के तो खेल के सभी साथी छूट गये। लोग उनके मकानों में प्रवेश करने में भयभीत थे। दोनों में से एक मकान की बिक्री की घोषणा की गयी, पर कोई उसे खरीदने को भी तैयार नहीं हुआ।

यह तथ्य, कि उन मकानों का विकिरण-मापक यंत्रों से परीक्षण करने पर वे पूर्णतः निर्दोष पाये गये थे तथा इरिडियम ^{१९२} का अर्द्धजीवन केवल ७५ दिनों का होता है, अर्थात् कुछ ही काल बाद सक्रियता का पूर्णतः लोप हो जाता है, लोगों के भय को दूर करने में असमर्थ साबित हुआ।

यह सौभाग्य की ही बात है कि इस दुर्घटना में कोई भी व्यक्ति गम्भीर रूप से घायल नहीं हुआ। लेकिन इससे हम एक महत्वपूर्ण सबक ले सकते हैं—अज्ञानता रेडियो-सक्रियता से भी अधिक क्षतिकारक है। एक मकान, इस बात के बावजूद कि उसकी रेडियो-सक्रियता समाप्त हो चुकी है, अपना मूल्य खो सकता है; एक बालक का इस प्रकार तिरस्कार, मानो रेडियो-सक्रियता

प्लेग की तरह संक्रामक हो — मानवीय दुर्भाग्य के महानतम कारणों में से एक, अकारण भय से उत्पन्न कष्ट-भोग के उदाहरण हैं।

विघटनोत्पादनों की भावी महान्तम सम्भावनाएँ एक बिल्कुल अलग दिशा में निहित हो सकती हैं। रेडियो-सक्रियता परिवर्तन पैदा कर सकती है। किस सीमा तक यह एक खतरा है, इस पर पहले के एक अध्याय में हम विचार कर चुके हैं। एक ऐसे व्यक्ति के हाथों में, जो पशुओं और पौधों में परिवर्तन लाने की चेष्टा करता है, रेडियो-सक्रियता अत्यधिक उपयोगी साबित हो सकती है।

निस्संदेह यह सत्य है कि अधिकांश परिवर्तन हानिकारक होते हैं। यह भी सच है कि कई दशाब्दियों से कृत्रिम परिवर्तन पैदा किये जा रहे हैं। परन्तु अब अधिकाधिक लोगों के हाथों में सीधे-सादे और सस्ते औजारों का दिया जाना सम्भव है। इसलिए अनेक गलत परिवर्तनों में कुछ ऐसे निर्णायक परिवर्तन प्राप्त होने की सम्भावनाएँ बढ़ जायेंगी, जो सुधार की ओर आग्रह करेंगे।

क्या हम अनेक लोगों को खतरनाक पदार्थ देने की हिम्मत करेंगे? हमें इस बात का पूरी तरह इत्मीनान किये बिना, कि केवल योग्य और जिम्मेदार लोगों के हाथों में ही रेडियो-सक्रिय पदार्थ पहुँचेंगे, ऐसा नहीं करना चाहिए। ऐसी सावधानी रखी भी जा सकती है। दवा-विक्रेता विष की बिक्री बराबर करते रहे हैं। डाक्टरों तथा प्राणि-शास्त्रियों ने अपनी प्रयोगशालाओं में जीवाणुओं की संख्या में भयानक रूप से वृद्धि की है और ये सब कार्य निर्विघ्न रूप से किये जा रहे हैं तथा इनसे लोगों को बड़ा लाभ पहुँचा है।

रेडियो-सक्रियता का उपयोग और भी निरापद होना चाहिए, क्योंकि इस पदार्थ का आसानी से पता लगाया जा सकता है। यदि विष या जीवाणु खो जायें, तो उन्हें ढूँढ़ना मुश्किल हो सकता है; परन्तु रेडियो-सक्रिय पदार्थ अपनी उपस्थिति ठीक-ठीक बता देते हैं। यह सही है कि एक भूँसे के ढेर में सुई खोजना कभी आसान नहीं होता; परन्तु सुई यदि रेडियो-सक्रिय हो, तो उसे पाने की सम्भावना अधिक रहेगी।

रेडियो-सक्रिय उप-उत्पादन आज जिस रूप में दिखाई पड़ते हैं, उसी रूप में बने रहें, यह आवश्यक नहीं है। अभी तो ये एक गंदगी और खतरे के रूप में हैं, जिन्हें किसी-न-किसी प्रकार हटा कर छिपाना पड़ता है। परन्तु निकट भविष्य में ही हम रेडियो-सक्रियता को एक प्रयोजनीय वस्तु समझ कर सुरक्षित रखने के लिए कुछ खर्च भी करने को तैयार हो जायेंगे।

क्रिप्टन[८५] (अर्द्धजीवन १०·४ वर्ष)-जैसे कुछ गैसीय उप-उत्पादन वास्तविक कठिनाइयों और खर्च में वृद्धि करना जारी रख सकते हैं। वस्तुतः मुश्किल यह है कि क्रिप्टन-जैसा एक विशिष्ट गैस दृढ़ सूत्रों से किसी पदार्थ से बँधा नहीं रह सकता। दीर्घजीवी गैसों को पलायन करने देना उचित नहीं होगा। दूसरी ओर, निम्न तापमान या उच्चचाप में उनका जमाव काफी खर्चीला साबित हो सकता है।

हम न्यैष्टिक शक्ति के उप-उत्पादनों को सम्भालने की समस्या के बारे में विचार करते रहे हैं। यह समस्या तब तक अपने उचित अनुपात में प्रकट नहीं होगी, जब तक हम इस समय अपने व्यवहार में आनेवाली शक्ति के उप-उत्पादनों के बारे में भी विचार न करें।

धुआँ और धुआँसा हम पसन्द नहीं करते, यह स्पष्ट है। अधजली आग से उत्पन्न ये तत्व किस हद तक कैंसर के कारण बन सकते हैं, या अन्य क्षति पहुँचा सकते हैं, यह हम नहीं जानते। रसायन-विज्ञान विकिरण से भी अधिक वैचित्र्यपूर्ण है। रसायनों के धीमे प्राणिविषयक प्रभावों के बारे में हमारा ज्ञानाभाव विकिरण-सम्बन्धी हमारी शेष बची अनिश्चितताओं से कहीं ज्यादा है।

अधजली आग के उत्पादनों के कारण उपस्थित स्पष्ट परेशानी और चिन्ता के अतिरिक्त भी पूर्ण जलन के परिणाम से सम्बन्धित एक मनोरंजक प्रश्न शेष रह जाता है। भूतत्वीय युगों (Geologic Ages) में कोयला और तेल के रूप में जो कार्बन जमा हुआ था, उसका क्रमशः उपयोग किया जा रहा है और उसे एक रंगहीन, गंधहीन तथा क्षतिहीन गैस—कार्बन डायक्सायड (Carbon Dioxide) में परिवर्तित किया जा रहा है। हमारे वातावरण में सदैव ही कुछ कार्बन डायक्सायड रहता है। इसका परिमाण सामान्य हवा के दस लाख भाग में से ३०० भाग होता है। औद्योगिक क्रान्ति आरम्भ होने के बाद जितना कार्बन जलाया गया है, उससे वातावरण में कार्बन डायक्सायड की मात्रा में १० प्रतिशत वृद्धि हो सकती थी यानी हवा के १० लाख भाग में ३३० भाग इसका होता।

यह वृद्धि महत्वपूर्ण होती। कुछ प्रकार के विकिरणों के लिए कार्बन डायक्सायड एक कम्बल या एक ओर खुलनेवाले कपाट (वाल्व) का काम करता है। दिन में हम सूरज के दृश्य प्रकाश के रूप में शक्ति पाते हैं। इस प्रकार के विकिरण को कार्बन डायक्सायड गैस को भेदने में कठिनाई नहीं

होती। परन्तु आनेवाले विकिरण का संतुलन अदृश्य ताप-विकिरण ठीक करता है, जो दिन-रात पृथ्वी से दिक् की ओर जाता रहता है। यह इन्फ्रा-रेड विकिरण स्वभाव में प्रकाश की तरह ही होता है—केवल हमारी आँखें इसे नहीं देख सकतीं। अब कार्बन डायक्सायड गैस इस बाहर जानेवाले ताप-विकिरण के लिए, आंशिक रूप से प्रभावकारी मात्रा में ही सही, बाधा के रूप में काम करता है। यदि हमारे वातावरण में कार्बन डायक्सायड की मात्रा काफी बढ़ जाती, तो वह वनस्पतियों के रक्षार्थ विशेष रूप से निर्मित काँच के मकान की छत का काम करता और हमारा मौसम अधिक गर्म रहता।

वातावरण के कार्बन डायक्सायड की मात्रा में १० प्रतिशत वृद्धि तापमान में इतनी वृद्धि पैदा करती कि वह परिलक्षित हो सके। परन्तु तापमान में ऐसी वृद्धि नहीं देखी गयी है। इसका कारण यह है कि जलने की प्रक्रिया में अब तक जितना कार्बन डायक्सायड पैदा हुआ है, वह वस्तुतः हमारे वातावरण में रुका नहीं रहा है। इसमें से अधिकांश महासागरों के विशाल कोष में चला गया है। इसमें से कुछ सागर-तलों में चूने के रूप में जमा है। परन्तु वातावरण से सागर में कार्बन डायक्सायड के पहुँचने में कुछ समय की आवश्यकता होती है। अतः इस बात की आशा की जा सकती है कि वातावरण में कार्बन डायक्सायड की मात्रा में कम-से-कम थोड़ी वृद्धि होनी चाहिए। पैमाइशों से पता चलता है कि वस्तुस्थिति ऐसी ही है और यह वृद्धि दो प्रतिशत है, जो कि मौसम के परिवर्तन के लिए बहुत कम है।

परन्तु यदि हम ईंधन का उपयोग और बढ़ाते जायें, तो सम्भव है कि वातावरण में कार्बन डायक्सायड की मात्रा इतनी बढ़ जायेगी कि पृथ्वी का औसत तापमान कुछ डिग्री बढ़ जाये। यदि ऐसा हुआ, तो ध्रुवों पर स्थित बर्फ की चट्टानें पिघलेंगी और सागरों की सामान्य सतह ऊँची हो जायेगी। तब सम्भव है कि न्यूयार्क और सीट्ल (seattle)—जैसे तटवर्ती नगरों में पानी भर जाये।

इस प्रकार साधारण रासायनिक ईंधन का प्रयोग करनेवाली औद्योगिक क्रान्ति को, सम्पूर्ण पृथ्वी में सभ्यता के लाभ का विस्तार होने के पहले ही, समाप्त हो जाने के लिए बाध्य हो जाना पड़ेगा। परन्तु तब भी न्यैष्टिक ईंधन का प्रयोग करना सम्भव होगा। न्यैष्टिक ईंधन से औद्योगिक क्रान्ति जारी रह सकती है और मानव के लिए उसके असंख्य लाभ भूमंडल के कोने-कोने में

प्रसारित हो सकते हैं। न्यैष्टिक युग के उप-उत्पादन छोटे आकार के हैं और इसलिए हमारी कोयला या तेल की अर्थ-व्यवस्था के उप-उत्पादनों की अपेक्षा अधिक आसानी से संचालित किये जा सकते हैं। न्यैष्टिक शक्ति का मुख्य लाभ इस रूप में भी उपस्थित हो सकता है—"पर्याप्त सावधानी बरतने से, न्यैष्टिक शक्ति अभी शक्ति के उपलब्ध साधनों में सर्वाधिक परिष्कृत साबित हो सकती है।"

अध्याय १९

न्यैष्टिक युग

भविष्य का निर्णय जनता करती है और चूँकि जनता के बारे में कोई भविष्यवाणी नहीं की जा सकती, इसलिए भविष्य के बारे में भी कोई भविष्य-वाणी नहीं की जा सकती। फिर भी, मानवता की कुछ सामान्य अवस्थाएँ तंत्र-विद्या के विकास, मनुष्य-द्वारा प्रकृति पर प्राप्त नियंत्रण और प्राकृतिक साधनों की सीमाएँ-जैसी बातों पर निर्भर करती हैं। इन सब के बारे में तनिक अधिक विश्वास के साथ भविष्यवाणी की जा सकती है। भविष्य अज्ञात् है, परन्तु कुछ मामलों में इसकी सामान्य रूप-रेखा का अनुमान लगाया जा सकता है।

कुछ अनुमान महत्वपूर्ण हैं। वे हमारे वर्तमान दृष्टिकोण और वर्तमान कार्यों को प्रभावित करते हैं।

न्यैष्टिक युग अभी आरम्भ नहीं हुआ है। हमारे शक्ति-प्राप्ति के साधन अब तक न्यैष्टिक साधन नहीं हैं। सैनिक क्षेत्र में भी, जहाँ विकास-कार्य सर्वाधिक तेजी से हुआ है, सशस्त्र सेनाओं का ढाँचा न्यैष्टिक युग के तथ्यों के अनुसार यथार्थवादी ढंग से संतुलित नहीं हुआ है। राजनीतिक क्षेत्र में परमाणविक न्यष्टि ने एक आशा और आतंक के रूप में प्रवेश किया है—एक ऐसे तथ्य के रूप में नहीं, जिसके आधार पर हम निर्माण-कार्य कर सकते हैं और जिसके साथ हम आगे के बारे में कोई निश्चय कर सकते हैं।

पर कुछ तांत्रिक भविष्यवाणियाँ सुरक्षित दीखती हैं—

न्यैष्टिक शक्ति हमारे पुराने विद्युत्-यंत्रों को निकट भविष्य में बेकार नहीं बना देगी, बल्कि औद्योगिक क्रान्ति के संतुलन और प्रगति को भी बनाये रख सकेगी। हमारे लिए आवश्यक प्रचुर शक्ति साधारण खर्च से उत्पादित कर

सकना सम्भव होगा। साथ ही, एक महत्त्वपूर्ण बात यह है कि पृथ्वी के किसी भी भाग में यह शक्ति लगभग समान मूल्य में प्राप्त हो सकेगी। शक्ति की आवश्यकता जितनी अधिक होगी, उतनी ही जल्दी न्यैष्टिक प्रतिकारियों की सहायता से आवश्यकता को पूरा करना सम्भव होगा।

न्यैष्टिक शक्ति अत्यधिक सुदूरवर्ती और साधनहीन क्षेत्रों में भी उपलब्ध करायी जा सकती है। एंटार्कटिक-प्रदेश में भी इसका प्रयोग हो सकता है। समुद्र-तल में भी इससे काम लिया जा सकता है।

उद्योगीकरण के विस्तारशील मोर्चे को "वृद्धिशील सम्भावनाओं की क्रान्ति" कहा गया है। इस विस्तारशील मोर्चे की अशान्ति और तरंग में न्यैष्टिक शक्ति का समावेश अपरिहार्य है।

भूमंडल के लोगों के परस्पर-सम्बन्धों पर वैज्ञानिक और तांत्रिक आविष्कारों के प्रभावों के बारे में कुछ अधिक कहा जा सकता है। ज्यों-ज्यों आविष्कारों की संख्या बढ़ेगी, त्यों-त्यों कच्चे पदार्थों की आवश्यकता पहले की तरह तीव्र रह कर कम होती जायेगी। अधिकांश तत्वों की स्थान-पूर्ति करनेवाले तत्व पाये जा रहे हैं। इसके फलस्वरूप अधिक आर्थिक स्वतंत्रता प्राप्त करने में सहायता मिलेगी।

दूसरी ओर, नयी सम्भावनाएँ उपस्थित होंगी। हम हवा को नियंत्रित करना और सागरों में खेती करना सीखेंगे। और, इसके लिए लोगों में अधिक सहयोग और परस्पर-निर्भरता की आवश्यकता पड़ेगी।

रेडियो-सक्रिय उप-उत्पादनों के खतरे भी समान रूप से ही कार्यरत होंगे। एक प्रतिकारी-दुर्घटना से परिमुक्त रेडियो-सक्रिय मेघ एक न्यैष्टिक विस्फोट की अपेक्षा अधिक खतरनाक होगा। ऐसा मेघ किसी राष्ट्र की अपनी सीमा तक ही नहीं बँधा रहेगा। तब, किसी उचित प्रकार के अन्तर्राष्ट्रीय दायित्व का विकास करना पड़ेगा।

राष्ट्रों के सह-अस्तित्व पर न्यैष्टिक अस्त्रों के अस्तित्व का क्या प्रभाव पड़ेगा, यह प्रश्न, हमारे भविष्य को प्रभावित करनेवाले किसी भी अन्य प्रश्न की अपेक्षा कम समझा गया है तथा इसकी सम्भावनाओं की सबसे कम खोज भी हुई है। अधिकांश लोग इसे भयप्रद मान कर इससे दूर भागते हैं। इस प्रश्न पर शांत मस्तिष्क और कम भावुकता के साथ विचार करना आसान नहीं है।

कुछ भविष्यवाणियाँ चिन्ता का विषय होने पर भी बहुत ही सम्भावित हैं। न्यैष्टिक गोपनीयता बनी नहीं रहेगी। न्यैष्टिक अस्त्रों का ज्ञान राष्ट्रों के बीच, कम-से-कम जब तक स्वतंत्र राष्ट्रों का अस्तित्व रहेगा, तब तक प्रसारित होगा।

निषेध कार्यकारी नहीं होगा। वे कानून और समझौते, जिनका आरम्भ 'नहीं' से होता है, तोड़े जा सकते हैं और सदा तोड़े जायेंगे। आशा केवल उन्हीं समझौतों से की जा सकती है जो 'हाँ' से आरम्भ होते हैं। 'शांति के लिए परमाणु' के विचार ने इसीलिए सफलता प्राप्त की, कि ठोस कार्रवाई में इसे परिणत किया गया।

बड़ी शक्तियों के बीच एक सर्वमुखीन न्यैष्टिक युद्ध हो सकता है, पर हमें आशान्वित रहना चाहिए कि यदि हम मुकाबले के लिए तैयार रहेंगे, तो यह नहीं होगा। कोई भी स्वयं अपने देश के विनाश के लिए किसी को उत्तेजित करना नहीं चाहेगा।

परमाणविक बमों का प्रयोग नगरों के विरुद्ध हो सकता है। परन्तु नगरों को नष्ट करने से कोई सैनिक लाभ नहीं होगा। एक अल्पकालीन और अत्यधिक गतिमान युद्ध में न तो आपूर्ति और यातायात के केन्द्रों का महत्व होगा, न उत्पादन के साधनों का। यदि नगरों पर बम गिराये जायेंगे, तो केवल मनोवैज्ञानिक कारणों से। इस तरह के युद्ध के लिए हमें तैयार रहना चाहिए और हम तैयार हैं भी, पर केवल आक्रमण का मुकाबला करने की दृष्टि से। ऐसा विश्वास करने का उचित कारण है कि जब तक हम युद्ध के लिए तैयार रहेंगे, तब तक हमारे नागरिकों को न्यैष्टिक आक्रमण का खतरा नहीं रहेगा।

प्रतिकार के सम्बन्ध में निश्चयात्मकता सर्वमुखीन युद्ध के विरुद्ध वास्तविक सुरक्षा प्रदान करती है। पर ऐसे युद्धों के विरुद्ध जिनकी सीमा और उद्देश्य सीमित हैं, ऐसी कोई सुरक्षा नहीं रहती। मानवता के इतिहास में ऐसे युद्ध प्रायः ही हुए हैं। इस बात का कोई संकेत नहीं मिलता कि ये सीमित युद्ध समाप्त हो गये हैं। ऐसे युद्धों के लिए हमें प्रभावकारी और गतिशील टुकड़ियों के साथ तैयार रहना चाहिए, और इसके लिए आवश्यकता है, न्यैष्टिक आग्नेयास्त्रों के प्रयोग की।

न्यैष्टिक अस्त्रों का निश्चय ही ऐसे सीमित युद्धों पर बड़ा भारी प्रभाव होगा। इस सम्पूर्ण प्रभाव का अधिकाधिक विनाश की दिशा में प्रयोग करने की आवश्यकता नहीं होगी और न होनी चाहिए।

एक न्यैष्टिक युद्ध में बड़ी संख्या में मनुष्यों के भाग लेने की बात बेतुकी होगी। ऐसा कोई भी बड़ा जमाव परमाणविक अस्त्रों के लिए एक अच्छा लक्ष्य प्रमाणित होगा। युद्ध के लिए बड़े-बड़े, कीमती और स्पष्टतया दृश्य यंत्रों का प्रयोग भी मूर्खता ही होगी। ऐसे यंत्र न्यैष्टिक विस्फोटों-द्वारा उसी तरह पराजित होंगे, जिस तरह शस्त्रों से लैश योद्धा आग्नेयास्त्रों के द्वारा पराजित हुए।

एक न्यैष्टिक युद्ध में लड़ाकू टुकड़ी का छोटी, गतिशील, अदृश्य और स्वतंत्र कार्रवाई के योग्य होना आवश्यक है। ऐसी टुकड़ियाँ—चाहे वे समुद्र में हों, चाहे स्थल पर या हवा में—आपूर्ति के निश्चित तरीकों पर भरोसा नहीं कर सकतीं, न करेंगी। किसी क्षेत्र को हथियाने तथा बँधे-बँधाये एवं निश्चित मोर्चों पर लड़ने की न तो सम्भावना ही रहेगी और न आवश्यकता। यदि युद्ध सैनिक कारणों से और सैनिक लाभ के लिए होगा, तो उसमें छोटे और तीव्र स्थानीय संघर्ष होंगे, जिनमें चातुर्य तथा नवीनतम तरीकों का उपयोग होगा, न कि विशाल मानव-समुदायों का, जो दूसरों की हत्या करते हैं और जिनकी स्वयं ही हत्या होती है।

यदि कोई आक्रमणकारी अत्यधिक सैनिक विखंडीकरण की नीति अपनायेगा, तो परमाणविक अस्त्रों से उसे हराना असम्भव हो जायेगा। परन्तु एक अत्यधिक बिखरी हुई सेना दृढ़प्रतिज्ञ स्थानीय निवासियों-द्वारा पराजित की जा सकती है। इसलिए न्यैष्टिक अस्त्रों का मुख्य काम आक्रमणकारी सेना को बिखेर देना हो सकता है, ताकि अपने घरों की रक्षा करनेवाले उस देश के निवासियों का प्रतिरोध ही निर्णायक स्वरूप ग्रहण कर ले। न्यैष्टिक अस्त्र बड़ी सेनाओं के लिए एक अच्छा जवाब बन सकते हैं और सत्ता को उन्हीं लोगों के हाथों में वापस कर दे सकते हैं, जहाँ उसकी बुनियाद मानी जाती है, अर्थात् जनता के हाथों में।

इस स्थान पर पहुँच कर हम पुनः इस पुस्तक के मुख्य विषय, रेडियो-सक्रियता, पर आ गये। एक सीमित न्यैष्टिक युद्ध में रेडियो-सक्रिय विनाशकारी तत्व-वर्षा सम्भवतः अनेक निर्दोष लोगों के प्राण ले लेगी। हमने देखा है कि परीक्षण-कार्यक्रम जिस खतरे को जन्म देता है, वह उन अनेक खतरों की तुलना में, जिन्हें हम बिना किसी चिन्ता के ग्रहण करते हैं, बहुत छोटा होता है। पर एक न्यैष्टिक युद्ध में—चाहे वह बहुत ही सीमित क्यों न हो—परिस्थिति सम्भवतः बिल्कुल पृथक् होगी। युद्ध में न लड़नेवाले लोगों को भी क्षति पहुँचती है, यह कोई नयी बात नहीं है। पर एक न्यैष्टिक युद्ध में यह क्षति कहीं

अधिक बढ़ सकती है, क्योंकि रेडियो-सक्रिय विष मित्र और शत्रु, सैनिक और नागरिक, सबकी समान रूप से हत्या करता है।

सौभाग्यवश, इसका उपाय है। हमारे पहले के न्यैष्टिक विस्फोटकों में विघटन का प्रयोग हुआ है। विघटन-प्रक्रिया में काफी परिमाण में रेडियो-सक्रिय उत्पादनों की सृष्टि होती है। इनमें से कुछ तो बहुत ही विषैले होते हैं। अभी हाल में हमने यह जाना है कि किस तरह सन्धि-प्रक्रिया-द्वारा शक्ति पैदा की जा सकती है। सन्धि-प्रक्रिया में अपेक्षाकृत कम मात्रा में और कम खतरनाक रेडियो-सक्रियताएँ पैदा होती हैं। वास्तव में न्यूट्रन, जो सन्धि-प्रतिक्रिया का एक उप-उत्पादन हैं, लगभग सभी पदार्थों-द्वारा ग्रहण किये जा सकते हैं और वे पुनः विविध रेडियो-सक्रिय न्यष्टियाँ तैयार कर सकते हैं। परन्तु ऊष्म-न्यैष्टिक विस्फोट के पास केवल कुछ विशेष पदार्थ रखने से एक ऐसा अस्त्र प्राप्त किया जा सकता है, जिसमें रेडियो-सक्रियता हानिरहित हो। इस प्रकार परिष्कृत न्यैष्टिक विस्फोटों की सम्भावना हमारे सामने है।

परिष्कृत सुनियन्त्रित और आसानी से परिमुक्त किये जा सकने-योग्य सभी प्रकार के अस्त्र बमों को उस रूप में प्रयुक्त करना सम्भव बना देंगे, जिस रूप में हम उनका प्रयोग करना चाहते हैं, अर्थात् प्रतिरक्षा के साधनों के रूप में। किसी आक्रमणकारी को रोकते समय हम बड़े परिमाण में रेडियो-सक्रिय परमाणुओं को वहीं पर इस तरह स्वच्छंद नहीं छोड़ेंगे कि वही लोग मर जायें, जिनकी स्वतंत्रता की रक्षा हमारा अभीष्ट है। परिष्कृत न्यैष्टिक अस्त्र सुविधा-सहित बाँधे गये उच्च कोटि के अन्य विस्फोटकों की तरह ही होंगे—वे उनसे अधिक कुछ नहीं होंगे।

परिष्कृत विस्फोटों की सम्भावना एक अन्य विकास का मार्ग प्रशस्त करती है—शान्तिपूर्ण कार्यों में न्यैष्टिक विस्फोटकों का प्रयोग। परम्परागत उच्च विस्फोटकों का शांति-काल में भी उसी बहुतायत से प्रयोग किया गया है, जिस तरह युद्ध में। खानों को खोदने से लेकर बाँधों के निर्माण तक ऐसे अनेक महत्वपूर्ण कार्य हैं, जिन्हें 'डाइनामाइट' (Dynamite) ने पूरा किया है। न्यैष्टिक विस्फोटकों का उस रूप में व्यवहार नहीं हुआ है। इसका कारण है, रेडियो-सक्रियता का खतरा। जब हम एक बार परिष्कृत विस्फोटों की कला में पारंगत हो जायेंगे, तब इनका शांतिपूर्ण कार्यों में उपयोग आरम्भ होगा और प्राकृतिक शक्तियों को नियंत्रित करने की दिशा में एक कदम और उठाया जायेगा।

निश्चय ही, यह सब मनुष्य की बढ़ती हुई शक्ति और जिम्मेदारी का एक छोटा हिस्सा है। ज्यों-ज्यों कल का 'असम्भव' आज का 'सिद्ध तथ्य' बनता है, त्यों-त्यों हमें इस संकोचशील ग्रह पर अपने पड़ोसियों के बारे में अधिक जानकारी प्राप्त करनी होगी। शांति की कलाएँ जिस तरह फलदायक सहयोग की ओर हमें अग्रसर कर सकती हैं, उसी तरह गतिरोधपूर्ण हित-साधनों की ओर भी प्रेरित कर सकती हैं। यदि हम कभी संसार के मौसम को नियंत्रित करना जान लें, तो एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र के प्रति अपना सम्बन्ध उसी रूप में पायेगा, जिस रूप में एक ही नदी से सिंचाई के लिए पानी लेनेवाले दो किसान अपने को पाते हैं।

एक नदी पर नियंत्रण पाने के लिए झगड़नेवाले व्यक्ति प्रतिद्वन्द्वी होते हैं। जब इसी शब्द 'प्रतिद्वन्द्वी' का अर्थ, नदी या किसी अन्य साधन के सर्वोत्कृष्ट सामान्य उपयोगार्थ, सहयोग के रूप में निकलता है, तो कानून और व्यवस्था का काल आ जाता है। अवश्य ही यह स्थिति स्वर्गोपम जान पड़ती है और कोई इस सही मार्ग की ओर ध्यान नहीं देता। परन्तु जिस सामान्य दिशा में हमें बढ़ना चाहिए, वह यह है कि हम परमाणविक विस्फोटकों और रेडियो-सक्रियता को शैतान की सृष्टि नहीं मानें। इसके विपरीत, हमें प्रकृति के सभी फलाफलों और सम्भावनाओं का—भले ही ये सम्भावनाएँ आरम्भ में भयकारी लगें—अवश्य ही उद्घाटन करना चाहिए। अन्ततः एक अपेक्षाकृत अच्छे जीवन का यही मार्ग है। परमाणविक युग में यह बात असाधारण आशा-वादिता-जैसी लग सकती है, पर हमारा विश्वास है कि मानव-जाति सबल है और समय के अनुसार समझदार भी।

शब्दावली

सक्रियता (Activity)—'रेडियो-सक्रियता' का संक्षिप्त रूप। एक रेडियो-सक्रिय उपकरण की, प्रति सेकंड वियोजन में, मापी गयी शक्ति।

हवाई विस्फोट (Air burst)—इतनी ऊँचाई पर न्यैष्टिक विस्फोट कि अग्निगोला पृथ्वी की सतह को छू न पाये। हवाई विस्फोट से स्थानीय रूप में बहुत कम विनाशकारी तत्वों की वर्षा होती है।

अल्फा-किरण : कण (Alpha ray : particle)—भारी रेडियो-सक्रिय न्यष्टियों-द्वारा परित्यक्त शक्तिशाली, किन्तु अभेदक विकिरण। एक अल्फा-कण

में दो न्यूट्रन और दो प्रोटोन होते हैं। यह साधारण हेलियम-परमाणु की न्यष्टि के समान होता है।

परमाणु (Atom)—एक धनात्मक रूप से विद्युत्धारी न्यष्टि, जिसके चारों ओर ऋणात्मक रूप से विद्युत्धारी इलेक्ट्रन होते हैं।

परमाणविक बम (Atomic bomb)—एक विघटनात्मक बम।

परमाणविक मेघ (Atomic cloud)—वह मेघ, जो आघात-तरंग और ऊष्मीय विकिरण-द्वारा विस्फोट की शक्ति के ग्रहण किये जाने के बाद बच जाता है। इसमें घनीभूत जलवाष्प, मौलिक सामग्री (Ground material) और रेडियो-सक्रियता-सम्पन्न बम के अवशेष रहते हैं।

परमाणविक शक्ति (Atomic energy)—न्यैष्टिक प्रतिक्रियाओं में उत्पन्न शक्ति–यथा विघटन में। 'परमाणविक शक्ति' और 'न्यैष्टिक शक्ति' दोनों शब्द समानार्थी हैं, पर 'न्यैष्टिक शक्ति' अधिक उपयुक्त शब्द है।

परमाणविक प्रतिकारी (Atomic reactor)—न्यैष्टिक प्रतिकारी के सदृश।

पृष्ठमूलक विकिरण (Background radiation)—ब्रह्माण्डीय किरणों और पृथ्वी, वायुमंडल तथा हमारे शरीरों में निहित रेडियो-सक्रिय तत्वों के कारण होनेवाला प्राकृतिक विकिरण।

बीटा-किरण : कण (Beta ray : particle)—कतिपय रेडियो-सक्रिय न्यष्टियों-द्वारा परित्यक्त एक शक्तिशाली इलेक्ट्रन या पोजीट्रन। व्यवहारतः सभी विघटनोत्पादन बीटा (इलेक्ट्रन) का परित्याग करते हैं।

विस्फोट-तरंग (Blast wave)—आघात-तरंग के सदृश।

सेसियम^{१३७} (Cesium^{137})—एक रेडियो-सक्रिय विघटनोत्पादन। यह ३० वर्ष के अर्द्धजीवनवाली ५ लाख वाल्ट की बीटा-किरण और ७ लाख वाल्ट की गामा-किरण का परित्याग करता है। इसकी अवशिष्ट न्यष्टि स्थायी बेरियम^{१३७} होती है।

सम्बद्ध प्रतिक्रिया (Chain reaction)—विघटनों की आत्मनिर्वाहित शृंखला। एक न्यष्टि के विघटन से पैदा होनेवाले न्यूट्रन अन्य न्यष्टि में विघटन कराने के काम आते हैं।

क्रोमोसोम (Chromosome)—कोषों में पाया जानेवाला एक अनियमित आकार का पदार्थ। क्रोमोसोमों में ही जीन (Genes) होते हैं, जो वांशिक गुणों के लिए जिम्मेदार होते हैं।

परिष्कृत बम (Clean bomb)—एक न्यैष्टिक बम, जो ऊष्मा और विस्फोट तो पैदा करता है, पर रेडियो-सक्रियता अत्यल्प परिमाण में। ऐसे बम की सम्पूर्ण शक्ति सन्धि-प्रणाली से उद्भूत होती है।

कोबाल्ट^{60} (Cobalt^{60})—एक रेडियो-आइसोटोप, जो एक दुर्बल बीटा-किरण के परित्याग के साथ क्षयमान होकर निकेल^{60} में परिणत हो जाता है। इस क्षय का अर्द्धजीवन ५·३ वर्षों का होता है। निकेल^{60} अविलम्ब ही दो गामा-किरणों का परित्याग करता है, जिनकी कुल शक्ति २५ लाख इलेक्ट्रन-वाल्ट होती है।

कोबाल्ट-बम (Cobalt bomb)—एक रेडियो-धर्मी बम, जो काफी परिमाण में कोबाल्ट^{60} पैदा करता है।

नियंत्रण-दंड (Control rod)—न्यूट्रन को ग्रहण करनेवाली सामग्री से निर्मित दंड, जो एक न्यैष्टिक प्रतिकारी के शक्ति-स्तर को नियंत्रित करता है।

ब्रह्माण्डीय किरणें (Cosmic rays)—बाह्य दिक् के शक्तिशाली कण। वे पार्थिव वातावरण में न्यैष्टिक प्रतिक्रियाएँ पैदा कराते हैं और इस प्रकार पृष्ठ-मूलक विकिरण में योग देते हैं। यह ब्रह्मांडीय विकिरण समुद्री सतह की अपेक्षा अधिक ऊँचाइयों पर विशेष तीव्र होता है।

परिगणन-यंत्र (Counter)—एक यंत्र, जो न्यैष्टिक विकिरण का पता लगाता है।

निम्नतम राशि (Critical mass)—स्थायी सम्बद्ध प्रतिक्रिया के लिए आवश्यक विघटनात्मक पदार्थ का परिमाण। इससे कम परिमाण से प्रतिक्रिया रुक जाती है, क्योंकि अनेक न्यूट्रनों का लोप हो जाता है।

साइक्लोट्रन (Cyclotron)—एक यंत्र, जो विद्युत्धारी कणों को उच्च शक्ति की ओर अग्रसर करता है। शक्ति-सम्पन्न विद्युत्धारी कणों का उपयोग न्यैष्टिक प्रतिक्रियाओं के लिए हो सकता है।

अवशिष्ट न्यष्टि (Daughter nucleus)—एक रेडियो-आइसोटोप के क्षय के बाद शेष बची न्यष्टि।

क्षय (Decay)—एक स्वचालित क्रिया, जिसमें एक रेडियो-सक्रिय न्यष्टि एक अल्फा, बीटा या गामा-किरण का परित्याग करती है।

विलम्बित न्यूट्रन (Delayed neutrons)—वे न्यूट्रन, जिन्हें विघटनोत्पादन सेकंड के एक अंश से लेकर आधे मिनिट के बीच छोड़ते हैं। विघटन-क्रिया में मुक्त न्यूट्रनों की कुल संख्या का एक प्रतिशत से भी कम भाग

उनका होता है, पर प्रतिकारियों में नियंत्रण के काम में उनका बड़ा महत्व होता है।

ड्युटिरियम (Deuterium)—स्थायी उद्जन-आइसोटोप। इसकी न्यष्टि (जिसे ड्युटिरन कहते हैं) में एक प्रोटोन और एक न्यूट्रन होता है।

वियोजन (Disintegration)—क्षय के सदृश।

मात्रा (Dose)—विकिरण की एक मात्रा, जिसे साधारणतः रोएंटजनों में मापा जाता है।

$E = mc^2$—आइन्स्टीन की राशि (m) और शक्ति (E)-सम्बन्धी समीकरण। प्रकाश की गति (c) को इसमें अनुपातमूलक स्थिर संख्या के रूप में स्थान दिया गया है। यह समीकरण सिद्ध करता है कि राशि की एक पौंड मात्रा, शक्ति की १० मेगाटन मात्रा के बराबर है। विघटन-क्रिया में राशि के एक प्रतिशत का दसवाँ हिस्सा ही परिवर्तित होता है। इसलिए विघटन-द्वारा १० मेगाटन शक्ति पैदा करने के लिए एक हजार पौंड यूरेनियम की आवश्यकता होगी।

विद्युत्-चुम्बकीय विकिरण (Electromagnetic radiation)—इसमें रेडियो-तरंगें, दृश्य, इन्फ्रा-रेड और अल्ट्रा-वायलेट तरंगें होती हैं; साथ ही, क्ष-किरणें और गामा-किरणें भी। अन्तिम दो, विकिरण के शक्तिशाली और भेदक स्वरूप होते हैं।

इलेक्ट्रन (Electron)—एक कण, जिसमें एक इकाई ऋणात्मक विद्युत् होता है और जिसका वजन सूक्ष्मतम परमाणु (उद्जन) के वजन का १८४०-वाँ हिस्सा होता है।

इलेक्ट्रन-संयुक्तीकरण (Electron capture)—वह क्रिया, जिसमें एक परमाणविक इलेक्ट्रन न्यष्टि में किसी प्रोटोन से मिल कर न्यूट्रन तथा एक न्यूट्रिनो को जन्म देता है।

इलेक्ट्रन-वाल्ट (Electron volt)—एक इलेक्ट्रन-द्वारा गृहीत शक्ति का परिमाण, जो विद्युत् के एक वाल्ट से होकर गुजरता है। सामान्यतः एक परमाणु से एक इलेक्ट्रन को निकाल बाहर करने के लिए केवल कुछ इलेक्ट्रन-वाल्ट शक्ति की आवश्यकता पड़ती है। रेडियो-सक्रिय न्यष्टियों से निष्कासित कणों में कुछ लाख और कुछ करोड़ के बीच इलेक्ट्रन-वाल्ट होते हैं।

तत्व (Element)—कुछ ऐसे परमाणुओं का समूह, जिनकी न्यष्टियों में समान परिमाण में विद्युत् होता है। एक तत्व में कई आइसोटोप हो सकते हैं।

सम्पन्न पदार्थ (Enriched material)— वह यूरेनियम, जिसमें प्राकृतिक कच्ची धातु में पाये जानेवाले २३५-आइसोटोपों का अधिक भाग होता है।

उत्तेजनावस्था (Excited state)—एक परमाणु, अणु या न्यष्टि की वह अवस्था, जब उसमें शक्ति का आधिक्य हो जाता है। शीघ्रातिशीघ्र यह अतिरिक्त शक्ति मुक्त हो जाती है और प्रणाली अपनी मौलिक अवस्था में आ जाती है।

विनाशकारी तत्व-वर्षा (Fall out)—एक परमाणविक विस्फोट से उत्पन्न रेडियो-सक्रिय कण। वे परमाणविक मेघ के सहारे विस्फोट-सम्मुखीन भूमि से काफी दूर तक जा सकते हैं और फिर वर्षा के जरिये पृथ्वी-तल पर आ सकते हैं।

अग्निगोला (Fireball)–गर्म हवा और बम-सामग्रियों का लपटदार गोला, जो आघात-तरंग के निष्कासन के साथ-साथ विस्तृत और ठंडा होता जाता है।

विघटन (Fission)—एक भारी न्यष्टि का दो या अधिक हिस्सों में विभाजन। इस क्रिया में काफी परिमाण में शक्ति और कुछ स्वतंत्र न्यूट्रन बिखरते हैं।

विघटनात्मक पदार्थ (Fissionable material)—वे आइसोटोप, जो मंद न्यूट्रनों की वर्षा के कारण विघटित होते हैं; यूरेनियम^{२३५} और प्लुटोनियम^{२३९}।

विघटनोत्पादन (Fission products)—विघटन से उत्पन्न टुकड़े और उनके अवशेष, जिनमें विभिन्न प्रकार की सैकड़ों रेडियो-सक्रिय वस्तुएँ शामिल हैं। इन्हीं में स्ट्रानटियम^{९०} और सेसियम^{१३७} भी हैं।

सन्धि (Fusion)—शक्ति के उद्घाटन के साथ हल्की न्यष्टियों का भारी न्यष्टियों से संयोग। उदाहरणस्वरूप, ड्युटेरन + ट्राइटन → अल्फा + न्यूट्रन। इस क्रिया में लगभग १८० लाख इलेक्ट्रन-वाल्ट उन्मुक्त होते हैं।

गामा-किरण (Gamma ray)—शक्तिशाली और भेदक विद्युत्-चुम्बकीय विकिरण, जिसका निष्कासन, प्रायः बीटा के निष्कासन के बाद, कतिपय रेडियो-सक्रिय न्यष्टियाँ करती हैं।

जीनें (Genes)—क्रोमोसोम के हिस्से। ये वे बड़े अणु हैं, जो वांशिकता के लिए जिम्मेदार होते हैं।

मौलिक अवस्था (Ground state)—निम्नतम शक्ति और परमाणुओं, अणुओं तथा न्यष्टियों के सर्वाधिक स्थायित्व की अवस्था।

विस्फोट-सम्मुखीन भूमि (Ground zero)—न्यैष्टिक विस्फोट के ठीक ऊपर या नीचे की पृथ्वी की सतह।

अर्द्धजीवन (Half-life)—समय का वह परिमाण, जो समरूप रेडियो-सक्रिय न्यष्टियों की बड़ी संख्या के अर्द्धांश भाग के वियोजन के लिए आवश्यक होता है।

भारी उद्जन (Heavy Hydrogen)—ड्युटिरियम के सदृश।

भारी जल (Heavy water)—भारी उद्जन-सहित जल, जो साधारण उद्जन की स्थान-पूर्ति करता है।

उद्जन-बम (Hydrogen bomb)—एक उच्च शक्ति-सम्पन्न ऊष्म-न्यैष्टिक बम।

आयोडिन^{१३१} (Iodine^{131})—एक रेडियो-सक्रिय विघटनोत्पादन, जिसका अर्द्धजीवन आठ दिनों का होता है। यह औसत २ लाख इलेक्ट्रन-वाल्ट की शक्तिवाला इलेक्ट्रन और ४ लाख इलेक्ट्रन-वाल्ट की शक्तिवाली गामा-किरण बिखेरता है।

आयन (Ion)—एक विद्युतीकृत परमाणु या अणु। जब शक्तिशाली विद्युत्धारी कण पदार्थ से होकर गुजरते हैं, तब काफी संख्या में आयन पैदा होते हैं।

आयनीकरण (Ionization)—निष्पक्ष परमाणुओं या अणुओं से इलेक्ट्रनों को अलग करने की क्रिया। न्यूट्रन, गामा-किरणों तथा शक्तिशाली विद्युत्धारी कण आयनीकरण पैदा करने में बड़े प्रभावकारी हैं।

इरिडियम^{१९२} (Iridium^{192})—७५-दिवसीय रेडियो-आइसोटोप। यह औसत २ लाख वाल्ट शक्ति के इलेक्ट्रन और ३ लाख वाल्ट की गामा-किरण बिखेरता है।

आइसोटोप (Isotopes)—वे परमाणु, जिनकी न्यष्टियों में प्रोटोन तो उसी संख्या में रहते हैं, पर न्यूट्रनों की संख्या भिन्न होती है। ऐसे परमाणुओं का समान रासायनिक आचरण होता है।

किलोटन (Kiloton)—एक हजार टन टी-एन-टी से पैदा होनेवाली शक्ति का परिमाण।

क्रिप्टन^{८५} (Krypton^{85})—एक रेडियो-सक्रिय विघटनोत्पादन। इसका अर्द्धजीवन दस वर्षों का होता है और यह औसत दो लाख वाल्ट शक्ति-वाला इलेक्ट्रन तथा पाँच लाख वाल्ट की गामा-किरण बिखेरता है।

ल्युकेमिया (Leukemia)—एक सामान्यतः प्राणघातक रोग, जिसमें रक्त के श्वेत कोष पहुत बड़ी संख्या में पैदा हो जाते हैं।

स्थानीय विनाशकारी तत्व-वर्षा (Local fallont)—एक न्यैष्टिक विस्फोट के आसपास के क्षेत्रों में रेडियो-सक्रिय तत्वों की वर्षा।

मेगाटन (Megaton)—दस लाख टन टी-एन-टी से पैदा होनेवाली शक्ति का परिमाण।

मेसन (Meson)—एक कण, जो वजन में इलेक्ट्रन और प्रोटोन का मध्यवर्ती होता है। वास्तव में, मेसन दो प्रकार के होते हैं—पी-आई और एम-यू। पी-आई मेसन वजन में इलेट्रन का २७६–गुना होता है और इसका सम्बन्ध उन शक्तियों से होता है, जो न्यष्टि को संयुक्त रखती हैं। एम-यू मेसन वजन में इलेक्ट्रन का २१२-गुना होता है और ब्रह्माण्डीय विकिरण में इसका बहुमूल्य योगदान होता है।

माइक्रोसेकंड (Microsecond)—एक सेकंड का दस लाखवाँ हिस्सा। प्रकाश को एक मील जाने में ५ माइक्रोसेकंड लगते हैं।

दस लाख वाल्ट-कण (Million volt particle)—दस लाख इलेक्ट्रन-वाल्ट के कण।

मंथरकारी पदार्थ (Moderator)—न्यैष्टिक प्रतिकारियों में न्यूट्रनों की गति को कम करने के लिए उपयोग में आनेवाला पदार्थ।

अणु (Molecule)—रासायनिक ढंग से संयुक्त हुए परमाणुओं का जमाव।

स्थित्यंतर (Mutation)—जीन-सम्बन्धी एक परिवर्तन, जो वंशज में प्रवेश करके वांशिकता के स्वरूपों को प्रभावित करता है। जीनों में यह परिवर्तन विकिरण तथा रासायनिक एवं ऊष्मीय तत्वों के कारण घटित हो सकता है।

न्यूट्रिनो (Neutrino)—एक भारहीन एवं विद्युत्हीन कण, जो बीटा-क्षय की प्रक्रिया में शक्ति को स्थानांतरित करता है।

न्यूट्रन (Neutron)—न्यष्टि का एक मौलिक हिस्सा : एक निष्पक्ष कण। एक न्यूट्रन का वजन प्रोटोन से थोड़ा अधिक होता है और उन्मुक्त होने पर एक प्रोटोन+एक इलेक्ट्रन और एक न्यूट्रिनी के रूप में क्षयमान होता है।

विशिष्ट गैस (Noble gases)—हेलियम, न्योन, आरगन, क्रिप्टन और क्षेनन। वे किसी भी तत्व से—स्वयं आपस में भी—रासायनिक रूप से संयुक्त नहीं होते।

न्यैष्टिक बम (Nuclear bomb)—एक बम, जो अपनी शक्ति न्यैष्टिक विघटन या सन्धि से प्राप्त करता है।

न्यैष्टिक प्रतिकारी (Nuclear reactor)—नियंत्रित सम्बद्ध प्रतिक्रिया कायम रखनेवाला एक यंत्र।

न्यष्टि (Nucleus)—एक परमाणु का केन्द्र, जिसमें न्यूट्रन और प्रोटोन होते हैं। इसका विद्युत् प्रोटोनों की संख्या के बराबर होता है और वजन प्रोटोनों तथा न्यूट्रनों की संख्या के बराबर।

आवर्त-प्रणाली (Periodic system)—वृद्धिशील परमाणविक विद्युत् के अनुसार क्रमित रासायनिक तत्व। समान रासायनिक गुणोंवाले तत्व आवर्तक रीति से पैदा होते हैं।

प्लुटोनियम (Plutonium)—विद्युत् ९४ से सम्पन्न एक तत्व, जो यूरेनियम^{२३८} में एक न्यूट्रन के संयोग और दो बीटा-परित्याग से उत्पन्न होता है। यूरेनियम^{२३५} की तरह प्लुटोनियम भी एक परमाणविक ईंधन के रूप में मूल्यवान है।

पोजीट्रन (Positron)—इलेक्ट्रन का धनात्मक भाग।

पोटाशियम^{४०} (Potassium)—एक प्राकृतिक रेडियो-सक्रिय आइसोटोप। इसका अर्द्धजीवन एक अरब वर्षों का होता है और यह बीटा तथा गामा-किरणों का परित्याग करता है।

प्रोटोन (Proton)—न्यष्टि का एक हिस्सा। इसमें एक इकाई धनात्मक विद्युत् होता है और इसका वजन न्यूट्रन से थोड़ा कम होता है।

विकिरण (Radiation)—शक्तिशाली विद्युत्धारी कण, न्यूट्रन और गामा किरणें, जो पदार्थ में आयनीकरण पैदा करती हैं। विकिरण न्यैष्टिक विस्फोटों से उत्पन्न होता है, पर प्राकृतिक रूप से ब्रह्माण्डीय किरणों तथा हमारे आसपास के रेडियो-सक्रिय तत्वों के क्षय से भी यह अस्तित्व में आता है।

रेडियो-सक्रियता (Radio activity)—स्वाभाविक न्यैष्टिक क्षय, जिससे अल्फा, बीटा और गामा-किरणें प्रकट होती हैं।

रेडियो-आइसोटोप (Radio isotope)—'रेडियो-सक्रिय आइसोटोप' का संक्षिप्त रूप।

रेडियोधर्मी बम (Radiological bomb)—रेडियो-सक्रिय विनाशकारी तत्व पैदा करने के लिए निर्मित एक बम।

रेडियम (Radium)—विद्युत् ८८ से सम्पन्न एक तत्व। मुख्य आइसोटोप का वजन २२६ होता है और यह १६२० वर्ष के अर्द्धजीवनवाला अल्फा-कण बिखेरता है।

क्षेत्र (Range)—पदार्थ में किसी शक्तिशाली विद्युत्धारी कण-द्वारा की गयी यात्रा की वह दूरी, जिसके आगे वह बढ़ नहीं सकता। प्रचुर विद्युत्धारी कण पदार्थ में एक सीध में यात्रा करते हैं, किन्तु इलेक्ट्रन प्रायः अपना मार्ग-परिवर्तन करते हैं। इस कारण इलेक्ट्रनों का क्षेत्र उनके द्वारा की गयी यात्रा की दूरी का आधा होता है।

प्रतिकारी (Reactor)—न्यैष्ठिक प्रतिकारी के सदृश।

रोएंटजन (Roentgen)—विकिरण की मात्रा का एक माप, जो कि अविकीर्ण पदार्थ के एक इकाई वजन में संगृहीत शक्ति के परिमाण के रूप में व्यक्त होता है। एक जीवंत तंतु की ४ लाख रोएंटजन की मात्रा तापमान को 1°c तक ऊँचा उठाने के लिए पर्याप्त होती है। एक मनुष्य में केवल ४०० रोएंटजन की मात्रा, पचास प्रतिशत मृत्यु का कारण बन सकती है।

आघात-तरंग (Shock wave)—विस्फोट के कारण उत्पन्न उच्च चाप का विस्तारशील अग्रभाग और प्रबल हवाएँ।

स्वाभाविक विघटन (Spontaneous fission)—प्राकृतिक विघटन, जो किसी न्यूट्रन से प्रेरित न हो। यूरेनियम^{२३८} में इस क्रिया का अर्द्धजीवन ८×१०^{१५} वर्ष होता है।

मौसमोत्तर-क्षेत्र (Stratosphere)—मौसम से प्रभावित होनेवाले क्षेत्र से ऊपर का हिस्सा। मौसमोत्तर-क्षेत्र की ऊँचाई अक्षांश और मौसम के अनुसार ३० से ५० हजार फुट तक होती है।

मौसमोत्तर-क्षेत्रीय विनाशकारी तत्व-वर्षा (Stratospheric fallout)—बड़े बमों के कारण होनेवाली विश्वव्यापी विनाशकारी तत्व-वर्षा, जिसके मेघ मौसमोत्तर-क्षेत्र में पहुँच जाते हैं। साधारण तौर पर मौसमोत्तर-क्षेत्र में रेडियो-सक्रियता १० वर्षों तक बनी रहती है और उसके बाद न्यूनाधिक समरूपता से पृथ्वी की सतह पर आ जाती है।

स्ट्रानटियम^{९०} (Strantium^{90})—एक रेडियो-सक्रिय विघटनोत्पादन। इसका अर्द्धजीवन २८ वर्षों का होता है। यह दो इलेक्ट्रन बिखेरता है, जो

दिनांक Date	उधारकर्ता की संख्या Borrower's No.	दिनांक Date	उधारकर्ता की संख्या Borrower's No.